Through Guide About 'RUDRA'....

सस्वर रुद्राभिषेक प्रयोग : एक मीमांसा

क्यों र आधारित,

आशुतोष भगवान् शंकर के रुद्रात्मक स्वरूप का प्रमाणिक उल्लेख...

चमत्कारिक वैदिक मन्त्रों पर निबन्धित,

कर्मकाण्ड जगत की पहली पुस्तक...

जिसके बिना आपका 'रुद्राभिषेक' सम्बन्धी ज्ञान अधूरा है !!!

सस्वर रुद्राभिषेक प्रयोग : एक मीमांसा

चमत्कारिक वैदिक मन्त्रों पर निबन्धित,

क्यों और कैसे पर आधारित, कर्मकाण्ड जगत् की

प्रथम पुस्तक

लेखक :

पं० [illegible] द्विवेदी
प्राच्यविद्या महोपाध्याय
ज्योतिष शिरोमणी,
एम. ए. संस्कृत (दर्शन)
रिसर्च स्कॉलर (ज्योतिष)
जोधपुर विश्वविद्यालय

पं० लेखराज द्विवेदी
एम.ए.बी एड. साहित्यरत्न
व्याख्याता संस्कृत
राजकीय महात्मा गांधी
उ० मा० विद्यालय,
(जोधपुर राज०)

प्राप्ति स्थान :

अज्ञात दर्शन कार्यालय
प्रथम 'बी' रोड,
गोल बिल्डिंग के पीछे, सरदारपुरा
जोधपुर (राज०) 342001 ☎ : 25123

※

प्रथम संस्करण :
2 अक्टूम्बर, 1982
प्रति 1000

※

© सर्वाधिकार लेखक के आधीन

※

गुरु दक्षिणा :
21 रुपये मात्र

※

मुद्रक :
हिमालय प्रिण्टर्स
कुम्हारिया कुंआ, खाण्डा फलसा
जोधपुर (राज०)

❋ दो पुष्प

पण्डित भोजराज द्विवेदी द्वारा लिखित **'सस्वर रुद्राभिषेक प्रयोग : एक मीमांसा'** पुस्तक देखने का अवसर मिला। भगवान् शङ्कर की पूजा सनातन धर्म के प्रारम्भ काल से ही होती चली आ रही है। शिव के साथ हो शक्ति-पूजा भी उतनी ही प्राचीन है। शिव व शक्ति एक दूसरे के पूरक हैं यदि यह कह दिया जाय तो अनुचित न होगा। भगवान् शङ्कर की आराधना उपासना और पूजन करने वालों की संख्या लाखों में है। हिमालय से लेकर रामेश्वरम् तक और सोमनाथ से लेकर वैद्यनाथ तक चारों दिशाओं में भगवान् शङ्कर की आराधना बहुत श्रद्धा से की जाती है। कुछ विद्वानों के मत से शङ्कर की पूजा अरबस्तान में भो होता थी और काबा का वह पत्थर जिसे मुसलमान भाई श्रद्धा से पूजते है, शोध के विद्यार्थियों की दृष्टि में मक्केश्वर महादेव हो है। मुझे अपने पूरे अफ्रीका के प्रवास में कई देशों में शिव के प्राचीन मन्दिरों के दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। परम्परा से पूजा करना यह बहुत उत्तम है किन्तु उसके रहस्य, विज्ञान और पद्धति को विश्लेषण पूर्वक जानना उससे भी अधिक श्रेष्ठ है। प्रस्तुत पुस्तक के विद्वान् लेखक ने विशद् विवेचन द्वारा भगवान् शङ्कर की पूजा-रहस्यों का उद्घाटन किया है। शङ्कर सम्बन्धी, मानव मस्तिष्क में उठने वाले प्रायः सभी प्रश्नों का समाधान, शास्त्रीय आधार पर देने का प्रयत्न किया गया है। ऐसे उपयोगी ज्ञानवर्धक प्रसादपरक ग्रन्थ के प्रकाशन के लिए मैं श्री द्विवेदीजी की भूरि-भूरि प्रशंसा करता हूं। सनातन धर्म जगत के लिए उनकी यह देन सदा ही स्मरणीय रहेगी। देश की आस्तिक जनता इस ग्रन्थ से अधिकाधिक लाभ प्राप्त करे ऐसी मेरी विनम्र अभिलाषा है।

भगवान् शङ्कर सबका कल्याण करें।

शुभेच्छु

स्वामी सत्यमित्रानन्द गिरि

(निवर्तमान शंकराचार्य)

* प्राक्कथन

ॐ नमः शिवाय शान्ताय शुद्धाय परमेष्ठिने
दिगम्बराय नित्याय, नमः शान्ताय तेजसे ।।

भारतवर्ष में रुद्राष्टाध्यायी के रूप में अनेकों रुद्रियाँ उपलब्ध है। उन सभी में रुद्र का विवेचन और उसका साङ्गोपाङ्ग वर्णन उपलब्ध नहीं हैं। रुद्राष्टाध्यायी क्या है? रुद्र का स्वरूप क्या है? इसके पूजन-क्रम का क्या भेद है? रुद्र पाठ के कितने प्रकार हैं? किस विधि से अभिषेक होना चाहिये? इन व अन्यान्य सभी उपयोगी विषयों के साथ रुद्राष्टाध्यायी का अभाव खटक रहा था। उसकी पूर्ति के सम्बन्ध में यह प्रथम चरण है। इसमें सस्वर रुद्राष्टाध्यायी का पाठ जो दिया गया है वह अन्यत्र दुर्लभ है। इसमें गणपति पूजन का भी साङ्गोपाङ्ग स्वरूप सार्थक प्रस्तुत किया गया है जो साधारणतः अप्राप्य है। इन सभी दृष्टियों से प्रस्तुत पुस्तक **"सस्वर रुद्राभिषेक प्रयोग : एक मीमांसा"** विद्वज्जनों के सम्मुख प्रस्तुत है।

आशा है विद्वान् व सज्जन इसका आदर करेंगे एवं अपने अमूल्य सुझाव हमें भेजते रहेंगे ताकि द्वितीय संस्करण में उसे समायोजित किया जा सके। इत्यलम् ।।

—लेखकगण

❊ मातृ–पितृ चरणकमलेभ्यो नमः ❊

❊ पू० पिताश्री जयनारायणजी वेदिया
❊ जन्म सं० १९५९
❊ स्वर्गारोहण सं० २०३३ भाद्र शु० १

❊ अखण्ड सौभाग्यवती मातुश्री
श्रीरामप्यारी
❊ जन्म सं० १९६४
❊ स्वर्गारोहण सं० २०२३ माघ पू०

❊ समर्पणम् ❊

श्रद्धेयौ पितरौ !

लालित-पालित सहज स्नेह से, पाठित-प्रेरित सरल नेह से,
प्राप्त-ज्ञान-सौरभ जो तुम से, उसे लुटाता विमल प्रेम से,
श्रद्धा से अवनत हूं फिर भी, तेरे ही सुमनों को लेकर,
करता श्री चरणों में अर्पण ....

—भोजराज द्विवेदी

सस्वर रुद्राभिषेक प्रयोग : एक मीमांसा

❋ अनुक्रमणिका ❋

	विषय	पृष्ठांक
अध्याय १		
१	रुद्रकौन ?	१
२	रुद्री के भेद	२
३	रुद्री का यौगिक मूल्यांकन	२
४	एकादश रुद्र के नाम	३
५	रुद्राभिषेक की महिमा	५
६	अष्टाध्यायों के नाम	६
७	रुद्राष्टाध्यायी की सारभूत मीसांसा	८
८	शिव संकल्प सूक्त	८
९	पुरुष सूक्त	९
१०	अप्रतिरथ सूक्त	१०
११	सूर्य सूक्त	१०
१२	नील सूक्त	१०
१३	महत् शिरोरूप	१२
१४	चमकाध्याय	१३
१५	शान्त्याध्याय	१३
१६	शतरुद्री	१४
१७	रुद्राभिषेक के प्रचलित भेद	१४
१८	रुपाख्य रुद्र	१६
१९	अभ्यास प्रश्न	१९
अध्याय २		
२०	रुद्रका वैदिक स्वरूप	२०
२१	रुद्र का शस्त्र	२१
२२	औषधाधिपति	२१
२३	रुद्र के मित्र व शत्रु	२२

	विषय	पृष्ठांक
२४	पाप व श्राप का नाशक देवता	२२
२५	परवर्ती रुद्र का स्वरूप	२४
२६	रुद्र और क्षीर	२७
२७	रुद्राभिषेक पुष्प को ही क्यों ?	३१
२८	अभ्यास प्रश्न	३५
अध्याय ३		
२९	रुद्राक्ष मीमांसा	३६
३०	रुद्राक्ष की उत्पत्ति	३६
३१	रुद्राक्ष की महिमा	३७
३२	रुद्राक्ष धारण फलम्	३८
३३	रुद्राक्ष का आधुनिक मूल्यांकन	४१
३४	रक्तचाप एवं हृदय रोग पर नियन्त्रण	४१
३५	असली व नकली रुद्राक्ष	४२
३६	सतर्कता के निर्देशन	४२
३७	असली रुद्राक्ष की पहिचान	४४
३८	भिन्न २ रुद्राक्षों के नाम व उपासना मंत्र	४७
३९	एक मुखी रुद्राक्ष	४८
४०	दो मुखी रुद्राक्ष	४९
४१	तीन मुखी रुद्राक्ष	४०
४२	चार मुखी रुद्राक्ष	५०
४३	पांच मुखी रुद्राक्ष	५०
३४	छः मुखी रुद्राक्ष	५१
४५	सात मुखी रुद्राक्ष	५१
४६	आठ मुखी रुद्राक्ष	५२
४७	नौ मुखी रुद्राक्ष	५२
४८	दश मुखी रुद्राक्ष	५३
४९	ग्यारह मुखी रुद्राक्ष	५३
५०	बारह मुखी रुद्राक्ष	५४
५१	तेरह मुखी रुद्राक्ष	५५
५२	चौदह मुखी रुद्राक्ष	५५
अध्याय ४		
५३	माला संस्कार विधान	५७
५४	माला संस्कार प्रयोग	५७

	विषय	पृष्ठांक
अध्याय ५		
५५	पूजन मीमांसा	६०
५६	पूजा विधान के भेद	६१
५७	पंचोपचार	६१
५८	दसोपचार	६१
५९	षोडशोपचार	६१
६०	राजोपचार	६२
६१	पूर्व पूजन निषेध	६२
६२	पूजन में वर्ज्य पदार्थ	६२
६३	घर में देव पूजन विचार	६३
६४	अतिप्रिय पुष्प	६४
६५	शिव पंचायतन	६४
६६	शिव पार्श्वका:	६५
६७	षोडशाङ्ग व दशाङ्ग धूप	६५
६८	अष्टगन्ध प्रकरण	६७
६९	पंचामृत	६८
७०	पंच रत्न	६८
७१	पंच पल्लव	६८
७२	पंच गव्य	६८
७३	पंच वर्ण	६९
७४	अभ्यास प्रश्न	७०
अध्याय ६		
७५	स्वर मीमांसा	७१
७६	स्वर परिचय	७२
७७	अनुदात्त	७२
७८	उदात्त	७३
७९	स्वरित	७३
८०	विसर्ग	७३
८१	अवग्रह	७४
८२	प्लुतस्वर	७४
८४	अनुस्वार	७४
८५	उच्चारण नियम	७५
८६	अभ्यास प्रश्न	७६

	विषय	पृष्ठांक
अध्याय ७		
८७	शिव-पूजन का शास्त्रोक्त क्रम	७७
८८	शिव पंचायत व पूजा प्रयोग	७८
८९	भद्रसूक्तम्	७८
९०	गुरुनमन	७९
९१	गणपति स्मरण	८०
९२	संकल्प	८१
९३	दिग्रक्षण	८२
९४	भैरव नमस्कार	८४
९५	वरुणावाहनम्	८४
९६	प्रतिष्ठापनम्	८५
९७	उदक स्पर्श (टिप्पणी)	८५
९७	कलश प्रार्थना	८६
९८	पवित्रिकरण	८६
९९	दीप पूजन	८७
१००	दीप प्रार्थना	८७
१०१	शंख पूजन	८८
१०२	शंख प्रार्थना	८८
१०३	घण्टा पूजनम्	८८
१०४	पुण्याह वाचन सूक्ष्म प्रयोग	८९
१०५	आचार्यादि ऋत्विग्वरण, पाद-प्रक्षालन तिलक, पूजन-क्रम टिप्पणी, मोली बांधना	९०
१०६	शिव पंचायत ध्यान सूर्य ध्यान	९१
१०७	गणपति ध्यान	९१
१०८	देवीध्यान	९२
१०९	शिव ध्यान	९२
११०	विष्णु ध्यान (पूजन क्रम बोधन टिप्पणी)	९२
१११	रुद्र पूजन पूर्वक	९३
११२	गणपति पूजनम्	९३
११३	आह्वान	९३
११४	प्रतिष्ठापन	९४
११५	आसन अर्पण	९४

	विषय	पृष्ठांक
११६	पाद्य	९५
११७	अर्घ्यदान अर्घ्य में वस्तु (टिप्पणी)	९५
११८	आचमनीय अर्पण	९६
११९	स्नानीय समर्पण	९६
१२०	पंचामृतस्नान	९७
१२१	पयः स्नान	९७
१२२	दधिस्नान	९८
१२३	घृत स्नान	९८
१२४	मधु स्नान	९९
१२५	शर्करा स्नान	९९
१२६	मांगलिक स्नान	१००
१२७	शुद्धोदक स्नान	१००
१२८	स्नानांग पूजा	१०१
१२९	गणपति अथर्वशीर्ष	१०२
१३०	उत्तर पूजा वस्त्र	१०४
१३१	उपवस्त्र	१०४
१३२	आचमनीय अर्पण	१०४
१३३	अलंकरण	१०५
१३४	यज्ञोपवीत	१०५
१३५	गन्ध	१०५
१३६	अक्षत	१०६
१३७	पुष्प	१०६
१३८	शमीपत्र	१०७
१३९	दुर्वांकुर	१०७
१४०	सिन्दूर	१०७
१४१	नाना परिमल	१०८
१४२	दशांग धूप	१०८
१४३	दीप दर्शन	१०९
१४४	नैवेद्य	१०९
१४५	करोद्वर्तन	११०
१४६	फलादि	१११
१४७	दक्षिणा	१११

	विषय	पृष्ठांक
१४८	नीराजन	११२
१४९	पुष्पांजलि	११२
१५०	विशेषार्घ्य	११४
१५१	प्रदक्षिणा	११४
१५२	गुप्त प्रार्थना	११५
१५३	विशेष टिप्पण	११५
१५४	रुद्राभिषेक प्रयोगः अथ विशिष्ट षडङ्गःन्याल	११७
१५५	विनियोग	११८
१५६	ऋष्यादि न्यास	११८
१५७	करन्यास	११८
१५८	ध्यान	११८
१५९	पूर्व पश्चिम उत्तर दक्षिण	११९
१६०	ऊर्ध्व मुख	१२०
१६१	शिवमानस पूजा	१२१
१६२	अधिकार क्रमः	१२१
१६३	शतरुद्रीय क्रम	१२१
१६४	नमक-चमक पाठे क्रम	१२१
१६५	पंचदेव स्मरण	१२३
१६६	रुद्रे प्रथमोऽध्यायः	१२४
१६७	द्वितीयोऽध्यायः	१२४
१६८	तृतीयोऽध्यायः	१२६
१६९	चतुर्थोऽध्यायः	१२८
१७०	पंचमोऽध्यायः	१३०
१७१	शतरुद्री क्रमे विशेषः	१३७
१७२	षष्ठोऽध्यायः	१३८
१७३	सप्तमोऽध्यायः	१३९
१७४	अष्ठमोऽध्यायः	१४४
१७५	रुद्रेस्वस्ति प्रार्थना मन्त्राऽध्यायः	१४६
१७६	नवग्रह मंत्राः	१४८
१७७	चतुर्वेदोक्त मंत्राः	१४९
१७८	चमत्कारिक महामृत्युञ्जय	१५०
१७९	वर्षा के लिए प्रयोग	१५२
१८०	कैंसर व हृदय-रोग की मुक्ति हेतु सफल प्रयोग	१५३
१८१	शल्य चिकित्सार्थ व भूत-प्रेत बाधा निवारणार्थ विशिष्ट प्रयोग	१५४

॥ श्रोः ॥

✲ मुखबन्ध

वैदिक धर्म देवोपासना प्रधान है। यास्क ने स्पष्ट कहा है "महाभाग्याद्देवताया एक एवात्मा बहुधा स्तूयते"—एक ही शक्ति वैविध्य से परिपूर्ण होने के कारण विविध नामों से पूजो जाती है। यास्क की इस मान्यता का आधार स्वयं ऋग्वेद के ऋषि की यह घोषणा है—"एक सद्विप्रा बहुधा वदन्ति" परिस्थितियों में परिवर्तन होने के साथ-साथ देवताओं की स्थिति में भो परिवर्तन होता है। जो देवता युग-विशेष में महत्त्वपूर्ण होता है वह युगान्तर में गौण हो जाता है और युग परिवर्तन के साथ गौण देवता मुख्य हो जाता है। रुद्र देवता की स्थिति कुछ ऐसी ही है। वैदिक काल में 'रुद्र' का उतना महत्त्वपूर्ण स्थान दृष्टिगोचर नहीं होता है जितना 'अग्नि' और 'इन्द्र' का, किन्तु पौराणिक काल में 'रुद्र' शिव के रूप में एक प्रमुख देवता हो गये जब कि 'अग्नि' को पहले जैसा महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त नहीं रहा। देवताओं की स्थिति के इस प्रकार के उतार-चढ़ाव होते रहने पर भी भारत में विभिन्न देवताओं के उपासकों में पूर्ण ताल-मेल बना रहा क्योंकि हम इस बात को कभी नहीं भूले कि यह सब देवता एक ही शक्ति के विभिन्न पक्ष का प्रतिनिधित्व करते हैं कोई भिन्न-भिन्न शक्तियां नहीं हैं। विभिन्नता में एकता कि इस दृष्टि ने, भारतीय संस्कृति को अमरता प्रदान की क्योंकि हम किसी भी नई धारणा को सहज ही पुरानी धारणा से जोड़कर आत्मसात् करते रहे जिसके फलस्वरूप हमारो संस्कृति की अविच्छिन्नता बनी रही। "यूनान-मिश्र, रोमाँ सब मिट गये जहां से, कुछ है कि अब तलक है बाकी निशां हमारा—इन पंक्तियों में कवि ने जिस विशेषता की ओर संकेत किया है वह विशेषता विविध मान्यताओं को आत्मसात् कर लेने की विशेषता ही है।

रुद्र की स्तुति में ऋग्वेद, अथर्ववेद तथा यजुर्वेद में अनेक मन्त्र हैं जिससे यह स्पष्ट हो जाता है कि रुद्र वैदिक देवता है। किन्तु इस सम्भावना से इन्कार नहीं किया जा सकता कि वैदिकेतर परम्परा में भी कई ऐसे देवता रहे हों जिनकी उपासना शिव के रूप में या उनके लिङ्ग के रूप में की जाती रही हो किन्तु हमारो संस्कृति के समन्वित रूप में आज शिव, रुद्र, लिङ्ग, पशुपति सब एकाकार हो चुके हैं।

विभिन्न परम्पराओं के सम्मिश्रितरूप होने के कारण शिव या रुद्र सम्पूर्ण भारतीय संस्कृति के प्रतीक बन गये हैं। वे स्वयं श्मशान में निवास करने वाले, भस्म लगाने वाले दिगम्बर फक्कड़ योगी हैं, किन्तु उपासकों को नवनिधि और अष्टसिद्धि प्रदान करते हैं। उन्होंने काम का दहन किया किन्तु वे अर्द्धनारीश्वर है। उन्हें यज्ञ भाग से वञ्चित किया गया किन्तु दैत्यों से देवों की रक्षा कर वे ही यज्ञ की रक्षा ही करते हैं। उनका सौम्य और उग्र दोनों रूप, वेद से लेकर परवर्ती साहित्य तक चला आता है। परस्पर विरोधी इन गुणों का अधिष्ठान देखकर ही शिव के सम्बन्ध में कालिदास ने घोषणा की थी—"**न विश्वमूर्तेरवधार्यते वपुः**"।

विशेष महत्त्व की बात यह है कि शिव बाह्य प्रवृत्ति में आपाततः प्रवृत्त होते हुये भी आन्तरिक रूप से परम निवृत्त है। उनके इसी आदर्श को काश्मीर शैवदर्शन ने एक विकसित रूप दिया, जिसके अन्तर्गत, संसार से पलायन करने की आवश्यकता न बतला कर संसार में रहते हुये मोक्ष प्राप्ति का उपाय बताया गया है। आज के युग में यही मार्ग समीचीन प्रतीत होता है। इसलिये शैवदर्शन को आज के संदर्भ में पुनः प्रचलित होना चाहिये।

इस दिशा में जो भी प्रयत्न होगा वह सम्पूर्ण मानव जाति के कल्याण का होगा। ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है। पं० भोजराज द्विवेदी का प्रस्तुत ग्रन्थ इस दिशा में एक बहुत छोटा किन्तु महत्त्वपूर्ण कदम है। आस्तिक जगत् में रुद्राभिषेक करवाने की प्रथा है। इसके माध्यम से हम जीवन के प्रति एक आशावादी दृष्टिकोण विकसित कर सकते हैं किन्तु यह तभी सम्भव है जब रुद्राभिषेक एक जड़ कर्मकाण्ड की प्रक्रिया न रहकर, जागृत चेतन-प्रक्रिया बने। प्रस्तुत पुस्तक में छः अध्यायों की एक लम्बी भूमिका के माध्यम से श्री द्विवेदी जी ने रुद्राभिषेक के मर्म को उद्घाटित करने का प्रयत्न किया है। मेरी कामना है कि भविष्य में वे इस प्रयत्न को और भी अधिक विस्तार दे सके ताकि कर्मकाण्ड ज्ञानपूर्वक होकर, ज्ञान व कर्म के बीच की खाई को भरने में सहायक हो सके।

डॉ० दयानन्द भार्गव

आचार्य एवं अध्यक्ष, संस्कृत विभाग,

जोधपुर विश्व विद्यालय, जोधपुर

पूजन-कक्ष में, विशिष्ट मुद्रा में, लेखक—पं० भोजराज द्विवेदी

अध्याय—१

रुद्र कौन ?

परमेश्वर परब्रह्म को ही महादेव रुद्ररूप में अर्चित करना रुद्र पाठ हैं। रुद्र शब्द का अर्थ **"रोदयति सर्वमन्तकाले इति रुद्रः"** से संहारकर्त्ता व प्रलयकाल में सब प्राणियों को रुलाने वाला माना है। **"रुतौ नादान्ते द्रवति"** नाद से परे प्रकट होने वाला चैतन्य प्रकाश रुद्र को ही माना है। **"रुत्यावेदरूपया धर्मादीनवलोकयतीति प्रापयतीति वा"** से वेदरूपी शब्द प्रमाण से धर्म का आधार या प्राप्ति साधन वेदात्मा परमेश्वर का स्वरुप रुद्र को ही माना है। **"रुत्या प्रणवरूपया स्वात्मानं प्रापयति"** से आत्मज्ञान प्राप्ति का अमोघ साधन प्रणव ओंकार को रुद्र माना है। **"सत्ये रोरूयमाणों द्रवति प्रविशति मर्त्यान्"** से सृष्टि के बाद प्राणियों के हृदय-देश में प्रवेश करने वाला महेश्वर ऐसा भी माना गया है। **"रुक्तेजः नित्ययोगरप्रत्ययः"** से तेजस्वी शक्ति प्रधान अर्थ भी होता है। **"रुद्र संसारदुःखं द्रावयति नाशयति"** से दुःख विनाशक आत्मज्ञान-स्वरुप अनुग्रहकर्त्ता सदाशिव या गुरु भी माना है एवं **"रुद् रोधिका बंधिका शक्तिः तद्वान् रुद्रः"** से सबको बांधने की शक्ति वाला निग्रहकर्ता ईश्वर 'रुद्र' ही माना गया। रु=अज्ञान अन्धकार को; द्रवति=चीरने वाला ही, रुद्र है ऐसा भी अर्थ है। इस तरह रुद्र शब्द के अनेक अर्थ है और इसी दृष्टि

से परमेश्वर के इस रूप की अनन्त महिमा के कारण रुद्र पाठ रुद्रजप, रुद्राभिषेक का विशेष महत्व सभी पुराणों, वेदों, उपनिषदों में वर्णित है। यही रुद्र, रुद्रैकादशिनी, रुद्री और रुद्र-जप इन तीनों नामों से व्यवहृत हैं।

रुद्री के भेद

रुद्री पाठ के अनेक प्रकार है। रुद्राभिषेक में रुपरुद्र के २ प्रकार है और रुद्राख्य (एकादशिनी रुद्र) के ३ प्रकार है। रुद्र (महादेव) के लिंग पर सुवर्ण, चांदी, तांबे, किंवा मिट्टी के कलश से, शहद, गाय के घी से, दूध से या भैंस के दूध से या इक्षुरस से या नालिकेर के रस से या आम के रस से या गन्धोदक या केवल जल से अभिषेक करने के विधान है। इसे स्वयं या ब्राह्मण द्वारा रुद्र-पूजन पूर्वक किया जाता है।

रुद्री का यौगिक मूल्यांकन

योग प्रकरण में यह एक यौगिक क्रिया भी है। जो अभिषेक के रुप में व्यवहृत है। हमारे शरीर की रीढ़ की हड्डी गुदा के भाग पर आकर लिंग की तरह खड़ी रहती है जिस पर शरीर का अर्धभाग अवलम्बित है। इस हड्डी के ढ़ाई आंटे खाकर सारी नाड़ियां प्रवाहित होती है और इस पर रक्त का निरन्तर अभिषेक होता रहता है यह प्रक्रिया शरीर में निरन्तर चलती है। इसी का बाह्य रुप रुद्राभिषेक है। यहो लिङ्ग, सर्प और ऊपर की जलाधारी है। कोई इसे समझकर योग द्वारा अमृत नाद प्राप्त कर शरीर

में कुण्ड़लनी लगाकर उस पर अमृत स्राव का आनन्द प्राप्त करें। यह दूसरा मन्तव्य भी है; ऐसा अनेक प्रख्यात विद्वानों का मत हैं।

एकादश रुद्र के नाम

रुद्र ११ है। इनके नाम निम्न है :—

(१) भव (२) रुद्र (३) शर्व
(४) पशुपति (५) नीलग्रीव (६) शितिकण्ठ
(७) कपर्दि (८) व्युप्तकेश (९) सहस्राक्ष
(१०) शतधन्वा (११) महादेव

इनमें भी विशेषकर अष्टाध्यायी व अष्ट नाम का पूजन तर्पण आदि उल्लिखित है। शिव के पंचवक्त्र है। ये क्रमशः पश्चिम, उत्तर, दक्षिण, पूर्व और उर्ध्व नाम से विख्यात है। अतः पंचवक्त्र पूजा का इसमें विशेष महत्व है।

आठ प्रकार के पुष्प, चढ़ा कर सुगन्ध, तिल-यव मिश्रित जल से अभिषेक के बाद आठ नामो से तर्पण का विधान भी है। वे नाम हैं—(१) भव (२) शर्व (३) ईशान (४) पशुपति (५) रुद्र (६) उग्र (७) भीम (८) महान्त

शिव का तृप्तिकारक मन्त्र "अघोर मन्त्र" नाम से विख्यात है। "**अघोरेभ्योऽथघोरेभ्यो घोर घोर तरेभ्यः सर्वेभ्यः सर्व सर्वेभ्यः नमस्ते अस्तु रुद्र रुपेभ्यः**" इसका जप व बीजमन्त्र—"**ॐ हुं नमः**" भी है। इस बीजमन्त्र से रुद्राक्षों को अभिमंत्रित करके ही माला धारण करना चाहिये।

भस्म धारण, रुद्राक्ष धारण के बिना शिव पूजन फलप्रद नहीं है। ऐसा कहते हैं :—

विना भस्म त्रिपुंडेन विना रुद्राक्ष मालया।
पूजितोऽपि महादेवो न स्यात् तस्य फलप्रदः ॥

अघोर मन्त्र की ८ कलाएं है अतः अष्टाध्यायी व ८ मन्त्रों के नामों से पूजन, तर्पणादि की विशेष महत्ता हैं। अघोर मन्त्र की ८ कला के नाम निम्न है :—

(१) तमो (२) मोहा (३) क्षमा
(४) निद्रा (५) व्याधिः (६) मृत्यु
(७) क्षुधा (८) तृषा।

अघोरेस्य कलाह्येता अष्टौ च परिकीर्तिताः ॥

इसी तरह अर्द्धनारीश्वर शिव की ८ कलाएं निम्न है उनका पूजन भी अभीष्ट है :—

(१) ऋद्धिः (२) सिद्धि (३) धृतिः
(४) लक्ष्मीः (५) मेधा (६) कान्तिः
(७) स्वधा (८) प्रभा।

सद्योजातकलाह्येता अष्टौ च परिकीर्तिताः ॥

महादेव के पूजन में श्वेताक्षत, श्वेतपुष्प से ब्रह्मा की, तुलसी के १०० पत्तों से विष्णु का पूजन भी अपेक्षित है। तभी त्रिवेद ब्रह्मा, विष्णु, महेश तीनों ही शान्तिप्रद होते है इसे ही त्रिगुणा स्वामी कहते है।

कहा हैं :—श्वेताक्षतैः श्वेतपुष्पैः च पूजयेद् हंसवाहनम्।
सिद्धयन्ति सर्वकार्याणि पूजनेन न संशयः ॥
तुलसी शत पत्रेश्च पूजयेद् गरूडासनम्।
सर्वदोष विनाशेन प्राप्नोतिशिवसम्पदाम् ॥

अन्त में शिव गायत्री "ॐ तत्पुरुषाय विद्महे" का जप भी अभीष्ट है।

साधारणतया—रुद्राभिषेक कार्य में, गणपति पीठ, नव-ग्रह-पीठ, रुद्र-पीठ, रुद्र-कलश की स्थापना करके उनके पूजनादि कर शिव पंचवक्त्र पूजन करके रुद्राभिषेक करके अन्त में उत्तर पूज़न, तर्पणादि करके आरती-पुष्पांजलि कृत्य के बाद महिम्न स्तोत्र पाठादि विहित है। फिर पूजन में पंचोपचार से लेकर राजोपचार तक के भी श्रद्धानुसार विधान है। शिव पूजन भी ज्ञान-यज्ञ है। प्रत्येक पूजन वैदिक रीति में एक यज्ञ ही है। अतः उसमें जप का दशांश तर्पण, उसका दशांश मार्जन और उसका दशांश ब्राह्मण भोजन करा लेने के बाद ही कार्य पूरा होता हैं, अन्यथा छिद्र रह जाते है।

रुद्राभिषेक की महिमा

रुद्र-जप या रुद्री-पाठ की महिमा सर्वत्र मुक्त कण्ठ से गाई गई है। महामृत्युंजय जप के साथ भी इसका प्रयोग होता है। यह रुद्रीपाठ अनेक प्रकारों से प्रचलित है। देश काल पात्र एवं कार्यानुसार भिन्न-भिन्न विधि भी अपनाई जाती रही है। रुद्रीपाठ, अभिषेक से मुख्यफल (१) सर्वकाम फल प्राप्ति (२) दिव्यलोक या सायुज्य प्राप्ति (३) काशी-मरण की तरह मुक्तिदायक (४) आयुवर्धक एवं (५) कष्ट पीड़ा रोग हरण के फल प्राप्त होते हैं। इसमें प्रायः अंगिरस, याज्ञवल्क्य, वायु-पुराण, स्मृतिकार, शंख आदि सभी एकमत है :—

"सर्वपाप हराह्येते रुद्रैकादशिनी तथा"— याज्ञवल्क्य:

"सुवर्णस्तेजो रुद्राध्यायी मुच्यते"— शंख:

"एकादश गुणान्वापि रुद्रानावर्त्यधर्मवित्

महापापैरपि स्पृष्टो मुच्यते नात्र संशय:"— अत्रि एवं अंगिरस्

"चमकं नमकं चैव तथा सूक्ष्म च पौरूषम् ।

नित्यं त्रयं प्रयुंजानो ब्रह्मलोके महीयते ।।

चमकं नमकं होतृन् पौरूषं च जपेत् सदा ।

प्रविवेश स महादेव गृहं-गृह पतिर्यथा ।। — वायु पुराण

यह रुद्र पाठ, षड्ंग, एकादशिनी, शतरुद्रो, रुद्री, रूप-रुद्री आदि अनेक तरह से प्रचलित हैं ।

※ अष्टाध्यायों के नाम व सारांशत: विवेचन ※

रुद्राष्टाध्यायी के नाम से प्रसिद्ध इस रुद्र जप में ८ अध्याय माने गये है । इन अध्यायों का क्रम निम्न हैं ।

१. "ॐ यज्जाग्रत" से छः मन्त्र का नाम "शिवसंकल्प सूक्त" है ।
 इसे हृदय की संज्ञा दी गई हैं "शिवसंकल्प हृदयं" ।

२. "ॐ सहस्रशीर्षापौरूषं: सिर:" से १६ मन्त्र का पुरुष-सूक्त है ।
 (ए) "सूक्तं स्यात्पौरुषं शिर:" इसे सिर की संज्ञा दी गई हैं ।
 (बी) "ॐ अद्भ्य: संम्भृत:" से ६ मन्त्र उत्तर नारायण-सूक्त है "प्राहुर्नारायणीयं च शिखा स्याच्चोत्तराभिधम्" इसे शिखा माना गया है ।

३. "ॐ आशुः शिशानो" से १२ मन्त्र "अप्रतिरथसूक्त" है।

(ए) "आशुः शिशानो कवचम्" इसे कवच माना गया है।

(बी) अप्रतिरथ ऋषि के मत से १२ मन्त्र ही अभिषेक के हैं। परन्तु "कर्क" ऋषि के मत में १७ मन्त्र हैं। अतः "अवसृष्टा परापत" से ५ मन्त्र और जोड़कर १७ मन्त्रों से अभिषेक विहित है।

४. ॐ विभ्राड्बृह०से १७ मन्त्र "मैत्र-सूक्त" कहलाता है। "नेत्रं विभ्राड् बृहत्स्मृतम्" इसे नेत्र माना गया है। इस तरह से पांच अंग हो जाते है। अर्थात् १ अध्याय से ४ तक ये महादेव के ५ अंग बनते हैं।

तब षड्ङ्ग बनाने के लिए—अस्त्र की जगह शतरुद्री का प्रयोग दिया है।

"शतरुद्रियमस्त्रं स्याद्षडङ्ग क्रम ईरितः"

हृच्छिरस्तु शिखा वर्म नेत्रं चास्त्रं महामते।

प्राहुर्विधिज्ञा रुद्रस्य षड्ङ्गानि स्व शास्त्रतः।।

(१) हृदय (२) शिर (३) शिखा

(४) कवच (५) नेत्र (६) अस्त्र

इन छः अङ्गों को करने के बाद जो नमक-चमक पाठ है वह रुद्र पाठ है।

५. "ॐ नमस्ते०" से ६६ मन्त्र इसे 'रौद्रध्याय' कहते हैं। अथवा इसका नाम "नील सूक्तम्" भी है।

६. 'ॐ वयं ठ्ं सोमं" से ८ मन्त्र महत् शिरोरूप है।

(ए) इसमें भी काण्व मतानुयायी तो ७ मन्त्र ही मानते हैं; या वे ७ और मन्त्र जोड़कर इसको अभिषेक के काम में लेते हैं।

(बी) नतं व्विद्वाथ० से २ मन्त्र "देव पद्धत्ति" के अनुसार जोड़े गये हैं।

उग्रश्च भीमश्च से ३ मन्त्रों को कल्पद्रुमकार ने जोड़ा है। इस तरह ५ मन्त्र या लोमभ्यः स्वाहा के ४ मन्त्र और उग्रश्च के ३ मन्त्र मिलकर ७ मन्त्रों से अभिषेक करना माना गया है। इस अनुवाक् को 'महादेव की जय' माना गया है।

७. ॐ वाजश्र्च्च में से २९ मन्त्र चमकाध्याय कहलाता है। वाजश्च्च से लेकर २८ मन्त्र ही 'चमकाध्याय' में विहित है। ऐसा देवयाज्ञिक ऋषि मानते हैं। अब यहां दो मत है—जो महत् शिर के मन्त्रों से अभिषेक करते हैं वे चमकानुवाक से अभिषेक के पक्ष में नहीं है; और जो ऋषि चमकानुवाक से अभिषेक के पक्ष में है वे महत् शिर के मन्त्रों को अभिषेक में नहीं लेते।

८. "ॐ ऋचं वाचं" से २४ मन्त्र 'शान्त्याध्याय' कहलाता है। इस तरह रुद्री के ८ अध्यायों का पाठ होने से अष्टाध्यायी रुद्री कहलाती है।

रुद्राष्टाध्यायी की सारभूत मीमांसा

१. शिव संकल्प सूक्त—

इसमें कुल १० मन्त्र है। प्रारम्भ में उल्लिखित परम्परागत 'माच्छन्द' इत्यादि में वैदिक कर्मों के आधार-भूत २५ वैदिक छन्दों को स्मरण कर वैदिक ऋषियों के

प्रति श्रद्धाञ्जलि अर्पित की हैं । **'गणानान्त्वा'** से मूल रुद्री प्रारम्भ होती है जिसमें ज्ञान-इच्छा-क्रिया व शक्तियों के स्वामी साक्षात् परब्रह्म परमात्मा को भगवान् गणपति के रूप में आवाहित करके आगे प्रारम्भ होने वाले वैदिक-कर्म का संकल्प करते है । **'यज्जाग्रतो'** से लेकर ६ मन्त्र 'शिव संकल्प सूक्त' नाम से प्रसिद्ध है जिसमें मन को पवित्र, सात्विक, एकाग्र तथा शान्त चित्तवाला होकर धर्म-कार्य हेतु शुभ-संकल्प वाला होने की प्रार्थना की गई है । जैसे शिक्षित सारथी लगाम को कुशलपूर्वक ग्रहण कर घोड़ों को ठीक मार्ग पर ले जाता है उसी प्रकार मन, (बुद्धिचित्त-इन्द्रियों के रूप में) मनुष्यों को शुभ-पथ, शिव-संकल्प की ओर ले जावे । इन मन्त्रों में **'मन'** के स्वरूप का मार्मिक विश्लेषण, भारतीय ऋषियों के दार्शनिक पराकाष्ठा का ज्वलन्त उदाहरण है जो कि विश्व के इतिहास व साहित्य में सानी नहीं रखता ।

२. **पुरुषसूक्त—**

इस अध्याय में कुल २२ मन्त्र हैं जिसमें प्रथम सोलह मन्त्र 'पुरुष सूक्त' के नाम से प्रसिद्ध है । इन मन्त्रों में सर्व-व्यापक, परब्रह्म परमेश्वर के विराट्-स्वरूप का दर्शन एवं विश्वसृष्टि का मार्मिक चित्रण है । सर्वशक्तिमान्, सर्वज्ञ, सर्वविभु महापुरुष की पूजा के लिये ये मन्त्र सोलह उपचारों के रूप में सर्वत्र प्रयुक्त होते हैं, अर्थगाम्भीर्य, उपासना एवं दार्शनिक दृष्टि से यह सूक्त अत्यन्त महत्वपूर्ण है, जिसमें विश्व जीवन सामग्री-रूप यज्ञ से यज्ञस्वरूप परमात्मा विष्णु का यजन किया गया है । **'अद्भ्यऽसम्भृतः'** से ६ मन्त्र 'उत्तर-

नारायणसूक्त' नाम से जाने जाते है। जिसमें परमात्मा के स्वरूप ज्ञान से मोक्ष-प्राप्ति का कथन है।

३. अप्रतिरथ सूक्त—

१७ मन्त्रों वाले इस सूक्त में रुद्र के अप्रतिम पराक्रम का कथन हैं। सिंह के समान भयङ्कर गर्जना के साथ शत्रुओं के हृदय को कंपाने वाला एवं रुलाने वाले 'रुद्र' को दुष्ट शत्रुओं का संहारकर्त्ता के रूप में दर्शाया गया है। इन्द्र का पराक्रम भी रुद्र के सामने निस्तेज है। शत्रु नाश, विघ्न-बाधाओं के निराकरण हेतु इस सूक्त का विशेष महत्व है कई विद्वान् इस सूक्त को 'शत्रुञ्जयसूक्त' भी कहते है।

४. सूर्यसूक्त (मैत्र-सूक्त)—

१७ मन्त्रों वाले इस अध्याय में भगवान् भास्कर की स्तुति हैं। सूर्य जगतचक्षु एवं विश्वात्मा के रूप में समस्त प्राणियों के जीवन-आधार हैं। वेदों में सूर्य को 'ब्रह्म' का उत्कृष्टतम प्रतीक माना गया है इन मन्त्रों का पाठ करने पर सूर्य देवता प्रसन्न होते है तथा व्यक्ति का आत्मबल एवं तेजस्विता बढ़ती है साथ ही सूर्य के तेज से सभी प्रकार के ऐश्वर्य व धनों की प्राप्ति होती है।

५. नीलसूक्त (रौद्राध्याय)—

इसमें नीले केश वाले, नीलग्रीवा, नीलवृषभ पर आरूढ़ होने वाले रुद्र के अनन्त गुणों व विशेषणों को ध्यान में रखते हुये उसकी अनन्त शक्ति को नमस्कार किया गया हैं। 'नमस्तेरुद्रमन्यव' आदि प्रारम्भ के १६ मन्त्रों में एक विशेष प्रकार की शक्ति हैं रुद्र का रौद्ररूप एवं उसकी विनाशकारी

व प्रलयंकर शक्ति का दर्शन होता है। स्तुतिकर्त्ता इन मन्त्रों के माध्यम से अपने माता-पिता, पूजनीय वृद्धों, बालकों, युवकों, गर्भवती स्त्रियों एवं पशुओं के स्वास्थ्य की रक्षा के लिये प्रार्थना करता है। इसलिये ये मन्त्र बार-बार दोहराये जाते हैं। एक मीमांसक के अनुसार सोलह मन्त्रों में प्रातःकालीन उदित होते हुये 'सूर्य' का वर्णन है तथा इन मन्त्रों द्वारा ऋषियों ने प्रथमतः रुद्ररूप सूर्य को नमस्कार किया है। एक अन्य विद्वान् के मत से मन्त्र ६—८ के अनुसार यह समस्त आकाश उस रुद्र की नीलग्रीवा है तथा सूर्य, चन्द्र उसके नेत्र है समग्र ब्रह्माण्ड उसके उदर-स्थल में है तथा पाताल ही उसके पाँव है।

'नमोहिरण्यबाहवे' इत्यादि मन्त्रों से स्वर्ण से विभूषित भुजा वाले सेनानी शिव की अनन्त शक्तियों को बार-बार नमस्कार किया गया है। इस अध्याय के उत्तरवर्ती ३६ मन्त्र **'द्वन्दिन मन्त्र'** कहलाते है क्योंकि इनमें भगवान् के दो-दो नाम लेकर दो-दो बार नमस्कार किया गया हैं। **'असंख्याता सहस्त्राणि'** से लेकर दस मन्त्रों तक लगातार उत्तरपद की पुनरावृत्ति हैं। **'तेषा ठ्ँ सहस्त्रयोजनेऽवधन्वानि तन्मसि'** इस पुनरावर्तित पद का अर्थ है कि अन्तरिक्ष, द्यौलोक, आकाश व पाताल में व्याप्त नीलआभा युक्त अशुभ रश्मियों, विद्युत तरङ्गों एवं घातक शस्त्रों के प्रहार से **असख्य योजनों तक फैले इस भू-मण्डल पर आप हमारी रक्षा करे*** अन्तिम

---

* इस मन्त्र से यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि नीलआभायुक्त किरण (Ultraviolet rays) घातक होती है। इसको आधुनिक विज्ञान ने भी सिद्ध किया है। सूर्य की किरण में सात रंग होते

तीन मन्त्रों में क्रमशः द्यौलोक, अन्तरिक्ष व पृथ्वीलोक व दसों दिशाओं में व्याप्त आदिशक्ति 'रुद्र' को दसों अंगुलियों से नमस्कार किया गया है। लय, छन्द एवं सामूहिक घोष की दृष्टि से ये मन्त्र अद्भुत आनन्ददायक है। इस अध्याय के ६६ मन्त्रों में लगभग ३४० बार रुद्र को भिन्न-भिन्न नामों से अभिहित कर उसे नमस्कार किया गया हैं।

इसके पूर्व चार सूक्तों में कुल ६६ मन्त्र है तथा इस अकेले सूक्त में भी ६६ मन्त्र है। चूंकि इसमें रुद्र का ही वर्णन है अतः कई विद्वान् इसको 'रुद्र-सूक्त' के नाम से भी अभिहित करते है।

६. महत्शिरोरूप (रुद्र-सूक्त)—

'ॐ व्वय ठ्ं सोमव्व्रते' से रुद्री के छठे अध्याय का प्रारम्भ होता हैं। रुद्र के रौद्रस्वरूप को समाप्त कर इस अध्याय में उसका सौम्य स्वरूप प्रदर्शित कर उसे **औषध्याधिपति व सोम** इत्यादि नामों से अभिहित किया गया हैं। रुद्र का आशीर्वाद आयुष्यवर्धक हैं। वह मोक्षप्रदाता है। **'त्र्यम्बकं यजामहे'*** अर्थात् पका हुआ ककड़ी का फल जिस प्रकार बेल के बन्धन से छूट जाता है ठीक उसी प्रकार

है जिसमें बैंगनी रंग की किरण सबसे खतरनाक व घातक मानी गई हैं। स्टोव-गैस इत्यादि दैनिक प्रयोग की वस्तुओं में भी हम देखते है कि अग्नि की ज्वाला जब नीलआभायुक्त होती है तब घातक व विषैली हो जाती है। इन मन्त्रों में रश्मि विज्ञान (Colour theraphy) के गूढ़ रहस्य छिपे है जिसे खोजने के लिये शुद्ध वैज्ञानिक मस्तिष्क चाहिये।

* प्रस्तुत मन्त्र एक उच्च कोटि का दार्शनिक मन्त्र है जिसमें जीवन-मृत्यु का रहस्य छिपा हुआ है।

दिव्य महिमा वाले त्रिनेत्रधारी, त्रिकालज्ञ रुद्र की अराधना से हम मृत्यु के बन्धन से छूट जावे। पर शाश्वत स्वरूप के अमृत-बन्धन से हम कभी दूर न हो। 'उग्रश्चच' से लेकर 'यमाय स्वाहा:' इन सात मन्त्रों को 'यम-सूक्त' कहा जाता है जो कि चितास्थान पर बोले जाते हैं। अतः विद्वानों का एक बड़ा समूह इसे शुभ कार्य हेतु किये गये अभिषेक में नहीं पढ़ा करता।

७. **चमकाध्याय (चमक-सूक्त)—**

इस अध्याय के २९ मन्त्रों में यज्ञभगवान् की महिमा का गायन किया है। इस अध्याय की विशेषता यह है कि समुच्चय बोधक निपात् 'च' का इन मन्त्रों में कुल ३४७ बार प्रयोग हुआ तथा प्रत्येक 'च' के पश्चात् अस्मद् की चतुर्थी विभक्ति 'मे' का प्रयोग खुलकर हुआ हैं। इन मन्त्रों में संसार की सभी वस्तुओं की उत्पत्ति के आधारभूत यज्ञ के द्वारा स्तुतिकर्त्ता सभी प्रकार को सामग्री, वैभव, प्रतिष्ठा, धन, ऐश्वर्य एवं दुलर्भ वस्तुओं को प्राप्त करे यह प्रार्थना की गई है। जिसमें कठोर वर्ण-व्यवस्था के साथ महाप्राण शब्दों का खुलकर प्रयोग होने से ध्वनि में एक विशेष प्रकार की लयबद्धता श्रवणीय, मनोहारिता व आकर्षणता आई है।

८. **शान्त्याध्याय—**

'ॐ ऋचं व्वाचम्' से लेकर २४ मन्त्र कल्याणकारक, पुष्टिवर्धक एवं शान्तिदायक मन्त्र माने गये है जिसमें विविध देवताओं की अर्चना हैं। कुछ लोग इसका पाठ अलग से करते है तथा उपरोक्त सप्त अध्यायों में जोड़-तोड़ कर आठवां अध्याय बना लेते है। वस्तुतः शान्त्याध्याय ही

आठवां अध्याय है क्योंकि शिव संकल्प से शान्ति की ओर बढ़ना ही रुद्र-पाठ का क्रम हैं।

* * *

शत-रुद्री—

शत-रुद्री के बारे में दो मत है। स्मृति सूत्र, पुराणों में रुद्र-जप से अभिप्राय रुद्रान् जपेत् भी है अतः गृह्य-सूत्र के मत से 'नमस्ते रुद्र' से लेकर ६६ मन्त्रों का रौद्राध्याय ही शतरुद्र कहलाता है।

याज्ञवल्क्य, कैवल्योपनिषद्, जाबालोपनिषद् आदि ने शतरुद्रीपाठ की बहुत महिमा गाई है। कमलाकर आदि विद्वानों ने नमस्ते की १६ ऋचाओं में आये नमस्कारों का ही शतरुद्री की संज्ञा दी है। अन्य ऋषियों ने शतरुद्री का अर्थ सौ मन्त्रों की गणना से लिया है। उनका मत है।

षट्षष्टीर्नीलसूक्तं च पुनः षोडशमेव च।
एषते द्वे नमस्ते द्वे, नतंविद्वयमेव च॥
मीढुष्टमेति चत्वारि वयं च वसु संख्यया।
शतरुद्री समाख्याता यजुर्वेदेन भाषिता॥

इसमें पंचमाध्याय के मन्त्र ६६, फिर १६ **नमस्ते** की ऋचाएं, फिर **'एषते'** के २ मन्त्र, **'नमस्ते'** के २ मन्त्र नतं विदाथ के २ मन्त्र मीढुष्टमे के ४ और ८ वयं ठ्ं सोम के मिलाकर १०० मन्त्रों की संख्या मानी गई है।

रुद्राभिषेक के प्रचलित भेद—

आजकल प्रचलित पाठों में षड्ंग पाठ करने के अभिप्राय से प्रथम अध्याय से ६ अध्याय तक शतरुद्री सहित षड्ंग मानकर—७ वे अध्यांय के प्रारम्भ में नमक पाठ करके

७ वे के बीचों में १० बार नमक पाठ कर "रुद्रएकादशो" को पूर्ण करके 'शान्त्याध्याय' सहित अष्टाध्यायी का पाठ हता है। इसी प्रकार का यह पाठ 'रुद्री-पाठ' कहलाता है। जबकि इसमें रुपाख्यपाठ और रुद्रपाठ का समन्वय है। इस तरह हम देखते है कि शास्त्रानुसार रुद्र-पाठ के अनेक प्रकार मिलते हैं।

रुद्राभिषेक मुख्यतः ५ प्रकार होते हैं। उसमें (१) रुप (२) रुद्र (३) लघुरुद्र (४) महारुद्र (५) अतिरुद्र—प्रसिद्ध है। उक्त रुद्र भी प्रत्येक में ३ प्रकार के होते हैं। (१) जपार्थ रुद्र (२) होमार्थ रुद्र और (३) अभिषेकार्थ रुद्र। जैसी कामना और जैसा प्रयोग करना अभीष्ट हो, तदनुसार ही इनकों काम में लिया जाता है। इसमें भी जपरुद्र दो भागों विभक्त है केवल जपात्मक और होमाङ्ग रूप में प्रयुक्त जपरुद्र के ही अङ्ग अभिषेक व हवन है अतः इनका तादात्म्य संबंध है।

साधारणतः एक ब्राह्मण द्वारा ११ बार (नमस्ते १६ वार ६६ मन्त्रात्मक) पाठ द्वारा किया जाने वाला अभिषेक केवल रुद्र या रुद्री-पाठ कहलाता है। यह क्रम सर्वत्र प्रचलित है।

इसी काम को ११ ब्राह्मणों द्वारा कराया जाकर १२१ नमस्ते पाठों वाला अभिषेक "लघुरुद्र" कहलाता है। इसी तरह ११ बार लघुरुद्र का होना एक "महारुद्र" कहलाता है; इसमें १२१ ब्राह्मण बिठाये जाते है। ११ महारुद्रों की आवृत्ति से एक 'अतिरुद्र' होता है। इसमें १३३१ ब्राह्मणों का वरण होता है।

रूपाख्य-रुद्र विधि में भी निम्न भेद है :—

१. ॐयज्जाग्रत से लेकर विभ्राड् अनुवाक तक पांचों अंगों से पहले अभिषेक करे।

२. फिर—ॐ भूः ॐ भुव: ॐ स्वः ॐ नमस्ते इस मन्त्र से लेकर तमेषान्जम्भेदध्ध्म: तक ६६ मन्त्र और अन्त में ॐ भूः ॐ भुव: ॐ स्व: ॐ इस प्रकार ८ प्रणव मन्त्र से रौद्राध्याय का अभिषेक करे।

३. इसके बाद ॐ वयं ठ॑ सोम की ८ कंडिका पढ़े। ॐ नतं विद्रा के २ मन्त्र ॐ उग्रश्च से ७ मन्त्र पढ़े। ॐ वाजश्चमें के ८ अनुवाकात्मक नमक-चमक पाठ करे।

४. फिर ॐ ऋचं वाचं से २४ मन्त्रों का शान्त्याध्याय पढ़कर, अभिषेकपूर्ण करके ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः इस तरह ३ बार शान्ति का उच्चारण करे। तभो अभिषेक पूर्ण होता है।

(ए) वाजसनेय शाखा वाले इसी तरह के पाठ को चमक पाठ छोड़कर मानते हैं।

(बी) देवयाज्ञिक लोक "वाजश्मे" से ८ अनुवाक का चमक पाठ ही प्रधान मानते हैं नमक पाठ नहीं।

१. "नमस्ते रुद्र" मन्त्र से लेकर १६ व ६६ मन्त्र का रौद्राध्याय 'नमक-पाठ' कहलाता है।

२. वाजश्चमे से लेकर ८ मन्त्रों का अनुवाक 'चमक-पाठ' कहलाता है।

३. नमक-चमक संयुक्त पाठ ही नमका-चमका रुद्री कहलाती हैं। इसमें निम्न श्लोकानुसार ७ वे अध्याय में अर्थात् **'वाजश्चमे'** के मंत्रों में नमक पाठ किया जाता है।

वेद वेदाब्धिरामाश्च, राम रामब्ध्यैकैकका

द्वौ द्वौ मन्त्रौ पृथक् प्रोक्तौ नमके चमके तथा।

अर्थात्—**व्वाजश्चमे** से ४ मन्त्र अर्थात् **'सत्यश्च'** पर नमस्ते के १६ वा ६६ का पाठ करे। फिर ८ वें मन्त्र **"ऊर्व्च"** पर फिर १२ वे मन्त्र **"अश्माच"** फिर १५ वे मन्त्र **"अग्निश्च"** फिर १९ वे मन्त्र **"अ ठ्ँशुश्च"**, फिर २१ वें मन्त्र अग्निश्च फिर २३ वे मन्त्र एकाच फिर २४ वे मन्त्र **'चतस्रश्च'** फिर २५ वे मन्त्र **'त्र्यविश्च'** फिर २७ वे मन्त्र **'व्वाजाय'** स्वाहा पर **'नमकपाठ'** करे, इस तरह १० बार नमस्ते पाठ मध्य में होता हैं। ११ वां नमस्ते पाठ कुछ के मत में **वाजश्चमे** के प्रारम्भ के पूर्व कुछ के मत में २९ वें मन्त्र के बाद अर्थात् अष्टम अध्याय की समाप्ति पर बोलते हैं। इस तरह ११ नमस्ते का पाठ एक **'रुद्र-पाठ'** कहलाता है। कुछ लोगों के मत से १० बार यह पाठ और प्रथम बार बोला गया रौद्राध्याय मिलकर ११ नमस्ते होते हैं। इस तरह विभिन्न ऋषियों के विभिन्न मत इसमें काम करते हैं। परन्तु ११ बार नमक पाठ हो इसमें सर्वत्र श्रुति एक मत हैं क्योंकि रुद्रों की संख्या एकादश ही सर्व मानी गई है।

(८) **षड्ंग पक्ष में—"ॐ यज्जाग्रत"** इस प्रथमाध्याय से ५ वें अध्याय तक क्रमशः पहले अभिषेक करे फिर ॐ **भूः**, ॐ **भुवः** ॐ **स्वः**, ॐ **नमस्ते** से लेकर जम्भेदध्मः तक ६६ मन्त्रों के अन्त में ॐ **भूः**, ॐ **भुवः**, ॐ **स्वः**, ॐ

इस तरह ८ प्रणव वाला रौद्राध्याय पढ़कर अध्याय ६ पढ़े फिर महत् शिर और जटा के मन्त्रों का अभिषेक करे **वाजश्चमे** करे। दूसरे पक्ष में **वाजश्चमे** से अभिषेक करे तो ८ मन्त्र ही काम में ले और महत् शिर व जटा के मन्त्र काम में न ले।

दोनों ही पक्ष **"शान्त्याध्याय"** के पाठ को अभिषेक में शान्तिकरण के लिए स्वीकार करते हैं। अन्त में तीन बार "शान्तिः" शब्द के उच्चारण को आवश्यक मानते है। यह रूपाख्य रुद्र जप का द्वितीय प्रकार है।

बृहत् पाराशर स्मृति के मत में पंचांग पाठ के बाद **नीलसूक्त** पढ़कर **शान्त्याध्याय** पढ़ लेना ही काफी है। चमक पाठ की व नमक पाठ की जरूरत नहीं है। इसे ही रूपाख्य-रुद्र जप माना है। अन्य किसी भी मन्त्र के जप को वहां स्थान नहीं है।

वैसे रुद्रजप के पूर्व षड्ङ्गन्यास ध्यानादि जो सर्वत्र पूजा प्रकरण में आते हैं करने चाहिए ही परन्तु पाठों के विशेष प्रकार का उल्लेख यहां अभीष्ट होने से किया गया है।

छन्द, देवत के स्मरण के बिना सिद्धि नहीं होती न ही मन्त्र खुलते हैं अतः रुद्राध्याय के पूर्व ॐ **"माच्छन्द"** से छन्द स्मरण और **"गणानान्त्वा"** से गणपति व अम्बिका के स्मरण वांछित समझ कर इन मन्त्रों का योग भी **"ॐ यज्जाग्रतो"** शिव संकल्प सूक्त के पूर्व में किया गया है। इसी तरह शान्त्याध्याय के बाद नवग्रह मन्त्र भी अभिषेक में प्रयुक्त करके रुद्रपाठ करते हैं यह रुद्राख्य पाठ जप हैं।

*अभ्यास प्रश्न

१. रुद्र कौन है ? रुद्र किसे कहते है ?
२. रुद्री क्या है ? यह कितने प्रकार की होती है ?
३. रुद्राभिषेक का यौगिक मूल्यांकन क्या है ?
४. एकादश रुद्र कौन-कौन है ? उनके नाम बताओ ?
५. रुद्राष्टाध्यायी से क्या तात्पर्य है तथा तर्पण योग्य रुद्र के आठ नाम कौन-कौन से है ?
६. शिव का तृप्तिकारक मन्त्र कौनसा है ?
७. अघोर मन्त्र किसे कहते है इसको आठ कलायें कौन २ सी है ?
८. अर्द्धनारीश्वर की आठ कलाओं के नाम क्या है ?
९. त्रिगुणात्मक शक्ति किसे कहते है इसका पूजन कैसे होता है ?
१०. रुद्राष्टाध्यायी के छः अङ्ग कौन-२ से है ? उनका किन मन्त्रों से यजन होता है ?
११. नमक-पाठ किसे कहते है ?
१२. चमक-पाठ से क्या तात्पर्य है ?
१३. शतरुद्री किसे कहते है ?
१४. लघुरुद्र, महारुद्र व अतिरुद्र किसे कहते है ? इनमें कितने ब्राह्मण होते है. इनका पूजा-क्रम क्या है ?
१५. रूपाख्य रुद्र पाठ की विधि स्पष्ट करे ?
१६. रुद्री के प्रारम्भ में "**माच्छन्द**" का पाठ आवश्यक क्यों है ?
१७. "**नमस्ते**" के सोलह मन्त्रों में गूढ़-तत्व क्या है ?
१८. रुद्री का वह कौन सा मन्त्र है जिसमें जीवन मृत्यु का रहस्य छिपा हुआ है ?
१९. रुद्री का "**शत्रुञ्जय सूक्त**" कौनसा है ?
२० रुद्री का वह कौनसा मन्त्र है जिसके प्रयोग से शत्रु सेना स्तम्भित हो जाती है ।
२१. रुद्री का वह कौनसा मन्त्र है जिसमें 'न' की आवृत्ति १२ वार हुई है ?

—— ——

अध्याय — २

रुद्र का वैदिक स्वरूप

रुद्र सूक्त तीनों वेदों (ऋग, यजु, साम) भिन्न-भिन्न मन्त्रों से वर्णित है परन्तु विशेषतः यजुर्वेदीय रुद्रपाठ सर्वत्र प्रचलित है। भिन्न-भिन्न वेदमार्गीं भिन्न-भिन्न पद्धत्ति से इसका भिन्न-भिन्न प्रकार से पाठ करते है किन्तु मन्तव्य रुद्र एक ही है जिसकी महिमा भी एक ही है।

ऋग्वेद में रुद्र के लिये मूल रूप से तीन सूक्त सम्बोधित किये गये है तथा अन्य देवताओं की स्तुति के साथ भी इसका वर्णन मिलता है।

रुद्र का स्वरूप—

मानवाकृति के रूप में रुद्र के हाथ, भुजाओं व अवयवों का वर्णन वेदों में मिलता है। रुद्र भूरे रंग का व सुन्दर ओष्ठों वाला है[१]। इसकी आकृति दैदीप्यमान है तथा यह नाना रूप धारण करने वाला है। वह स्वर्ण आभूषणों[२] से अलकृत रहता हैं। वाजसेनी संहिता के अनुसार रुद्र लाल (ताम्र) वर्ण का है तथा उसका गला काला व नीले रंग का है[३] वह चर्माम्बर पहनता है तथा पर्वतों में रहता है।

---

१. 'बभ्रुः सुशिप्रो' ऋग्वेद २।३३।५
२. पिपिशे हिरण्यैः' ऋग्वेद २।३३।९
३. 'नीलग्रीवा विलोहित' नीलसूक्त ५।८

रुद्र का शस्त्र—

रुद्र एक शक्तिशाली वृषभ[१] है उसके पराक्रम का कोई अतिक्रमण नहीं कर सकता। वह बाण तथा धनुष धारण किये हुये रहता है[२]। कहीं पर उसको वज्रबाहु[३] कह कर भी सम्बोधित किया गया है। यह एक प्रकार से विनाश का देवता है और बहुत उग्र[४] (तेज स्वभाव) वाला है।

औषधाधिपति एवं सबका शासक—

रुद्र इस विशाल जगत् का शासक तथा पिता है। वह सबकी रक्षा करने वाला देवता है। उससे बढ़कर शक्तिशाली कोई नहीं।[५] वह पशुओं का विशेष हित करने वाला है इसलिये उसे 'पशुपति'[६] भी कहा गया है।

यह सब औषधियों का स्वामी है तथा वैद्यों में सबसे बड़ा वैद्य एवं प्राणप्रदाता भेषज है। इसलिये ऋग्वेद में इसे **'भिषक्तमं त्वा भिषजांश्रृणोमि'**[७] कहा गया है। रुद्र की कल्याणकारी औषधिया से सौ वर्ष की आयु प्राप्त होने का उल्लेख रुद्रसूक्त में किया गया है।

यह अपने उपासकों के पुत्र-पौत्रादि (बच्चों) तक को आरोग्य व दीर्घायु प्रदान करता है। इसके हाथों को **"मृणयाकुः"** (सुख देने वाला) **"जलाषः"** (शीतलता,

---

१. 'वृषभाय' ऋग्वेद २।३३।८
२. 'सायकानि धन्वा' ऋग्वेद २।३३।१०
३. 'तवसांम् वज्रबाहो' ऋ० २।३३।३
४. उग्रो' ऋ० २।३३।९
५. 'पुरुरूप' ऋ० २।३३।९-१०
६. 'पशुनाम पतये नमः' नीलसुक्त ५।१६
७. ऋग्वेद २।३३।४

शान्ति प्रदान करने वाला) तथा "भेषज" (आरोग्य प्रदान करने वाला) कहा गया है।

रुद्र के मित्र व शत्रु—

रुद्र सभी देवताओं का मित्र है। यह मरुतों के पिता[1] के रूप में ऋग्वेद में वर्णित है। इसने पृश्नि के गर्भ से मरुतों को छुड़ाया। रुद्र बहुत उदार हृदय वाला है इसलिये इसको 'ऋदूदर'[2] व मीढ़व कहकर सम्बोधित किया गया है। यह सूर्य व इन्द्र का मित्र है। अग्नि इसका सहायक है। यह पापियों का नाश करने वाला, रोगों का नाश करने वाला, पापों का नाश करने वाला एवं शत्रुहन्ता के रूप में सर्वाधिक समर्थ व प्रतिष्ठित देवता है। इसके अमोघ शस्त्र से शत्रु बच नहीं सकता। इसका क्रोध भयानक है। यह एकमेव पूर्ण समर्थ देवता है। यह यज्ञ तथा स्तुतियों से प्रसन्न होता है।

पाप व श्राप का नाशक देवता—

समस्त ऋग्वेद, सामवेद व यजुर्वेद में पाप व श्राप नाशक आरोग्य व प्राणदाता देवता के रूप में एकमात्र 'रुद्र' की स्तुति की गई है। 'अपभर्तारपसः'[3] 'कल्यलीकिनम्'[4] के रूप में अन्य किसी देवता की स्तुति नहीं की गई। इसको प्राणदातृ शक्ति का स्वामी माना गया है। इसकी

---

१. 'पितर्मरुताम्' ऋग्वेद २।३३।१ २. ऋग्वेद २।३३।१४
३. ऋग्वेद २.३३।७, अर्थात् पाप को दूर करने वाले
४. ऋग्वेद २।३३।८ कलुष को नष्ट करने वाले, स्तुतियों से प्रसन्न होने वाले रुद्र के दीप्तियान गान से सभी पाप, कष्ट, कलुष व रोग नष्ट होते है।

स्तुति से शत्रु व शत्रु की सेना तक नष्ट हो जाती है ।[१] एक प्रकार से कुछ विद्वान् इसे युद्ध का देवता भी मानते है ।

शौनक ऋषि के अनुसार कोई भी मास की कृष्णपक्ष चतुर्दशी[२] के दिन उपवास करके चरु के द्वारा रुद्र का हवन करे और उसमें भी ऋग्वेदोक्त 'आतिसूक्त' (रुद्रसूक्त) से घृत की आहुतियां देकर शिवजी का पूजन करे तथा अवशिष्ट हवन के चरु का ही प्रसाद ग्रहण करे तो वह व्यक्ति १२ महिने पूर्ण होने पर मृत्यु को भी जीत जाता हैं व सारे रोगों से छुटकारा पा जाता हैं । इस कारण रुद्र को **'मृत्युञ्जय'** भी कहा गया है ।

'नमस्ते रुद्र ..' के १६ मन्त्र इसके सिद्ध मन्त्र माने गये है । इन षोड़श ऋचाओं के गायन से रुद्र शीघ्र प्रसन्न होते देखे गये हैं । कई अनुष्ठानज्ञ इन्हीं षोड़श ऋचाओं के माध्यम से आकाश से वृष्टि भी करा देते है । स्वयं हमारे पिताश्री ने इसका कई बार सफल प्रयोग किया अतः यह अनुभूत है ।

वेद के परवर्ती साहित्य को छोड़कर केवल वैदिक मन्त्रों के आधार पर रुद्र के स्वरूप के विषय में विद्वानों में मतभेद रहा है । बेबर के अनुसार रुद्र मूलतः प्रचण्ड तूफान के दोर्घ घोष का प्रतिरूप है । हिलब्राण्ट के अनुसार रुद्र

---

१. निवपन्तु सेनाः' ऋग्वेद २।३३।११

२. चतुर्दशीमुपोष्यैकां कृष्णस्य नुहुयाच्चरुम् । आते सूक्तेन रौद्रेण प्रत्यृचं वाग्यतः शुचिः ।। पूर्वमाज्याहुतोर्हुत्वा थोपस्थाय च शंकरम् । हविः शेषेण वर्तेत एकान्तरमतन्द्रितः ।। पूर्णमासे जयेन्मृत्यु रोगैश्च परिमुच्यते । (ऋग्वेद १।१६८-१७०)

उष्णकाल व ग्रीष्म ऋतु का देवता है। ओदर के अनुसार रुद्र वस्तुतः कोई प्रमुख मृतात्मा है जिसको महान् देवों की कोटि में रख दिया गया है। विल्सन रुद्र को अग्नि अथवा इन्द्र का ही प्रतिरूप मानता है। उसके अनुसार रुद्र 'विद्युत युक्त तूफान का देवता है जो मनुष्यों तथा पशुओं को नष्ट करता है। पाश्चात्य विद्वान् विल्सन् का तर्क है कि **'अशनि'** शब्द का प्रयोग अग्नि और रुद्र दोनों के लिये समान रूप से किया गया है। विद्युत भी अग्नि का रूप है। रुद्र अग्नि रूप में पृथ्वी पर तथा विद्युत रूप में अन्तरिक्ष में निवास करता है।

यद्यपि पाश्चात्य विद्वानों ने वैदिक साहित्य का शब्दार्थ पकड़ने का बहुत ही प्रयास किया तथापि वैदिक-वाङ्मय को समझने व हृदयगंम करने के लिये चारों वेदों के प्रगाढ़ अध्ययन के साथ ब्राह्मण ग्रन्थों व निघण्टु का अध्ययन होना चाहिये। वैदिक साहित्य में ही रुद्र के संहारक रूप के साथ-साथ उसका कल्याणकारी रूप भी स्पष्टतः दर्शाया गया है 'शिव' नाम से इसको अभिहित करना ही इस बात द्योतक है कि यह परम कल्याणकारी एवं मंगलमय देवता है।

परवर्ती रुद्र का स्वरूप—

सर जॉन मार्शल के ग्रन्थ मोहनजोदड़ों[1] से पता चलता है कि सिन्धु घाटी की सभ्यता के समय भी शिव-पूजा प्रचलित थी, क्योंकि एक चित्र में योगी के चतुर्दिक् हाथी,

---

१. मोहनजोदड़ों जिल्द पृ० ५२-५३ चित्र १२ संख्या १७

व्याघ्र, गैंडा एवं भैंस पशु है (जो कि पशुपति शिव का चित्र है) कालिदास के बहुत पहले से शिव पूजा अर्द्ध-पुरुष एवं अर्द्धनारी के रूप में प्रचलित थी।[१] शिव का बहुधा पंचतुण्ड़ (पंचमुख-पंचानन) भी कहा जाता है और इसके पांच स्वरूप है। क्रम से सद्योजात, वामदेव, अघोर, तत्पुरुष एवं ईशान[२] वैदिक मन्त्र से रुद्र का यजन होता है। महाभारत के शान्तिपर्व,[३] मत्स्यपुराण,[४] अनुशासनपर्व,[५] में शिव पूजा के विधान एवं शिव के १००० नामों की सूची दी गई है। इन सभी प्रमाणों से यह सिद्ध होता है कि शिव की पूजा बहुत ही प्राचीन काल से भारत में प्रचलित है तथा यही शिव वैदिक-काल में रुद्र के रूप में स्तुत्य हुआ है।

श्री आर. जी. भण्डारकर ने अपनी पुस्तक 'वैष्णविज्म एण्ड़ शैविज्म' में दर्शाया है कि ऋग्वेद में रुद्र एक महत्त्वपूर्ण देवता के रूप में वर्णित है जिसे तैत्तिरीय संहिता[६] में ११ अनुवाक है। वह रुद्र ही सम्भवतः शैव सम्प्रदाय का 'शिव' है।

शिव के चार नामों को लेकर पाणिनि[७] ने भवानी, शर्वाणी, रुद्राणी एवं मृडानी नामक चार शब्द बनाये है। गृह्यसूत्रों में 'शूलगव' नामक यज्ञ में रुद्र को महान् देवता

---

१. मालविकाग्निमित्र, १।१ कुमारसम्भव ७।२८
२. तैत्तिरीय आरण्यक १०।४३-४७, विष्णुधर्मोत्तर ।४८।१
३. शान्तिपर्व ३४३।१३२ ४. मत्स्यपुराण ५२।२३
५. अनुशासन पर्व १४६।१४-१२०
६. तैत्तिरीय संहिता ४।५।१-११ ७. पाणिनि व्याकरण ४।१।४९

मानकर पूजा गया है। आश्वलायनगृह्यसूत्र[१] में रुद्र के १२ नाम गिनाये गये हैं और कहा है कि इस संसार में सभी नाम, सभी सेनाएं एवं सभी महान् वस्तुएं रुद्र' की है। पातञ्जलि ने शिव-भागवत का उल्लेख किया है। आद्य शंकराचार्य[२] के मत से वेदान्तसूत्र की एक उक्ति शैवों के पाशुपत सम्प्रदाय के विरोध में लिखी गई है। कूर्मपुराण[३] ने शैव सम्प्रदायों के शास्त्रों का उल्लेख किया है। शिव के असुर भक्त बाण ने भिन्न-भिन्न स्थानों पर १४ करोड़ लिङ्गों की स्थापना की थी। इन लिङ्गों को बाण-लिङ्ग[४] कहते हैं।

नर्मदा, गंगा एवं अन्य नदियों में पाये जाने वाले श्वेत प्रस्तर को 'बाण-लिङ्ग' कहते है। शिवजी के द्वादश स्वयंभू ज्योतिर्लिङ्ग प्रसिद्ध है—मान्धाता में **ओंकार**, उज्जयिनी में **महाकाल**, नासिक के पास **त्र्यम्बक**, एलोरा में **घृष्णेश्वर**, अहमदनगर से पूर्व **नागनाथ**, सह्याद्रि पर्वत में भीमा नदी के उद्गम-स्थल पर **भीमाशंकर**, गढ़वाल में **केदारनाथ**, बनारस (वाराणसी) में **विश्वेश्वर**, सौराष्ट्र में **सोमनाथ**, परली के पास **वैद्यनाथ**, श्रीशैल पर **मल्लिकार्जुन** तथा दक्षिण में **रामेश्वर** पौराणिक ज्योतिर्लिङ्ग माने जाते हैं।

पूजा प्रकाश[५] ने हारीत को उद्धृत कर बताया है कि महेश्वर की पूजा पांच अक्षरों से (नमः शिवाय) या रुद्र

---

१. आश्वलायनगृह्यसूत्र ४।६।१६
२. शंकरादिग्विजय २।२।३७
३. कूर्मपुराण, पूर्वार्द्ध अध्याय १६
४. नित्याचार पद्धत्ति, पृ० ५५६ ५. पूजा प्रकाश पृ० १६४

गायत्री से या 'ईशानः सर्वविद्यानाम्' (तैत्तिरीयारण्क १०।४७) नामक मन्त्र से या रुद्र-मन्त्र (तैत्तिरीय संहिता ४।५।१-११) से या 'त्र्यम्बक यजामहे' (ऋग्वेद ७।५६।५२) नामक मन्त्र से हो सकती है। शिव के भक्त को रुद्राक्ष पहनना जरुरी है तथा प्राचीनकाल से कृष्णपक्ष की चतुर्दशी शिव के लिये पवित्र मानी जाती रही है जिसका स्थान अब 'पुष्य-नक्षत्र' ने ले लिया है। पुष्य नक्षत्र के दिन शिवलिङ्ग पर दूध, दही, घृत, मधु, ईख, पंचगव्य, कर्पूर एवं अगरु-मिश्रित जल आदि से अभिषेक के विविध प्रयोग किये जाते है।

श्री रुद्र और क्षीर—

हर सोमवार को शिवजी पर रुद्राभिषेक की प्रक्रिया लोक में प्रचलित है। प्रदोष के दिन या श्रावण मास में तो रुद्राभिषेक करना भारत भर में सर्वानुमोदित किया है। ज्योतिष शास्त्र भी स्थान-२ पर अनीष्ट निवारणार्थ, रुद्राभिषेक को महत्व देता है; खासकर चन्द्र जनित दोषों के लिए या दीर्घायु कामनार्थ महामृत्युञ्जय जप और रुद्राभिषेक को रामबाण औषधि के रूप में व्यवहृत करता है। प्राचीन समय से ही गौदुग्ध रुद्राभिषेक में विशेष मान्य किया है। रुद्र पर अभिषेक करते वक्त पञ्चामृत, विजया, जल और दूध के अलग-२ प्रयोग विशेषतः प्रयुक्त किए जाते हैं। इस कर्मकाण्ड के पीछे क्या वैज्ञानिक रहस्य हैं? इस पर विचार करना आज के युग में अभिप्रेत है।

ज्योतिर्विज्ञान के अनुसार चन्द्र एक जल तत्व है। चन्द्रमा कर्क राशि का अधिष्ठाता है। कर्क राशि जलभू, जलचर, सौम्य, रात्रिबली, सम, बहुशक्ति, स्निग्धकान्ति,

विप्रवर्ण, पृष्ठोदय, स्त्री संज्ञक, चर, मृदु, जलतत्व, अपद, गुलाबी रंग, शीत, कफधातु, बहु प्रजाकारक, वक्षस्थल की अधिष्ठाता है। अतः सारे गुण औषधिनाथ चन्द्र में हैं। चन्द्र सुधांशु अमृतमय है। वह अपने अमृत सिञ्चन से जगत् में औषधि व चराचर को प्राण देता है। चन्द्र की उत्पत्ति क्षीर सागर से है। चन्द्र चंचल है। वह अपनी कलानुसार घटता बढ़ता है। पूर्ण चन्द्र को देखकर समुद्र में ज्वार उठता है। ज्योतिष में चन्द्र को लेकर बहुत-सा फलित सम्बन्धि विवाद है। चन्द्र की भिन्न-भिन्न अवस्थाएं हैं। मुख्यतः हीन, मध्य और पूर्ण बली इस तरह तीन प्रकार हैं। चन्द्र यदि पूर्ण बली है तो उसे शुभ माना है और हीन बली है तो उसे पापी माना है। अष्टम स्थान में शुक्ल पक्ष का पूर्ण बली चन्द्र दीर्घायु कर्त्ता है और वही हीन बली हो तो सद्यः मरण करता है। मान सागरी ने कहा है—**"कृष्णे पक्षे दिवा जन्म शुक्ल पक्षे यदा निशि, तदा षष्टाष्टमः चन्द्रः मातृवत् परिपालयेत्"** चन्द्र लग्नाधिपति होकर अथवा लग्नेश के साथ क्षीण बली हो और पापदृष्ट हो तो मनुष्य की मृत्यु अल्पायु में कर देता है। चन्द्र का मन से विशेष सम्बन्ध है। वेदों में चन्द्र की उत्पत्ति मन से कही है **"चन्द्रमा मनसो जातः"** अतः चतुर्थेश होकर चन्द्र जिस भाव में स्थित होगा मनुष्य के मन का विशेष रूझान उस भाव से प्रदर्शित वस्तुओं के प्रति होगा। चन्द्र मन की तरह शीघ्रगामी ग्रह है। इस तरह चन्द्र वस्तुतः मन का प्रतीत ग्रह है। चन्द्र आठवें भवन में हो तो जल में डूबने या वात योग का भय रहता है। क्षीण चन्द्र बारहवें भाव में बालारिष्टकर्त्ता है। अस्तु।

इधर समुद्र मंथन की कथा में स्पष्ट है कि चन्द्र की उत्पत्ति जहां से हुई उसी समुद्र से अमृत और विष दोनों की उत्पत्ति हुई। अमृत को चन्द्र ने पिया और विष को रुद्र ने पिया। रुद्र के विष जनित ताप के निवारणार्थं शिव ने चन्द्र की एक कला धारण की और वे चन्द्रशेखर कहलाए। चन्द्र नाम का सुधाशु रखा गया।

दूसरी ओर भागवतकार ने तृतीय स्कंध में विराट् पुरुष के वर्णन प्रसंग में रुद्र और चन्द्र की उत्पत्ति का वर्णन करते हुए लिखा है कि—

मनसचन्द्रमा जातो, बुद्धिर्बुद्धेर्गिरांपतिः।
अहंकारस्ततो रुद्रः, चितं चैत्य स्तनोऽभवत् ॥२६-१६१

आगे वे लिखते हैं—

हृदयं मनसा चंद्रो नोदतिष्ठतदा विराट।
रुद्रोभिमत्या हृदयं नोदतिष्ठतदा विराट ॥६८-७०

इससे स्पष्ट है कि हृदय वह स्थान है जिस पर मनुष्य का दार-मदार है। इसी हृदय में मन, बुद्धि, अहंकार और चित्त चारों समाविष्ट है। मन का देव चन्द्र, बुद्धि का ब्रह्मा, अहंकार का रुद्र और चित्त का स्वयं परमात्मा या क्षेत्रज्ञ (आत्मा) है। गीता ने शरीर को क्षेत्र और आत्मा को क्षेत्रज्ञ कहा है।

"इदं शरीरं कौन्तेय क्षेत्र मित्यभि उधीयते"

और "क्षेत्रज्ञं चापि मां विद्धि" से क्षेत्रज्ञ आत्मा और परमात्मा का संकेत है। "अहं" मनुष्य का सर्वाधिक प्रिय रूप है। अहं की बढ़ती उसे राक्षस (अहंकारी) बना देती है। अहं का न होना उसे निष्क्रियं बना देता है। अतः अध्यात्म मार्ग की यह उलझन है कि "अहं" का क्या करे?

मनुष्य में यदि अहं (Ego) न रहे तो वह कोई भी कार्य क्यों करेगा ? अतः अहं रखना भी है और उसे हटाना भी है। अतः अहं को ईश्वर के चरणों में रख दो। प्रभु का ही अहं, मैं तेरा हूं, यह अहं शुद्ध है। फिर कर्म जनित दोष नहीं होगा। मनुष्य 'शिव" रूप हो जायेगा। अतः चंचल मन को बुद्धि की प्रेरणा से प्रेरित कर अहं का चित्त में समाधान करना है। यह प्रक्रिया "रुद्राभिषेक" है। अतः ब्राह्मण की प्रेरणा ब्राह्मण द्वारा दूध से रुद्र पर अभिषेक करके चित्त (परमात्मा) को प्राप्त किया जाता है। इसी का मूल स्थूल रूप चन्द्रवार के दिन या जल तत्व प्रधान मास नभस् (श्रावण) में या दोषनाथ के दिन अर्थात् प्रदोष में क्योंकि चतुर्दशी का अधिष्ठातृ देवता रुद्र है और **"त्रयोदशी त्रयोभागा एक भागा चतुर्दशी"** ही प्रदोष है। शिव पार्वती रूप अर्द्धनारीश्वर शिव पर चन्द्र तत्व, जल, क्षीर और अमृत रूप का अभिषेक है। **"पयः की लीलाभमृतम्"** अमरकोषः और **"पयं तु सलिलं जलम्"** से क्षीर, पय जल तीनों पर्याय हैं। पय में अमृतत्व विद्यमान हैं। पय के अर्थात् दूध के दो गुण हैं। यह थोड़ी मात्रा में अमृत का कार्य करता है, और अतिमात्रा में जहर का काम देता है। जीर्ण ज्वर रोगी के लिए दूध जहर और रोग मुक्त के लिए अमृत है। अतः गौ दुग्ध में वे दोनों प्रक्रियाएँ सन्निहित होने से रुद्र पर दूध का अभिषेक स्वीकृत किया गया है।

मनुष्य के संसार जनित पीड़ा, ताप, दुःख दैन्य ये सब विष के प्रतीक है। उनके शमन के लिए अमृत का प्रतीक दूध नीलकण्ठ, विषपानकर्ता शिव पर चढ़ाया जाता है ताकि

अमृत की बूदें विष को दूर करें। हे प्रभो! हमारे दुःख रूपी विष को आप अमृत के तत्व ने सिञ्चित कर उसे दूर करें यही प्रार्थना इस स्थूल प्रक्रिया द्वारा सूक्ष्म जगत् को पहुंचाई जाती है। आध्यातमवादी भी अपने लक्ष्य की प्राप्ति हेतु इसी प्रक्रिया को अपनाते हैं और संसारी चन्द्र-ग्रह जनित दोष शमन हेतु रुद्राभिषेक प्रक्रिया से लक्ष्य सिद्धि का आह्वान करते हैं। यही कारण है कि ज्योतिष विज्ञान के द्वारा चन्द्र दोष दूर करने और दीर्घायु कामना के लिए रुद्र पर दूध का अभिषेक किया जाता है।

रुद्राभिषेक 'पुष्य" को ही क्यों ?

कर्मकाण्ड में "पुष्य नक्षत्र" पर ही रुद्राभिषेक तथा नाना प्रकार की रत्न-जड़ित मुद्रिकाओं के प्राणप्रतिष्ठा एवं बालारिष्ट के नाश हेतु बच्चों के गले में चांदी से निर्मित मोती युक्त "चन्द्र" पर अभिषेक का विशेष प्रावधान है ऐसा क्यों? कारण स्पष्ट है कि "पुष्य" शब्द पौष्टि, पोषण से सम्बन्धित है। इसका शाब्दिक अर्थ पौषण एवं पोषाहार करना है। पौषण भौतिक सुख ज्ञान एवं शारीरिक स्व-स्थता के लिए किया जाता है। "पुष्य नक्षत्र" का प्रतीक है गाय का थन। यह पुरुष लिङ्ग है। इसके तीन तारे (तीनों लोकों के द्योतक व त्रिकाल ताप नाशक) है। यह आकाश में मध्य मार्ग में स्थित है एवं इसका देवता बृह-स्पति तथा राशि कर्क है। गाय के थन का गुण दूध प्रदान करने के लिए है। दूध सकल विश्व का आहार है। इस आहार का रस शरीर के विभिन्न ग्रन्थियों में पहुंच कर चित्त वृत्तियों को प्रभावित करता है। वृत्ति या व्यवहार का सम्बन्ध कार्य प्रणाली से है। यह कर्क राशि के अधिष्ठित

है। कर्क राशि चर, जल, संज्ञक सौम्य, सत्वगुणी, विप्र वर्ण, बहुप्रसव व श्वेत रंग वाली देवी गुण सम्पन्न ओजस्वी ब्राह्मण-राशि है। इसका शारीरिक लक्षण नरम तथा मृदु है इसका मानसिक लक्षण कल्पना है। पुष्य व चन्द्र का अन्योनाश्रित सम्बन्ध हैं यही कारण है कि "पुष्य" पर आरूढ होकर चन्द्रमा बलशाली होकर स्वगृही कहलाता हैं। इसका देवता बृहस्पति ज्ञान, विद्या, विवेक, प्रज्ञा, बुद्धिमानो व आयु प्रदान कर अनेक अरिष्ट योगों को भंग करता है। "किं कुर्वन्ति ग्रहा सर्वे यस्य केन्द्रे बृहस्पति" सर्वाधिक प्रसिद्ध उक्ति है। जिस कुण्डली में "बालारिष्ट योग" बन गया हो उस स्थान पर किंवा उस ग्रह विशेष पर यदि बृहस्पति की दृष्टि पड़ जाय तो वह योग भंग होकर "जीव योग" में परिवर्तित हो जाता है। इसलिए बृहस्पति का दूसरा नाम "जीव" रखा गया है। बृहस्पति व चन्द्र दोनों देवीगुण सम्पन्न सौम्य व जीवदाता होने से इनका भी अन्योनाश्रित सम्बन्ध है। बृहस्पति व चन्द्र के केन्द्रगत होने पर, दृष्टि सम्बन्ध होने पर तथा इनको आपस में भिन्न-भिन्न स्थिति पर ऋषियों ने अनेकानेक योगों की सृष्टि का वर्णन किया है। यहां पुष्य नक्षत्र पर अभिषेक वास्तव में, पुष्टिवर्द्धक नक्षत्र का जीवदाता बृहस्पति के सान्निध्य में होकर, बच्चों का मातृवत् पालन करने वाला, रोग नाशक तथा अमृतकणों को सृष्टि करने वाले, प्राण-दाता चन्द्र के अधिष्ठित होने वाले इस नक्षत्र के घटिपलों में ही "रूद्र" को प्रसन्न करने हेतु किया गया "रुद्राभिषेक" विशेष कल्याणकारी होकर फलदायी होता हैं इसमें सन्देह नहीं। ज्योतिष शास्त्र में भी चन्द्र को मन का कारक माना

गया है यह मन का नियन्त्रक है। मनोविज्ञानिकों का कथन है वायु तथा मन दोनों ही गतिमान हैं अतः वहन शक्ति पर चन्द्र असर डालता है। मानसिक चिकित्सालय के रोगी पूर्णिमा के रोज अधिक विकल हो उठते हैं। पूर्णिमा के रोज जितने बच्चे पैदा होते हैं उतने अन्य समय पर नहीं होते है। चन्द्र का प्रभाव मस्तिष्क रीढ़ पर पड़ता है। चन्द्र की शीतल रश्मियां स्वास्थ्य के लिए काफी लाभप्रद सिद्ध हुई है। वेदों में **"पयः पृथिव्यापंय औषधी"** मन्त्र से दूध को औषधी और अमृत का प्रतीक माना है जो चन्द्र को ही लक्ष्य करता है। पृथ्वी का सबसे निकटतम ग्रह चन्द्र है। इसका जल तत्व पर विशेष प्रभाव है। जल, यह चल-तत्व है कभी स्थिर नहीं रहता, अतः चन्द्र चंचल है और मन भी। शीघ्र-गति ग्रह चन्द्र है और मन भी ज्योतिष शास्त्र में **"मनस्तु हिमगु"** ऐसा कहा है। इस तरह चन्द्र का मन से पूर्ण साम्य है। चन्द्र जिस राशि पर हो वही जातक की जन्म राशि होती है। उसी से मन का स्वभाव और वृत्ति का पता चलता है। एक डाक्टर व ज्योतिषी व्यक्ति ने ४०००० कुण्ड-लियों का अध्ययन करके निष्कर्ष रूप में बताया है कि चन्द्र का प्रभाव प्राणी मात्र पर पड़ता है। चन्द्र-ग्रहण के बाद तेजी से जन्तुओं की उत्पत्ति होती है जो कि हानिकारक होती है अतः धर्मशास्त्र ग्रहण के वेध के समय अन्न-जल ग्रहण का निषेध करते हैं और उसके तुरन्त बाद स्नान का विधान रखते है ताकि दूषित जन्तुओं से मन व शरीर पर कुप्रभाव न पड़े। खगोल, भूगोल, पदार्थ, रसायनवेत्ता डॉक्टरों ने स्वीकार किया है कि ग्रह सजीव और निर्जीव दोनों पर अपना प्रभाव डालते हैं यही स्थूल प्रभाव सूक्ष्म जगत में

कर्मकाण्ड़ प्रक्रिया द्वारा दूर किया जा सकता है। अतः चन्द्र प्रतीक पय का रुद्र पर अभिषेक करके विष पर अमृत चिन्तन की प्रक्रिया से कल्याण चाहा जाता हैं। आश्वलायन गृह्य सूत्र (४-६-१६) में कहा कि इस संसार के सभी नाम सभी सेनाएं रुद्र की हैं। ऋग्वेद काल से ही रुद्र एक महत्वपूर्ण देवता रहा हैं। रुद्र को "ऋढूदर" जिसका पेट कोमल हो ऋग्वेद (२-२३-५) कहा है तथा वाजसनेया संहिता में "नीलकण्ठ" विष पीने के कारण (६-७) कहा है। रुद्री में रुद्र को "सहस्राक्ष" सूर्य कहा है। "नमोऽस्तु नीलग्रीवाय सहस्राक्षाय मीढुषे" रुद्र के भूमण्डल में असंख्य रूप गिने गये हैं "असंख्याता सहस्राणि" सूर्य से ही समस्त सौर परिवार का जन्म हुआ है। यही सूर्य रुद्र है। यही सूर्य काल है। रुद्र इसका निष्क्रिय देवता है। बाण या लिङ्ग रूप शिव का प्रतीक है। यह उसी रूप में पूजा जाता है। सूर्य निष्क्रिय अग्नि का गोला नहीं है। वह सक्रिय है और प्रतिपल सूर्य की तरंगों से रूपान्तरण भी पृथ्वी के प्राणी को कम्पित करता है। यह प्रसिद्ध है कि कोई व्यक्ति बीमार तब पड़ता है जब उसके और उसके जन्म के साथ जुड़े हुए नक्षत्रों के बीच तारतम्य टूट जाता है। सूर्य और चन्द्र के बीच ही नक्षत्र है। चन्द्र नक्षत्राधिपति है अतः चन्द्र प्रतीक दूध का रुद्र पर अभिषेक करना श्रेष्ठ माना है। ज्वर रोग, पागलपन को शान्त करने व दीर्घायु हेतु लोग शिव पूजन करते हैं क्योंकि महाकाल, रुद्र काल के विजेता है और सर्वत्र शक्तिमान प्रलयंकर्ता दोनों ही रूप में हैं। कोमल हृदय होने से आशुतोष हैं। सहस्राक्ष सहस्रोंकिरणों वाले होने से सब के लिए सर्वत्र गतिमान हैं।

शिव पर बिल्वपत्र आदि उत्तम औषधियों के पत्र शिव में अग्नि-तत्व और तेजस बढ़ाते हैं। जलतत्व में आर्द्रता व अग्नि दोनों ही विद्यमान हैं। ऐसे तत्व पर पय की धारा करने में अमृत तत्व का उद्‌गम होता है। पय में ओज और औषधी तत्व का मिश्रण होता है जिसका आचमन भक्त की तेजस्विता को उद्दीप्त कर मन को पय रूप अमृत का पान कर शीतलता व सुख का अनुभव कर सन्तोषित होते हैं। भक्त को मुंह-मांगा वरदान मिल जाता है। "**औढ़र वरदान**" के रूप में शिव तो प्रसिद्ध है। यही कारण है कि सर्वत्र दुग्ध मिश्रित जलधारा ही शिव पर चढ़ाई जाती है। ऐसा करने से सूक्ष्म जगत में नक्षत्रों के मध्य टूटे हुए तारतम्य पुनः जुड़ जाते हैं।

*अभ्यास प्रश्न

१. रुद्र का निकटवर्ती मित्र व सहायक कौन से देवता है ?
२. वैदिक रुद्र का शस्त्र कौन सा है ?
३. रुद्र को **पशुपति** व **भेषज** क्यों कहा जाता है ?
४. रुद्र संहार व **युद्ध का देवता** है ? इसके प्रमाण में कोई दो वैदिक मन्त्र बताये ?
५. रुद्र को **'पंचतुण्ड़'** क्यों कहा जाता है ? इसके यजन हेतु वैदिक मन्त्र कौन से है ?
६. व्याकरणाचार्य पाणिनि ने शिवजी के कौन से चार प्राचोन नामों का उल्लेख अपनी व्याकरण में किया है ?
७. शिवजी के द्वादश ज्योतिर्लिङ्गों के नाम व स्थान बताइये ?
८. शिवजी के एक हजार ऐतिहासिक नामों का उल्लेख कहां-कहां पर मिलता है ?
९. रुद्र और क्षीर का क्या सम्बन्ध है ?
१०. रुद्राभिषेक "पुष्य नक्षत्र" को ही क्यों होता है ?
११. वैदिक **'रुद्र'** ने परवर्ती **'शिव'** का स्वरूप धारण कर लिया। इसके प्रमाण में कुल दस तर्क प्रस्तुत करे ?

अध्याय—३

रुद्राक्ष मीमांसा

रुद्राक्ष की उत्पत्ति—

आशुतोष रुद्ररूप भगवान् शङ्कर को प्रसन्न करने के लिये रुद्राक्ष का बड़ा भारी महत्त्व वेद-शास्त्र, इतिहास व पुराणों में बताया गया हैं। आईये इस विषय पर भी हमें कुछ चिन्तन-मनन एवं अध्ययन करना चाहिये।

हजारों वर्ष पूर्व एकबार कार्तिकस्वामी ने अपने पिता भगवान् शंकर से पूछा हे प्रभु! यह रुद्राक्ष क्या है? इसको धारण करना इस लोक और परलोक के विषय में श्रेष्ठ होना क्यों कर है? इसके कितने मुख है? और कौन से मन्त्र हैं? मनुष्य इसको किस प्रकार धारण करे? यह सब मुझे कृपा कर विस्तार पूर्वक समझाओं?

इस पर चन्द्रमौलीश्वर भगवान् शङ्कर बोले—

शंकर उवाच—**शृणु षण्मुख तत्त्वेन कथयामि समासतः।**
त्रिपुरो नाम दैत्येन्द्रः पूर्वमासीत्सुदुर्जयः॥

हे षड़ानन स्कन्दजी! तुम सुनो, पूर्वकाल में त्रिपुर-नामक एक महान् बलशाली व पराक्रमी दैत्यों का राजा हुआ था। जिसकों जीतने में देवता और दानवों में कोई समर्थ नहीं था। उसने अपने पराक्रम से सम्पूर्ण देवलोकों

को जीत लिया तब ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र, पन्नग इत्यादि सभी मिलकर मेरे पास आये और त्रिपुर दैत्य को मारने के लिये प्रार्थना की। तब मैंने त्रिपुरदैत्य को मारने का निश्चय किया तथा बिजली के समान चमकदार एवं दिव्य तेज युक्त कालाग्नि नामक अमोघ शस्त्र से इस दैत्य पर भीषण प्रहार किया। उस दिव्य शस्त्र की विस्फोटक चमक को नेत्र देखने में समर्थ नहीं थे फलतः कुछ कालान्तर तक विह्वलता और व्याकुलता से मेरे नेत्र बन्द रहे। लीलावश ही अपने दोनों नेत्रों को जब मैंने खोले, खोलते ही जल की कणिका नेत्रों से गिरती भई।

"तेनाश्रुबिन्दुभिर्जाता मर्त्ये रुद्राक्षभूरुहाः"

उसी नेत्र के जल से मनुष्यलोक में रुद्राक्ष के वृक्ष उत्पन्न हो गये। भक्तों पर अनुग्रह करने के लिये एवं संसार के कल्याण के लक्ष्य से मेरे ये अश्रुबिन्दु स्थावरत्व को प्राप्त हो गये। ये रुद्राक्ष मैंने विष्णु भक्तों को तथा चारों वर्णों के लोगों को बांट दिये। भूतल पर अपने प्रिय रुद्राक्षों को मैंने गौड़ देश में उत्पन्न किया। मथुरा, अयोध्या, लङ्का, मलयाचल (आसाम) सह्यगिरि (नेपाल) काशी तथा अन्य देशों में भी उनके अंकुर उगाये।

रुद्राक्ष की महिमा—

रुद्र के अक्ष से प्रकट होने के कारण "रुद्राक्ष" का साक्षात् शिव का लिङ्गात्मक स्वरूप ही माना गया है। रुद्राक्ष में एक विशिष्ट चैतन्य विद्युत शक्ति होती है। तथा यह पतितपावन रुद्राक्ष असह्य पाप समूहों को नष्ट करने वाला माना गया है। भिन्न-भिन्न रंगों वाले रुद्राक्ष में भिन्न-

भिन्न प्रकार की शक्ति होती है। **श्वेत रंग वाले** रुद्राक्ष में सात्विक आभा युक्त ब्रह्मतेजात्मक शक्ति होती है इसलिये ब्राह्मण वर्ग इस रुद्राक्ष को पहने। **रक्तवर्णीय** (ताम्रआभा वाले) रुद्राक्ष में राजस आभायुक्त शत्रुसंहारक शक्ति होती है इसलिये क्षत्रीयवर्ग इस रुद्राक्ष को धारण करे। **पीतवर्णीय** (काञ्चन आभा वाले) रुद्राक्ष में राजस व तामस युक्त द्रव्यप्रदात्मक शक्ति होती है इसलिये वैश्यवर्ण इस रुद्राक्ष को पहने। **कृष्णवर्णीय** रुद्राक्ष तामसिक आभा-युक्त सेवासमपर्णात्मक शक्ति होती है इसलिये शुद्र एवं निम्न वर्ण इसे धारण करे। यह वेदोक्त मार्ग हैं।

रुद्राक्ष के फल तीनों लोकों में विश्रुत है। इसको स्पर्श करने से लक्ष गुण तथा इसकी माला पहनने से करोड़ गुण फल प्राप्त होता है। इस माला पर जप करने से तो अनन्त कोटि फल की प्राप्ति होती हैं।

जैसे समस्त देवता और राक्षसों को शिवजी महाराज वन्दनीय है इसी प्रकार संसार के विषय में रुद्राक्ष धारण करने वाला व्यक्ति सर्वसांसारिक मनुष्यों में वन्दनीय अर्थात् पूजा करने योग्य है।

रुद्राक्ष धारण फलम्—

रुद्राक्षा यस्य गात्रेषु ललाटे च त्रिपुण्ड्रकम्।
स चाण्डालोऽपि सम्पूज्यः सर्ववर्णोत्तमो भवेत्॥

रुद्राक्ष जिसके शरीर पर हो और ललाट पर त्रिपुण्ड्र हो, वह चाण्डाल भी हो तो सब वर्णों में उत्तम पूजनीय है। अभक्त हो या भक्त हो, नीच हो या नीच से भी नीच हो, जो रुद्राक्षों को धारण करता है, वह सब पातकों से छूट

जाता है। जो नियम से सहस्त्ररुद्राक्ष धारण करता है उस को देवता भी नमन करते हैं, किंबहुना वह साक्षात् रुद्र के ही समान हैं।

उच्छिष्टो वा विकर्मो वा मुक्तो वा सर्वपातकैः।
मुच्यते सर्वपापेभ्यो रुद्राक्षस्पर्शनेन वै ॥

जो मनुष्य उच्छिष्ट अथवा अपवित्र रहते है अथवा बुरे कर्म करने वाले या अनेक प्रकार के पापों से युक्त है वे मनुष्य रुद्राक्ष स्पर्श करते ही सब पापों से छूट जाते है।

कण्ठे रुद्राक्षमादाय म्रियते यदि वा खरः।
सोऽपिरुद्रत्वमाप्नोति किं पुनर्भुवि मानवः ॥

कण्ठ में रुद्राक्ष धारण कर जो खर (गधा) भी मृत्यु को प्राप्त हो जाय तो वह भी रुद्र स्वरूप को प्राप्त होता है तो पृथ्वीलोक के विषय के जो मनुष्य है उनके बारे में तो कहना ही क्या !! अर्थात् सर्व सांसारिक मनुष्यों को स्वर्ग प्राप्ति व परलोक सुधारने हेतु रुद्राक्ष पहनने योग्य है।

रुद्राक्षं मस्तके धृत्वा शिरः स्नानं करोति मः।
गङ्गास्नानफलं तस्य जायते नात्र संशयः ॥

रुद्राक्ष को मस्तक पर धारण करके जो व्यक्ति शिर से स्नान करता है उसको गङ्गा स्नान के समान परमपवित्र स्नान का फल प्राप्त होता है तथा वह व्यक्ति समस्त पापों से मुक्त हो जाता है इसमें संशय नहीं।

विद्या प्रारम्भ करते समय, समस्त प्रकार के यज्ञ, तप एवं दान देते समय रुद्राक्ष यदि पास में हो तो उस कार्य का फल शीघ्र मिलता है।

इतना ही नहीं रुद्राक्ष मालाधारी पुरुष को देखकर, शिव, भगवान् विष्णु, देवी दुर्गा, गणेश, सूर्य तथा अन्य सभी प्रकार के देवी-देवता भी शीघ्र प्रसन्न हो जाते हैं। इस प्रकार से रुद्राक्ष की महिमा को जानकर, धर्म की वृद्धि के लिये जानकार लोग इसको विधि पूर्वक धारण करते हैं।

रुद्राक्ष का आधुनिक मूल्याङ्कन—

आध्यात्मिक और भौतिक विज्ञान दोनों के परीक्षणों से यह सिद्ध हो चुका है कि रुद्राक्ष के प्रत्येक दाने में एक विशेष प्रकार की चैतन्य शक्ति होती है। रुद्राक्ष पहनने से मानव मात्र को एक अद्भुत-दिव्य शान्ति, शीतलता एवं राहत की प्राप्ति होती है। इसको धारण करने से व्यक्ति को मानसिक तनाव से मुक्ति मिलती है। इस बारे में देश-विदेश में कई अनुसंधान और अन्वेषण हुये है और ९९ प्रतिशत मामले में उपरोक्त तथ्यों को सत्य पाया गया। यही कारण है कि आज देश-विदेश में सभी लोग इसे पहनते है जिससे रुद्राक्ष की कीमतों में आश्चर्यजनक रूप से वृद्धि हुई है।

एक बार नॉबल पुरस्कार विजेता फिजीसियन नैल्स-बोर्न के गले में रुद्राक्ष की माला देखकर उसके पादरी मित्र को हैरानी हुई, उसने पूछा "क्या तुम भी हिन्दू-अन्धविश्वास को मानने वाले व्यक्ति हो ? इस पर सर नैल्सबोर्न ने बड़ी विनम्रता के साथ उत्तर दिया—"मैं अन्धविश्वासी हूँ या नहीं यह बात अलग है!!! मैं रुद्राक्ष को मानता हूँ या नहीं ? इससे कोई फर्क नहीं पड़ता !!! सच तो यह है कि जब से मैंने इसको पहना है मुझे राहत व आराम हैं।

कुछ लोगों की यह भ्रामक धारणा है कि रुद्राक्ष शिव-भक्त ही पहनते है । वस्तुतः रुद्राक्ष जात-पात व धार्मिक मर्यादाओं की सीमा से परे एक विश्वप्रिय वस्तु बन चुकी है । इतना ही नहीं अनेक प्रकार के रोगों का शमन करने के लिये भी इसका प्रयोग होता है । ज्योतिष, आयुर्वेद, मन्त्र-शास्त्र और भौतिक विज्ञान भी रुद्राक्ष के गुणों की सराहना करते हुये नहीं अघाते ।

रक्तचाप एवं हृदय रोग पर नियन्त्रण—

रुद्राक्ष की माला को धारण करने से रक्तचाप में वृद्धि नहीं होती तथा हृदय-रोग के आक्रमण के समय यह रोगी की धड़कनों (Heart-beating) पर अद्भुत रीति से नियन्त्रण रखता है । इसलिये उच्च रक्तचाप व हृदय-रोग से पीड़ित व्यक्तियों के लिये भगवान् शंकर का यह आभूषण एक वरदान माना जाता है । वैद्यक ऋषियों का यह मत है कि इसको पहनने से मन को शान्ति मिलती है उसका मुख्य कारण यह है कि यह शरीर की गर्मी को अपने में खींचकर बाहर फेकता है ।

यदि रुद्राक्ष की भस्म को स्वर्णमाच्छिक भस्म के साथ बराबर की मात्रा में एक रत्ती सुबह-शाम हाई ब्लड़प्रेशर के रोगी को दूध या दही अथवा मलाई के साथ दिया जाय तो चमत्कारी प्रभाव दिखाता हैं ।

मसूरिका नाम दुर्दम्य रोग का नाश करने के लिये तीन दिन तक बासी जल के अनुपात से रुद्राक्ष एवं काली मिर्च समभाग एक मासे से तीन मासे तक सेवन कराने से मसूरिका रोग समूल नष्ट हो जाता हैं ।

बड़े रुद्राक्ष के दाने को घीसकर जहरीले घाव पर लगाने से घाव चमत्कारीक ढंग से ठीक हो जाता है।

रुद्राक्ष को मुनक्का एवं भंग के साथ सेवन करने से स्मरण शक्ति बढ़ती है तथा अनिद्रा एवं अपचन की शिकायत दूर होती है। भारत की प्रसिद्ध 'वैद्यनाथ' फार्मेसी ने रुद्राक्ष को लेकर **"मधुर मुनक्का"** नामक पुष्टिवर्धक औषध बटी का निर्माण किया है। श्वेतकुष्ट एवं मस्से के रोगोपशमन के लिये भी रुद्राक्ष के अनेक प्रयोग है। यदि विस्तृत से लिखा जाय तो **"रुद्राक्षकल्प"** नामक एक ग्रन्थ अलग से लिखा जा सकता है। संक्षेप में यही कहना पर्याप्त है कि धार्मिक मूल्याङ्कनों के अलावा भी रुद्राक्ष का अपना एक अलग अस्तित्व है जिसे नकारा नहीं जा सकता।

असली व नकली रुद्राक्ष की पहचान—

एक कहावत प्रसिद्ध है कि अनेक उपकरणों के होते हुये भी हीरे की परीक्षा तो जौहरी की नजर ही करती है यही बात रुद्राक्ष पर लागू होती है। असली रुद्राक्ष की परीक्षा तो जानकार व्यक्ति की नजर क्षण भर में कर जाती हैं। फिर भी बेईमान लोगों ने इस धार्मिक फल को भी ठगी के सांचे में ढाल दिया है। इसलिये सामान्य व्यक्ति को रुद्राक्ष खरीदते समय बहुत ही सतर्कता एवं सावधानी से काम लेना चाहिये।

सतर्कता के लिये कुछ आवश्यक निर्देशन जिसे हमेशा ध्यान में रखे—

१. अनजान व्यक्ति से कभी भी रुद्राक्ष न खरीदे।

२. भगवा वस्त्र पहनने हुये, तिलक त्रिपुण्ड़ लगाये हुये, घूमकक्ड़ साधुओं के द्वारा बहुत से श्रद्धालु लोग ठगे

जाते हैं, आये दिन ऐसे किस्से सुनते रहते है बड़ा दुःख होता है रुद्राक्ष की महिमा व बढ़ती हुई कीमत को देखते हुये ठगों ने साधुओं का वेष धारण कर लिया अतः ऐसे साधु रूपधारी फगड़ों से कभी रुद्राक्ष न खरीदे। ये लोग प्रायः धार्मिक क्षेत्र के होते है तथा अपने आपको नागा बाबा या जमात वाला बताते हैं यदि ये वास्तव में शिवभक्त होते तो रुद्राक्ष कभी भी नहीं बेचते।

३. देश-विदेश में नकली रुद्राक्ष बनाने की फैक्ट्रीयां लग चुकी है। कुछ बढ़ई कारीगर भी लकड़ी पर खोद कर नकली रुद्राक्ष तैयार कर देते है जो हूबहू असली सा दिखलाई पड़ता है। यह ठगी केवल एकमुखी रुद्राक्ष के लिये की जाती है। दिल्ली की फैक्ट्री में बने ये रुद्राक्ष नेपाल के व्यापारी खरीदते है। नेपाल रुद्राक्ष के उत्पादन हेतु प्रसिद्ध शहर हो चुका है अतः नेपाल यात्रा में जाने वाले व्यक्ति बिना किसी सन्देह के यह रुद्राक्ष दो हजार से पांच के मध्य खरीद कर भारत ले आते हैं और फिर पूजा में रख देते है व किसी को बताते भी नहीं। इस प्रकार भोला-भाला श्रद्धालु हिन्दू ठगा जाता है।

४. ऐसे ही कुछ रुद्राक्षों पर शिव लिङ्ग, चन्द्रमा व ॐकार की आकृतियाँ बनी हुई होती है। ये सभी प्रायः नकली होते है। असली रुद्राक्ष में ये आकृतियाँ एकदम स्पष्ट रूप से नहीं दिखलाई देती कल्पना करनी पड़ती हैं परन्तु नकली रुद्राक्ष में ये आकृतियाँ स्पष्टतः दिखाने

के लिये ही उभारी जाती है। समझदार व्यक्ति की तेज नजर ही ऐसी चालाकी को पकड़ सकती है।

५. कुछ धूर्त लोग बेर की गुठलियों की माला भी रुद्राक्ष कह कर बेच देते है। एक विशेष प्रकार के तेजाब में बेर की गुठलियों को रखा जाता है जिससे उनमें गढ्ढे से बन जाते है तथा उन पर भूरे रंग की पालिश कर दी जाती है परन्तु इन बेर की गुठलियों पर न तो धारियां ही होती है, न चमक और न ही मुद्राओं के चिह्न होते है। यो तो ऐसी नकली माला को सामान्य लोग भी शीघ्र ताड़ लेते है, तब भी विदेशी लोग एवं अन्य नासमझ, नादान व्यक्ति इस बेर की गुठलियों के चक्कर में आ जाते है।

६. कुछ चालाक व्यक्ति आडू के समान फल की गुठलियों को एक मुखी या दो मुखी रुद्राक्ष कह कर बेच देते है, परन्तु यह चपटी रहती है, गोल नहीं होती और ध्यान देने योग्य बात है कि रुद्राक्ष बीच में से उभरा हुआ एवं प्रायः गोल ही होता है।

असली रुद्राक्ष की पहचान—

इन सर्तकताओं को ध्यान में रखने के बाद आशा है कि प्रबुद्ध पाठक ठगे नहीं जा सकते फिर भी विद्वान् मनिषियों ने इसकी कुछ परीक्षा भी बताई है।

१. रुद्राक्ष वस्तुतः एक मध्यम आकार का पौधा होता है। यह बागों में भी लगाया जाता है इसके वृक्ष आजकल ज्यादातर नेपाल, आसाम व श्रीलंका में ज्यादा मात्रा में उपलब्ध है। इसके पत्ते तीन से छः इन्च लम्बे,

अण्ड़ाकार प्रासवत या आयताकार भी होते है। इस वृक्ष पर पुष्प भी उगते है जो कि श्वेत होते है। इसका फल पॉव इन्च से एक इन्च व्यास तक होता है इसी को रुद्राक्ष कहते है। अंग्रेजी भाषा में इसे Utrasum bead tree कहते है तथा लेटिन में Elaeocarpus ganitrus roxb के नाम से पुकारा जाता है।

२. अगर रुद्राक्ष असली है तो पानी में डूब जायेगा और लकड़ी का बना होगा या कीड़े का खाया होगा तो पानी पर तैरने लगेगा।

३. पक्के हुये रुद्राक्ष के दानों को मुठ्ठी में बन्द करके, कान के पास लेकर जोर से हिलायेगे तो बारीक-बारीक ध्वनी सुनाई देगी। यह ध्वनि पक्के हुये बड़े रुद्राक्ष के बीजों की होती है।

४. रुद्राक्ष के दानें में एक प्रकार की विद्युतोय शक्ति है, दो तांबों के सिक्कें बीच अगर रुद्राक्ष रखकर दबाया जायेगा तो एक झटका देकर घूम जायेगा।

५. रुद्राक्ष के दाने सभी गोल, खुरदरे और कठोर होते है। गौर से देखने पर ये छिली हुई नारंगी के समान प्रतीत होते है अर्थात् इनके ऊपर कुदरतन फांके बनी होती है तथा हर फांकों के बीच में एक धारी होती है। रुद्राक्ष के सभी दानों पर खुरदरापन, फांके और धारियां अवश्य पाई जाती है वही असली रुद्राक्ष कहा जाता है।

६. इन धारियों को विद्वान् लोग 'मुख' कहते है, जितनी धारियां होती है उतने ही 'मुख' वाला रुद्राक्ष कहा जाता है।

७. कुदरत ने रुद्राक्ष में एक विशेष प्रकार की अन्तर्गभित चमक डाल रखी है। यद्यपि रुद्राक्ष खुरदरा होता तथापि इसको बार-बार प्रयोग में लेने पर या ज्यादा माला फेरने पर इसमें एक विशेष प्रकार की चिकनाहट पूर्वक चमक उभर कर आती है जो नकली दानों व अन्य किसी प्रकार के फल, गुठली या बीज में नहीं आ सकती।

८. इसके अलावा कई-कई रुद्राक्ष के नेत्र भी होते है। जिस प्रकार नारियल के ऊपर नेत्र होना पाया जाता है वही स्थिति रुद्राक्ष की भी मानी गई है। यह नेत्र मुख के पास होते है त्रिनेत्र वाला रुद्राक्ष भगवान् शंकर का स्वरूप माना जाता है जो कि अनन्त सिद्धि को देने वाला कहा गया है।

९. ध्यान रहे रुद्राक्ष खुरदरा होता है परन्तु कांटेदार नहीं, कांटेदार सभी रुद्राक्ष नकली होते है।

१०. नकली बनाये गये रुद्राक्षों में खड्डों व उभार की दूरी लगभग समान अन्तर पर होती है जबकि असली रुद्राक्ष में उभार, गढ्ढों की दूरीयां व माप समान स्तर पर नहीं हो सकते।

११. आंवले के फल के बराबर का रुद्राक्ष समस्त अनिष्टों का नाश करने वाला व श्रेष्ठ माना गया है। गुंजा-फल के समान बहुत छोटा रुद्राक्ष सम्पूर्ण मनोरथों और फलों की सिद्धि देने वाला होता है। रुद्राक्ष जैसे-जैसे छोटा होता है वैसे ही वैसे अधिक फल देने वाला होता है। एक बड़े रुद्राक्ष से एक-एक छोटे रुद्राक्ष को विद्वानों ने दस गुना अधिक फल देने वाला बताया है।

१२. वृक्ष से उतारे गये ताजा रुद्राक्ष में छेद नहीं होता है। छेद बाद में बारीक ड्रिल से किये जाते है। जिस रुद्राक्ष में अपने आप ही डोरा पिराने योग्य छिद्र हो गया हो वह सबसे उत्तम कोटि का माना जाता है।

भिन्न-भिन्न रुद्राक्षों के नाम, महत्त्व एवं उपासना मन्त्र—

प्रत्येक रुद्राक्ष में अन्तर्गभित विद्युत तरंगे होती है तथा इन अन्तर्गभित विद्युत तरंग शक्ति का पता उसकी धारियों की संख्या के अनुसार चलता है। अलग-अलग मुख अलग-अलग परिणाम के देने वाले होते है तथा उनको एक विशिष्ट नाम से भी सम्बोधित किया जाता है। रुद्राक्ष सामान्यतः इक्कीस मुख तक पाये जाते है परन्तु पन्द्रह से इक्कीस मुख के दाने प्रायः दुलर्भ होते है। कुछ चालाक व्यक्ति दो रुद्राक्षों को काटकर सफाई से वापस जोड़ कर उनके कई मुख बना देते है इसी प्रकार से कई लोग "गौरी-शंकर" रुद्राक्ष भी बना डालते है। शास्त्रकारों ने चौदह मुख तक के रुद्राक्ष का ही वर्णन किया है। **शिवपुराण एवं रुद्राक्षजाबालोपनिषद्** रुद्राक्ष के फल महत्त्व एवं उपासना हेतु प्रमाणिक ग्रन्थ माने जाते है।

जिस प्रकार लक्ष्मीजी की मूर्ति स्थापित करने मात्र से लक्ष्मी प्रसन्न नहीं होती, उसके साथ प्राणप्रतिष्ठा, पूजा-अर्चना आवश्यक है। ठीक उसी प्रकार खाली रुद्राक्ष पहन लेने मात्र से सब प्रकार की सिद्धियां नहीं आती न ही व्यक्ति साक्षात् शिव हो जाता है यह तो अतिश्योक्ति पूर्ण शास्त्र वचन है। रुद्राक्ष को विधिवत प्राणप्रतिष्ठित करके पहनने, पूजा-अर्चना करने से व्यक्ति का पराक्रम शिवतुल्य जरुर हो जाता है इसमें कोई सन्देह नहीं। रुद्राक्षधारी पुरुष को

खान-पान व आचरण में पवित्रता रखनी चाहिये। आशुतोष चन्द्रमौलीश्वर भगवान् शङ्कर के प्रति दृढ़ भक्ति रखनी चाहिये तो उसके लिये संसार का कोई भी कार्य दुष्कर नहीं रह जाता। प्रत्येक मुखी रुद्राक्ष का महत्त्व अलग-अलग है तथा उनके प्राणप्रतिष्ठा के मन्त्र भी अलग-अलग है जो संक्षेप्त में यहां प्रस्तुत किये जा रहे हैं।

※ एक मुखी रुद्राक्ष—

शिव उवाच—

शृणु षण्मुख तत्त्वेन वक्त्रे वक्त्रे तथा फलम्।
एकवक्त्रः शिवः साक्षाद्ब्रह्महत्यां व्यपोहति ॥१॥

शिवजी स्वयं कार्तिकस्वामी से कह रहे है—हे षण्मुख! जौन-२ मुखी रुद्राक्ष जिस जिस फल को देने वाला है उसको ध्यान से सुनो! एक मुखी रुद्राक्ष साक्षात् मेरा ही स्वरूप है तथा यह ब्रह्महत्या व पाप को दूर करने वाला है।

एक मुखी रुद्राक्ष सर्वसिद्धि प्रदाता रुद्राक्ष कहा गया है। यह सात्विक शक्ति में वृद्धि करने वाला, मोक्ष प्रदाता रुद्राक्ष है। ऐसी मान्यता है कि जिसके घर में यह रुद्राक्ष होता है वहां लक्ष्मी का स्थाई वासा हो जाता है तथा उसका घर धन-धान्य, वैभव, प्रतिष्ठा और दैविक कृपा से भर जाता है। संक्षेप में यह धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष को देने वाला चतुर्वर्ग प्रदाता रुद्राक्ष है।

एक मुखी रुद्राक्ष धारण करने का मन्त्र—

ॐ एं हं औं ऐ ॐ[1]।

---

१. इस मन्त्र का देवता-शिव, ऋषि-प्रासाद, छंद-पंक्ति, बीज-हं, शक्ति-औं तथा कार्य-चतुर्वर्ग सिद्धि है।

***दोमुखी रुद्राक्ष—**

द्विवक्त्रो देवदेवेशो गोवधं नाशयेद्ध्रुवम् ।।२।।

द्विमुखी रुद्राक्ष साक्षात् देवदेवेश का स्वरूप है यह गो-वध करने के पापों से छुड़ाने वाला है। इसको धारण करने वाले व्यक्ति की अनेक व्याधियां स्वतः ही शान्त हो जाती है। यह रुद्राक्ष भी चतुर्वर्ग सिद्धि प्रदाता है।

द्विमुखी रुद्राक्ष धारण करने का मन्त्र—

ॐ क्ष्रीं ह्रीं क्ष्रौं व्रीं ॐ[२] ।

***तीनमुखी रुद्राक्ष—**

त्रिवक्त्रोग्निश्च विज्ञेयः स्त्रीहत्यां च व्यपोहति ।।३।।

त्रिमुखी रुद्राक्ष साक्षात् अग्नि का स्वरूप है यह स्त्री-हत्या इत्यादि घातक पाप को दूर करने वाला है। इसके पहनने से शीत ज्वर ठीक हो जाता है। मेष, सिंह व धनु लग्न में जन्म लेने वाले जातकों के लिये यह रुद्राक्ष सर्वाधिक उपयोगी है। इसके धारण करने से सभी प्रकार की तेजस्वी विद्याओं की प्राप्ति होती है। मन्दबुद्धि बालकों के लिये इसे धारण करना नितान्त आवश्यक है। मन्द रक्त-चाप के निराकरण हेतु इसे पहना जा सकता है। यह रुद्राक्ष भी चतुर्वर्ग सिद्धि प्रदाता है।

त्रिमुखी रुद्राक्ष धारण करने का मन्त्र—

ॐ रँ हूं ह्रीं हूं ओं[३] ।।

---

२. इस मन्त्र का देवता—देवदेवेश, ऋषि-अत्रि, छंद—गायत्री, बीज-क्ष्रीं, शक्ति-क्ष्रौं, कार्य—चतुर्वर्ग सिद्धि है।

३. इस मन्त्र का देवता—अग्नि, ऋषि—वसिष्ठज, छंद—गायत्री, बीज—ह्रीं, शक्ति—ह्रूं, कार्य—चतुर्वर्ग सिद्धि है।

***चारमुखी रुद्राक्ष—**

चतुर्वक्त्रः स्वयं ब्रह्मा नरहत्यां व्यपोहति ॥४॥

चतुर्मुखी रुद्राक्ष स्वयं ब्रह्मा है तथा यह नर हत्या इत्यादि जघन्य पाप को दूर करने वाला है। यह अभीष्ट सिद्धियों को देने वाला परमगुणकारी रुद्राक्ष है। अनुकूल विद्या को प्राप्त करने हेतु इससे सहायता मिलती तथा सद्गुरु की प्राप्ति होती है। इसको धारण करने से मन्द-बुद्धि वालों की भी बुद्धि कुशाग्र हो जाती है।

चतुर्मुखी रुद्राक्ष धारण करने का मन्त्र—

ॐ वां क्रां तां हां ई[४] ॥

***पांचमुखी रुद्राक्ष—**

पञ्चवक्त्रः स्वयं रुद्रः कालाग्निर्नाम नामतः ॥५॥

पञ्चमुखी रुद्राक्ष स्वयं कालाग्नि नामक रुद्र का स्वरूप है पर स्त्री गमन करने से जो पाप बनता है तथा अभक्ष्य भक्षण करने से जो पाप लगता है वह सब पञ्चमुखी रुद्राक्ष के धारण करने से नष्ट हो जाते है इसमें कोई संशय नहीं। यह पंचतत्वों का प्रतीक है। अनेक औषध कार्यों में इसका उपयोग होता है। यह सर्वकल्याणकारी, मंगलप्रदाता एवं आयुष्यवर्द्धक है। महामृत्युञ्जय इत्यादि अनुष्ठानों में इसका प्रयोग ही होता है यह अभीष्ट सिद्धि प्रदाता है। यह सर्वत्र सहज सुलभ होने के कारण इसका महत्त्व कुछ कम हो गया है परन्तु शास्त्रीय दृष्टि से इसका महत्त्व कम नहीं हैं।

---

४. इस मन्त्र का देवता-ब्रह्मा, ऋषि-भार्गव, छंद-अनुष्टुप्. बीज-वां, शक्ति-क्रां, कार्य-अभीष्ट सिद्धि है।

पञ्चमुखी रुद्राक्ष धारण करने का मन्त्र—

ॐ ह्रां आं क्ष्म्यौं स्वाहा[५] ।।

*छः मुखी रुद्राक्ष—

षड्वक्त्रः कार्त्तिकेयस्तु धारयेद्दक्षिणे भुजे ।
भ्रूणहत्यादिभिः पापैर्मुच्यते नात्र संशयः ।।६।।

षट्मुखी रुद्राक्ष स्वयं कार्त्तिकेय है उसको जो मनुष्य अपनी दक्षिण भुजा में धारण करते है । वे भ्रूणहत्या आदि से लेकर पापों से छूट जाते है इसमें कुछ संशय नहीं हैं । गुप्त शत्रु एवं प्रकट शत्रु नष्ट करने हेतु इस रुद्राक्ष का बड़ा भारी महत्त्व है । इसलिये कुछ विद्वान् इसे 'शत्रुञ्जय रुद्राक्ष' भी कहते है । यह भी सब प्रकार की अभीष्ट सिद्धि को देने वाला कहा गया है ।

षटमुखी रुद्राक्ष धारण करने का मन्त्र—

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं सौं ऐं[६] ।।

*सातमुखी रुद्राक्ष—

सप्तवक्त्रो महासेन अनन्तो नाम नामतः ।
स्वर्णस्तेयं गोवधञ्च कृत्वा पापशतानि च ।।७।।

हे महासेन ! सप्तमुखी रुद्राक्ष 'अनन्त' नाम करके विख्यात है । जिस मनुष्यों ने सोने की चोरी की है, गोवध किये है अथवा अनेक प्रकार के सैकड़ों पाप किये है उनको यह पवित्र बना देता है । यह रुद्राक्ष अभीष्ट सिद्धियों को देने वाला, पाप नाशक एवं भूमी प्रदाता है ।

---

५. इस मन्त्र का देवता–सदाशिवकालाग्निरुद्र, ऋषि–ब्रह्मा, छंद–गायत्री, बीज–ॐ, शक्ति–ह्रां, कार्य–अभीष्ट सिद्धि है ।

६. इस मन्त्र का देवता–कार्त्तिकेय, ऋषि, दक्षिणा मूर्त्ति. छन्द–पंक्ति बीज–ऐं, शक्ति–सों, कार्य–शत्रु कीलन व अभीष्ट सिद्धि है ।

सप्तमुखी रुद्राक्ष धारण करने का मन्त्र—

ॐ ह्ं क्रीं ह्रीं सौं[७] ।।

***आठमुखी रुद्राक्ष—**

अष्टवक्त्रो महासेन साक्षाद्देवो विनायकः ।।८।।

हे महासेन ! अष्टमुखी रुद्राक्ष साक्षात् गणेशजी का स्वरूप है तथा यह अष्टसिद्धि प्रदाता है। मानकूटादिक और परस्त्रीजन्य जो पाप है वो अष्टमुखी रुद्राक्ष धारण करने से उन मनुष्यों को नहीं लगते। यह दाना 'गणेश-रुद्राक्ष' के नाम से भी प्रसिद्ध है तथा गणेश विषयक अनुष्ठानों में शीघ्र लाभदायक होता है।

अष्टमुखी रुद्राक्ष धारण करने का मन्त्र—

ॐ ह्रां ग्रीं लं आं श्रीं[८] ।।

***नौमुखी रुद्राक्ष—**

नवमं भैरवंनाम कापिलं मुक्तिदं स्मृतम् ।
धारणाद्वामहस्ते तु मम तुल्यो भवेन्नरः ।।९।।

नवमुखी रुद्राक्ष का भैरव नाम है, कपिलवर्ण है जो मनुष्य अपनी वाम भुजा में इसको धारण करते है वह मेरे तुल्य हो जाते है। वस्तुतः 'भैरवनामक' नवमुखी रुद्राक्ष नव प्रकार की निधियों का प्रदाता है। यह नवदुर्गा, नवग्रह, नव-नाथों एवं नवधा भक्ति का प्रतीक है। यह सभी अभि-लषित अभीष्ट वस्तुओं का प्रदाता है। नवमुखी रुद्राक्ष लक्ष हजार करोड़ पापों का नाश करने वाला कहा गया है।

---

७. इस मन्त्र का देवता—अनन्त, ऋषि—भगवान्, छन्द—गायत्री, वीज—क्रीं, शक्ति—ह्रीं, कार्य—यह ऐश्वर्य सिद्धिदायक है।

८. इस मन्त्र का देवता—विनायक, ऋषि—भार्गव, छन्द—अनुष्टुप, वीज—ग्रीं, शक्ति—आं, कार्य—चतुर्वर्गसिद्धि।

नवमुखी रुद्राक्ष धारण करने का मन्त्र—

ॐ ह्रीं वँ यँ रँ लँ[९] ॥

*दशमुखी रुद्राक्ष—

दश वक्त्रो महासेन साक्षाद्देवो जनार्दनः ॥१०॥

हे महासेन ! दशमुखी रुद्राक्ष साक्षात् जनार्दन अर्थात् विष्णु का स्वरूप है । दशमुखी रुद्राक्ष के धारण करने से मनुष्य के सर्व ग्रह शांत रहते है और पिशाच, वेताल, ब्रह्म-राक्षस, सर्प इत्यादि का भय नहीं होता । ऐसी मान्यता है कि भगवान् विष्णु के दसों अवतारों की शक्ति इसमें सन्नि-हित होती है । यह रुद्राक्ष सभी प्रकार की बाधाओं का नाश कर, सुख, शान्ति व समृद्धि का प्रदाता है ।

दशमुखी रुद्राक्ष धारण करने का मन्त्र—

ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं व्रीं ओम्[१०] ॥

*ग्यारहमुखी रुद्राक्ष—

एकादशास्यो रुद्रो हि रुद्राश्चैकादश स्मृताः ।
शिखायां धारयेन्नित्यं तस्य पुण्यफलं शृणु ॥११॥

हे स्कन्द ! एकादशमुखी रुद्राक्ष एकादश रुद्रों का ही स्वरूप है । इस रुद्राक्ष को साक्षात् शिव का प्रसाद समझ कर जो व्यक्ति मस्तक में धारण करके या शिखा स्थान में बांध कर रखते है उनको हजार अश्वमेध-यज्ञ करने का फल, सौ वाजपेय-यज्ञ करने का फल और चन्द्र ग्रहण में

---

९. इस मन्त्र का देवता-भैरव, ऋषि-नारद, छन्द-गायत्री, बीज-वँ, शक्ति-ह्रीं, कार्य अभीष्ट सिद्धि ।

१०. इस मन्त्र का देवता-जनार्दन, ऋषि-नारद, छन्द-अनुष्टुप, बीज-श्रीं, शक्ति-ह्रीं, कार्य-अभीष्टसिद्धि ।

दान करने से जो फल प्राप्त होता है वह फल इस रुद्राक्ष को विधिवत् पूजन कर धारण करने से होता है।

एकादशमुखी रुद्राक्ष धारण करने का मन्त्र—

ॐ रूं मूं यूं औं[११] ।।

***बारहमुखी रुद्राक्ष—**

नश्यन्ति तानि पापानि वक्त्रद्वादशधारणात् ।
आदित्याश्चैव ते सर्वे द्वादशैव व्यवस्थिताः ।।१२।।

द्वादशमुखी रुद्राक्ष के धारण करने से उन मनुष्यों के पाप नाश को प्राप्त हो जाते हैं क्योंकि सूर्य आदि से लेकर सम्पूर्ण आदित्य द्वादशमुखी रुद्राक्ष में वास करते है। इसलिये उन मनुष्यों को चोर, अग्नि का भय तथा अनेक प्रकार की व्याधि नहीं होती और वे अर्थवान् होते है यदि दरिद्रो भी हों तब भी भाग्यवान् हो जाते है। हाथी, घोडा, हरिण, बिलाव, भैंसा, शूकर, कुत्ता, शृंगाल (सियार) अर्थात् दाढ़ वाले सभी प्रकार के पशु वगैरा उन मनुष्यों को बाधा नहीं पहुंचा सकते। इस रुद्राक्ष को दांतों की संख्या के बराबर अर्थात् (३२) की माला कण्ठ में धारण करने पर उन मनुष्यों का गो-वध, मनुष्य हत्या एवं चोर कार्य का पाप नष्ट हो जाता है। यह सब प्रकार के बाधाओं का कीलन करने वाला दाना 'आदित्यरुद्राक्ष' नाम से प्रसिद्ध जाना जाता है।

---

११. इस मन्त्र का देवता—रुद्र, ऋषि—कश्यप, छन्दः—अनुष्टुप्, बीज—रूं, शक्ति—क्षूं तथा कार्य—अभीष्ट सिद्धि।

द्वादशमुखी रुद्राक्ष धारण मन्त्र—

ॐ ह्रीं क्षौं घृणिः श्रीं[१२] ॥

***तेरहमुखी रुद्राक्ष—**

त्रयोदशास्यो रुद्राक्षो साक्षाद्देवः पुरन्दरः ॥१३॥

हे वत्स ! त्रयोदशमुखी रुद्राक्ष साक्षात् इन्द्र का स्वरूप है । जो मनुष्य त्रयोदशमुखी रुद्राक्ष को धारण करते है उनकी सम्पूर्ण मनोकामना सिद्ध होती है तथा वे अतुल सम्पत्ति के मालिक होते हुये भाग्यवान् होते है । इसको धारण करने वाला व्यक्ति सम्पूर्ण धातुओं की रसायनादिक सिद्धि का ज्ञाता हो जाता हैं । यह रुद्राक्ष समस्त प्रकार की शक्ति सिद्धियों को देने वाला हैं ।

त्रयोदशमुखी रुद्राक्ष का मन्त्र—

ॐ ईं यां आप ओम्[१३] ॥

***चौदहमुखी रुद्राक्ष—**

चतुर्दशास्यो रुद्राक्षो साक्षाद्देवो हनूमतः ।
धारयेन्मूर्ध्नि यो नित्यं स याति परमं पदम् ॥१४॥

चतुर्दशमुखी रुद्राक्ष हनुमान का स्वरूप है जो मनुष्य नित्य प्रति अपने मस्तक पर धारण करते है वो परम पद को प्राप्त होते हैं । इस रुद्राक्ष के पहनने से शनि इत्यादिक दोष की शान्ति होतो है तथा दुष्टजनों का नाश

---

१२. इस मन्त्र का देवता-सूर्य, ऋषि–भार्गव, छन्दः–विश्वेश्वरो, बीज–ह्री, शक्ति–श्रीं कार्य–कीलन प्रयोग ।

१३. इस मन्त्र का देवता–इन्द्र, ऋषि–ब्रह्मा, छन्दः–पंक्ति, बीज--ई, शक्ति–आप, कार्य–शाक्त-शक्ति की सिद्धि हैं ।

होता है। यह '**हनुमान रुद्राक्ष**' नाम से प्रसिद्ध है तथा सकल अभीष्ट सिद्धियों का दाता है।

चतुर्दशमुखी रुद्राक्ष धारण करने का मन्त्र—

ॐ औं स्फे खफ्रैं हस्त्रौ हसफ्रैः[१४] ॥

जो मनुष्य पृथ्वी पर रुद्राक्ष को मन्त्र सहित धारण करते है वे रुद्रलोक में जाकर वास करते है तथा जो मन्त्र रहित रुद्राक्ष धारण करते है वे घोर नरक के भागी होते है।

ॐअभ्यास प्रश्न

१. रुद्राक्ष की उत्पत्ति कैसे हुई ? तथा इसको धारण करने से क्या लाभ है ?
२. असली व नकली रुद्राक्ष की पहचान के कोई दस भेद बतावे ?
३. एक मुखी रुद्राक्ष पहनने से क्या लाभ है ?
४. शत्रुञ्जय रुद्राक्ष किसे कहते है ?
५. गणेश रुद्राक्ष कौन-सा है ? उसकी क्या परीक्षा है ?
६. भैरव रुद्राक्ष व हनुमान रुद्राक्ष में क्या अन्तर है ? इनकी उपासना कौन से मन्त्रों से होती है।
७. सूर्य एवं विष्णु का रुद्राक्ष कौन-सा है ? इन रुद्राक्षों के ऋषि, देवता व छन्द कौन-कौन से हैं ?
८. शास्त्रों में रुद्राक्ष धारण करने की संख्या क्या बताई है ? यदि मन्त्ररहित रुद्राक्ष पहने तो क्या होता है ?

---

१४. इस मन्त्र का देवता—हनुमान, ऋषि—रामचन्द्र, छन्दः—जगती, बीज—औं, शक्ति—हस्फ्रैं, कार्य—सकल अभीष्ट सिद्धि।

अध्याय—४

अथ माला संस्कार विधानम्

*** माला संस्कार विधान—**

नौ पीपल के पत्तों को कमल के आकार में स्थापना करें उसके मध्य मूल-मन्त्र और मातृका के अक्षर यथा ॐ ह्रीं से लं क्षँ तक का उच्चारण करते हुए माला को रक्खें। फिर उसे पंचगव्य (गाय का घी, दूध, मूत्र, दही, गोबर) से तथा ताजे पवित्र जल एवं गंगाजल आदि पवित्र जल से धोवें। फिर चन्दन, अगर, कपूर आदि सुगन्धित द्रव्यों से "**वामदेवाय नमो॰**" मन्त्र से घर्षित करें। फिर "**अघोरेभ्यो॰**" अघोर मन्त्र से उसे धूपित करें। फिर "**तत्पुरुषाय॰**" गायत्री मन्त्र से उस पर चन्दन का लेप करें। फिर "**ईशान सर्वं॰**" इस मन्त्र से माला के प्रत्येक मिनके को अभिमन्त्रित करें। फिर उसमें देवता का आह्वान कर यथा मिलित द्रव्य से माला के मुख्यदेव का पूजन करें। उसकी प्राण प्रतिष्ठा करें। फिर मूल मन्त्र से माला का पूजन करें। ऐसी शुद्ध की हुई माला को जप कर्म में हमेशा काम लेवें तब वह माला सारे पापों को दूर करके अभीष्ट फल देने वाली होती है। मध्यमा और अनामिका के मध्य माला को चलाते हुये जप करें यही जप का क्रम है।

*** अथ माला संस्कार प्रयोगः—**

(तत्रादौ कुशोदकसहितैः पञ्चगव्यैर्मालां प्रक्षाल्य, अश्वत्थपत्रनवकै रचिते कमले स्थापयित्वा) 'ॐ ह्रीं अँ आँ इँ ईं उँ ऊँ ऋँ ॠँ लृँ ॡँ एँ ऐं ओं औं अँ अः कँ खँ गँ घँ ङँ

चँ छँ जँ झँ ञँ टँ ठँ डँ ढँ णँ तँ थँ दँ धँ नँ पँ फँ बँ भँ मँ यँ रँ लँ वँ शँ षँ सँ हँ ळँ क्षँ (इत्येतानि मातृकाक्षराणि, मूलमन्त्र च मालायां विन्यस्यपनः पंश्चगव्येन प्रोक्ष्य) ॐ सद्यो जातं प्रपद्यामि सद्योजाताय वै नमोनमः ।। भवेभवे नातिभवे भवस्व मां भवोद्भवाय नमः ।।१।। (इति मन्त्रेण शीतल जलेन मालांप्रक्षालयेत्) ।। ॐ वामदेवाय नमो ज्येष्ठाय नमः, श्श्रेष्ठाय नमो रुद्राय नमःकालाय नमः ।। कलविकरणाय नमो बलविकरणाय नमो बलाय नमो बलप्रमथनाय नमःसर्वभूतदमनाय नमो मनोन्मनाय नमः।।२।। (इति मन्त्रेण चन्दनागुरुकर्पूरादिसुगन्धद्रव्यैर्धर्षयेत्) ॐ अघोरेभ्योथघोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः।। सर्वेभ्यःसर्वशर्वेभ्यो नमस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः।।३।। (इति मन्त्रेण तां धूपयेत्) ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि । तन्नो रुद्रः प्रचोदयात् ।४।। (इति मन्त्रेण मालां चन्दनेन लेपयेत्) ॐ ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानाम् । ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोधिपतिर्ब्रह्मा शिवो मे अस्तु सदाशिवोम् ।।८।। (इति मत्रेण मेरुसहितं प्रत्येकमणिं सकृत्सकृदेवाभिमंत्रयेत् प्राणप्रतिष्ठां च कुर्यात्) तद्यथा—अस्य श्री प्राणप्रतिष्ठा मन्त्रस्य ब्रह्मविष्णुमहेश्वरा ऋषयः ऋग्यजुः सामानिच्छन्दांसि क्रियामयवपुः प्राणाख्या देवता । ॐ आं बीजं, ह्रीं शक्तिः, क्रौं कीलकम्, अस्यां मालायां प्राणप्रतिष्ठापने विनियोगः ।। ॐ आँ ह्रीं क्रौं यँ रँ लँ वँ शँ षँ सँ हँ ळँ क्षँ अः क्रौं ह्रीं आं हसः सोहं अस्यां मालायां प्राण इह प्राणास्तिष्ठन्तु (इति त्रिवारं पठेत् । एवं प्राणप्रतिष्ठां कृत्वा । पुष्पाक्षतान् निःक्षिप्य पंचदश प्रणवावृत्तीः कृत्वा प्राणशक्तिं ध्यायेत्) ।।

*** ध्यानम्**

रक्ताम्भोधिस्थपोतोल्लसदरुणसरोजाधिरूढा कराब्जैः,
पाशं कोदण्डमिक्षूद्भवमथ गुणमप्यङ्कुशं पञ्चबाणान् ।।
बिभ्राणासृक्कपालं त्रिनयनलसिता पीनवक्षोरुहाढ्या,
देवी बालार्कवर्णा भवतु सुखकरी प्राणशक्तिः परा नः ।।

(इति ध्यात्वा, मूलेन सम्पूज्य) ॐ ह्रीं माले माले महामाये सर्वशक्तिस्वरूपिणि । चतुर्वर्गस्त्वयि न्यस्तस्तस्मान्मे सिद्धिदा भव ।। अविघ्नं कुरु माले त्वं सर्वकार्येषु सर्वदा ।। (इति मालामादाय स्वेष्टदेवतां ध्यात्वा, हृदये धारयन् मन्त्रार्थस्मरन्, प्रातःकालमारभ्य माध्यन्दिनावधि जपेत्) जपान्ते प्रार्थना :—

ॐ त्वं माले सर्वदेवानां प्रीतिदा शुभदा भव । शिवं कुरूष्व मे भद्रे यशो वीर्यं च सर्वदा ।। तेन सत्येन सिद्धि मे देहि मातर्नमोऽस्तु ते । ॐ ह्रीं सिद्धयै नमः" (इति मालां प्रार्थ्य) शिरसि निधाय प्रणानायम्य, गोमुखी रहसि स्थापयेत् । एवं संस्कृतां मालां न कस्यापि दर्शयेत् । नान्यं दद्यात् । नाशुचि स्पर्शयेत् । अशुचिस्थाने न निधापयेत् । स्वयोनिवद्गुप्तां कुर्यात् । नित्यं समानो जपः कार्यः, नतु न्यूनाधिकः । जपनिवेदनम्-गुह्यातिगुह्यगोप्ता त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम् । सिद्धिर्भवतु मे देव त्वत्प्रसादात्त्वयि स्थितिः ।। इति देवदक्षिण करे जपसमर्पणजलं दद्यात् ।।

अप्रतिष्ठितमालाभिर्मन्त्रं जपति यो नरः ।
सर्वंतद्विफलं विद्यात्क्रुद्धा भवति देवता ।।

—(रुद्रायामले)

*इति मालासंस्कारप्रयोगः समाप्तः ।।

अध्याय—५

पूजन मीमांसा

पूजनम् (पूज्+ल्युट्) का सीधा-सादा अर्थ सम्मान करना, सादर स्वागत करना, आराधना करना, अर्चना करना, पूजा करना, आदर पूर्वक भेंट चढ़ाना है। सगुणोपासना में देव पूजन का बड़ा भारी महत्व है। प्राचीन वैदिक काल से ही अग्नि, सूर्य, वरुण, रुद्र, इन्द्र इत्यादि देवताओं एवं दिव्य शक्तियों का पूजन होता रहा है। तथा इनसे प्राप्त चमत्कारिक उपलब्धियों से इतिहास भरा पड़ा है। पुरातन परम्परा से ही हमें देवार्चन की दो विधियां प्राप्त होती हैं। (१) याग और (२) पूजा।

१. अग्निहोत्र द्वारा अर्चन करना याग अथवा यज्ञ है। यह अनेक लोगों के सहयोग से होता है। इसमें मन्त्रों व परम्पराओं का विशिष्ट क्रम रहता है। ये याग सकाम व निष्काम भेद से कई प्रकार के होते हैं तथा इनकी अनुष्ठेय क्रिया भी अलग-अलग प्रकार की होती है।

२. किन्हीं निश्चित द्रव्यों के साथ देवताओं के अर्चन को पूजा कहते हैं। पत्र, पुष्प, जल द्वारा अर्चन करना ही पूजा है। उस पूजा के द्वारा मनुष्य अपने आराध्य देव को प्रसन्न कर अभिलक्षित वर मांगता है। पंचोपचार

से लेकर सर्वाङ्ग उपचार तक इन पूजाओं के कई विधान है।

(१) वैदिक परिपाटी (२) पौराणिक परिपाटी के अन्तर्गत इन पूजाओं के मन्त्रों में भेद रहता है।

जो यज्ञोपवीतधारी द्विज हो, वे वैदिक मन्त्रों तथा पौराणिक मन्त्रों से अपने आराध्य (इष्ट) की पूजा कर सकते हैं। जिनके यज्ञोपवीत न हो, वे वैदिक मन्त्रों का उच्चारण न करके केवल पौराणिक मन्त्रों द्वारा पूजन सम्पन्न कर सकते हैं। साधकों की सुविधा के लिये हम यहां पर सर्वमान्य सर्वोपचार पूजन पद्धति दे रहे हैं जिसके द्वारा साधक किसी भी देवता की पौराणिक व वैदिक पद्धति से पूजन कर सकता है।

*** पूजा-विधान के भेद—**

१. **पंचोपचार पूजा**—गंधाक्षत, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य इन पांच प्रकार की सामग्री व विधि के द्वारा की जाने वाली पूजा पंचोपचार पूजा कहलाती हैं।

२. **दसोपचार पूजा**—(१)पाद्य (२)अर्घ्य (३)आचमन (४) स्नान (५) वस्त्र (६) गंध, अक्षत (७) पुष्प (८) धूप (९) दीप (१०) नैवेद्य इन उपचारों से की गई पूजा दसोपचार पूजा कहलाती हैं।

३. **षोडशोपचार पूजा**—(१)ध्यान, आवाहन (२)आसन (३) पाद्य (४) अर्घ्य (५) आचमन (६) स्नान दूध, दही आदि से (अभिषेक स्नान) (७) वस्त्र (८) यज्ञोपवीत आभूषण इत्यादि (९) गंध (चंदन, अबीर, गुलाल, अक्षत वगैरह) (१०) पुष्प-पत्र (अंग

पूजा अर्चना इत्यादि) (११) धूप (दशांग इत्यादि) (१२) दीप (१३) नैवेद्य (फल, प्रसाद व सूखा-मेवा इत्यादि) (१४) ताम्बूल, दक्षिणा, नीराजन, जल-आरती वगैरा (१५) पुष्पाजंलि (१६) प्रदक्षिणा नमस्कार स्तुति आदि ।

४. **राजोपचार पूजा**—षोडशोपचार के अतिरिक्त छत्र, चामर, पादुकादि एवं रत्नों से विविध सामग्री व सज्जा से की गई पूजा राजोपचार पूजन कहलाता है ।

*** पूर्व पूजन निषेध—**

शंख के जल से सूर्य को अर्घ्य न देवें । किन्तु सूर्य को अर्घ्य दिये बिना शंकर या विष्णु का पूजन न करें । क्योंकि सूर्य, चन्द्र, यम, काल और पञ्च महाभूत ये नौ शुभाऽशुभ कर्म के साक्षी माने गये हैं । सारे देव मेरे शरीर में रहकर मेरे मन्त्र के साक्षो हैं । अतः हे देवो ! मेरे पूर्व जन्म में अर्जित जो भी विद्या है वह मुझे प्रदान करो ।

(—गन्धर्व तन्त्र)

*** पूजन में वर्ज्य पदार्थ—**

बासी जल, पत्ते, पुष्प, फल ये सभी पूजा में वर्जित है । केवल गंगाजल, तुलसीपत्र, बिल्वपत्र और कमल वर्जित नहीं है ।

बासी (पर्युसित) पुष्प चाहे सोने के भी हो उससे देवी की पूजा न करें । बिल्वपत्र व मंहगे पुष्प, आंवले के पत्ते, तमाल के पत्ते, कल्हार के पत्ते, तुलसी के पत्ते, कमल, मणियों के पुष्प या जिन पुष्पों की कलियां हैं वे पुष्प कभी बासी नहीं होते । कमल और आंवले के पुष्प ३ दिन तक

शुद्ध रहते हैं। करवीर के पुष्प १ दिन, सफेद व रक्त कमल के पुष्प ५ दिन तक बासी नहीं होते।

पंकजं पंचरात्रं स्याद्दशरात्रं च बिल्वकम्।
एकादशाहं तुलसी नैव पर्युसिता भवेत्॥

कमल ५ रात, बिल्व दसरात तुलसी ११ रात तक बासी नहीं होती।

सड़े, गले, कटे हुए असुगन्धित पुष्प पूजा में वर्ज्य है।

नाक्षतैरचयेत् द्विष्णुं न तुलस्या गणाधिपम्।
न दूर्वया यजेद्देवी, व्रिल्वपत्रैश्च भास्करम्॥

विष्णु का पूजन चावलों से, गणपति का तुलसी से, देवी का दुर्वा से, और सूर्य का बिल्वपत्र से पूजन कभी न करे।

*** घर में देव-पूजन व लिङ्ग-पूजन विचार—**

रत्न, सुवर्ण-चांदी, पीतल व तांबे तथा लोहे लकड़ी व मिट्टी की प्रतिमाएँ घरों में पूजी जा सकती है। इनमें महर्घ श्रेष्ठ कहलाती है व अन्य घटिया (भा० पु० ११।२७।१२) शिव पूजा में नर्मदा का बाण-लिङ्ग विशेष महत्व का है। मत्स्य पुराणानुसार घर में पूजनार्थ प्रयुक्त मूर्तियां अंगूठे के आकार से १२ अंगुल तक हो सकती है और १६ अंगुल से अधिक नहीं होनी चाहिए। स्मृत्यन्तरों में वर्णित है— **"एका मूर्ति र्न पूज्यैव गृहिणा स्वेष्टमिच्छता अनेक मूर्ति-सम्पन्नः सर्वान्कामावाप्नुयात्॥ गृहेलिङ्गद्वयंनाच्र्यं गणेश-भित्रयतथा, शंखद्वयं तथा सूर्योनाच्यौं शक्तित्रयंतथा। द्वे चक्रे द्वारकायाश्च शालिग्राम शिलाद्वयम् तेषातु पूजनेनैव उद्वेगं प्राप्नुयाद्गृही॥ रर्विविनायक श्चण्डी ईशो विष्णुस्त-थैवच अनुक्रमेण पूज्यन्ते व्युत्क्रमेतुमहद्भयम्॥**

अकेली मूर्ति की पूजा नहीं करना चाहिए साथ में अनेक मूर्तियां होना आवश्यक है ।

घर में दो लिङ्ग नहीं होने चाहिए तीन व अधिक हो सकते हैं । इसी तरह गणेश की मूर्तियां ३ नहीं होनी चाहिए । दो शंख दो सूर्य, तीन देवी की मूर्तियां, २ चक्र, दो शालीग्राम की शिलाएं घर में नहीं पूजना चाहिए । इनसे कम या अधिक संख्या श्रेष्ठ है । ऐसा न होने पर पूजन से उद्वेग प्राप्त होता है । सर्व पूजनों में सर्व प्रथम सूर्य को अर्घ्यादि से पूजितकर गणपति का पूजन करें फिर अम्बिका का उसके बाद महादेव का तब विष्णु का पूजन करें यही क्रम प्रशस्त है । इसमें व्युत्क्रम होने पर भय उपस्थित होता है ।

*** अतिप्रिय पुष्प—**

शङ्कर को बिल्वपत्र, विष्णु को तुलसी, गणेश को दुर्वा, सूर्य को कणेर (करवीर) और देवी को नाना प्रकार के सुगन्धित पुष्प अतिप्रिय होते हैं ।

*** शिव पंचायतन—**

आदित्यं गणनाथं च देवी रुद्रं च केशवम् ।
पञ्चदैवत्य मित्युक्त सर्व कर्मसु पूजयेत् ।। (वाचस्पति)
यदातु शंकरं मध्ये ऐशान्यां श्रीपतियजेत्
आग्नेयां च तथा हंसं नैऋत्यां पार्वतीसुतम्
वायव्यां च तथा पूज्या भवानी भक्तवत्सल ।

(श० ना० र० ग० दे०)

रुद्र जप करते वक्त शिव पंचायतन की पूजा करना श्रौतकर्म समान है । शिव पंचायतन मध्य में शंकर, ईशान में विष्णु,अग्निकोण में सूर्य,नैऋत्य में गणपति और वायव्य-कोण में पार्वती का पूजन कहा गया है । वोपदेव व अन्य

ऋषियों का मत है कि स्थान व्यतिक्रम से देवपूजा की जायेगी तो वह पूजन हानिप्रद होगा। "स्वस्थान वर्जिताः देवाः शोक दुःख भयप्रदाः ॥" यह पंचायत पूजन आद्य-शंकराचार्य द्वारा प्रतिपादित है।

※ सदा शिव पार्श्वकाः

बाण रावण चण्डीशनन्दी भृंगीरिषादयः।
सदा शिवप्रसादं ते सर्वे गृह्णन्तुशांभवाः॥
अन्यच्च-बाण रावण चण्डश्च नन्दी भृंगी रिषादयः॥

बाण, रावण, चण्ड, नन्दी, भृंगी आदि शिवपार्षदों की पूजा या स्मरण भी रुद्र जप का एक अंग है।

※ शिव के लिङ्ग वा बाण पर आवाहन निषेध—

बाणलिंगानि राजेन्द्र ख्यातानि भुवनत्रये
न प्रतिष्ठा न संस्कारस्तेषा चावाहनंतथा। (भविष्य पु०)
कम्बुश्चक्रं शैलभवा नार्मदेयाऽब्जिजनीयनी।
बाणो विष्णु शिला चैषां प्रतिष्ठां नैवकारयेत्।
(भरत माला मार्कण्डयउक्तिः)

शैली दारुमयीं हैनीं धात्वाद्याकारसम्भवाम्
प्रतिष्ठां वै प्रकुर्वीत प्रासादे वा गृहेनृप॥
(बृहदपाराशरः नाममालाया)

भविष्य पुराण, भरतमाला व नाममाला के मतानुसार शिव के बाणलिंग, घरों में पूजनार्थ प्रयुक्त लिंगों की प्रतिष्ठा व उनके आवाहनों की आवश्यकता नहीं है। केवल मन्दिरों में स्थिर-लिंगों की ही प्रतिष्ठा की जाती है।

※ षोडशाङ्ग व दशाङ्ग धूप—

अगर, तगर, कुष्ठ, शैलज, शर्करा, नागरमोथा, चन्दन, इलायची, तज, नखनखी, मुशीरं, जटामांसी, कर्पूर, ताली-

सदल, कर्पूर, गुग्गलः ये सोलह प्रकार के धूप माने गये हैं जो कि देवता एवं पितृ-कार्यों में प्रशस्त है इसे षोडशाङ्ग धूप[१] कहते हैं।

अन्य मत के अनुसार चन्दन, कुष्ठ, नखला, राल तथा गुड़, शर्करा, नखगन्ध, जटामांसी, लघु, क्षौद्र सबको सम-भाग में मिश्रित कर जलाने से उत्तम धूप बनती है। इसको दशाङ्ग धूप[२] कहते हैं।

मदनरत्न के अनुसार छः भाग कुष्ठ, दो भाग गुड, तीन भाग लाक्षा.पांचवा भाग नखला, हरीतकी, राल समान अंश में, दर्प एक भाग, शिलाजय तीन लव जितना, नागर-मोथा चार भाग, गुग्गल एक भाग लेने से अतिउत्तम दशांङ्ग धूप तैयार हो जाता है[३]।

रुहिकाख्य, कण, दारुसिह्लक, अगर, सित, शंख, जातीफल, श्रीश ये धूप भी श्रेष्ठ माने जाते है।

---

१. अगुरुतगुरुकुष्ठं शैलजं शर्करा स्यादुभयघन पुरस्ताच्चन्दनैला श्च साक्षात्।
त्वच नरवर मुशीरं मांसि कर्पूरतालीसदलजलकचोरं जाति-युग्धूपराजः॥ —तन्त्रसार

२. चन्दनोभयकुष्ठं च नरवसर्जकचोरकः।
एतत् गुडसमानेन धूप भवति चोत्तमम्।
शर्करा नखगन्धं च जटामांसी लघुः समम्।
क्षौद्रेण सहसंमिश्रं धूपं भवति चोत्तमम्॥

३. षड्भागकुष्ठं द्विगुणो गुडश्च लाक्षात्रयं पञ्चनखस्य भागाः॥
हरीतकीसर्जरसं समांशं दर्पैक भागं त्रिलवं शिलाजम्।
घनस्य चत्वारि पुरस्य चैको धूपो दशाङ्ग कथितो मुनीन्द्रैः॥
—मदनरत्न

*** अष्टगन्ध प्रकरण—**

कर्मकाण्ड एवं यन्त्र लेखन में अष्टगन्ध के प्रयोग का सर्वत्र उल्लेख मिलता है, परन्तु अष्टगन्ध किसे कहते हैं ? यह कितने प्रकार की होती है ? तथा कौन-सी अष्टगन्ध कहां काम लेनी है इसका विस्तृत विवेचन प्रायः कहीं नहीं देखा गया।

शारदा तिलक के अनुसार (१) चन्दन (२) अगुरु (३) कर्पूर (४)तमाल (५)जल (६) कंकु (७) कुशीत (८) कुष्ठ इन आठ पदार्थों को अष्टगन्ध में लिया गया है परन्तु यह अष्टगन्ध शैव सम्प्रदायों को ही प्रिय है।[१]

एक अन्य मत के अनुसार (१) कंकुम (२) अगुरु (३) कस्तूरी (४) चन्द्रभाग (५) त्रिपुरा (६) गोरोचन (७) तमाल (८) जल इत्यादि को बराबर मात्रा में यदि लिया जाय तो यही अष्टगन्ध कहलाता है तथा इस प्रकार का अष्टगन्ध शैव एवं शाक्त दोनों सम्प्रदायों को अभीष्ट है[२]।

चन्दन, अगुरु, ह्रीवेर, कुष्ठ, कंकुम, सेव्यका, जटामांसी, मुर ये आठ प्रकार की गन्ध वैष्णवों[३] को प्रिय है।

उपासना भेद के कारण उपरोक्त तीनों प्रकार के अष्टगन्धों का उल्लेख शास्त्रों में मिलता है।

---

१. चन्दनागुरुकर्पूरतमालजलकंकुमम्।
कुशीतं कुष्ठसंयुक्तं शैवं गन्धाष्टकं विदुः॥

२. कंकुमागुरुकस्तूरी चन्द्रभागैः समीकृतैः।
त्रिपुराप्रीतिदो गन्धस्तथा चण्डाश्च शम्भुना॥

३. चन्दनागुरुह्रीबेरकुष्ठकुंकुमसेव्यकाः।
जटामांसीमुरमिति विष्णोर्गन्धाष्टकं विदुः॥

कालिकापुराण के अनुसार भली भांति चूर्ण की हुई अथवा खूब अच्छी तरह से घोटी हुई, अग्नि द्वारा भस्म बनाई हुई, तरल अवस्था में घुली हुई (जल मिश्रित) किंवा अच्छी तरह से (कपटछाण) संमर्दन की हुई इन पांच प्रकारों से गन्धों को प्रयोग में लिया जाता है जो कि देवताओं को सुखदायक मानी गई है।

पंचामृत, पंचरत्न, पंचपल्लव, पंचगव्य और पंचवर्ण

*** पंचामृत—**

हेमाद्रि शिवधर्मों में बताया गया है कि दही, दूध, शर्करा, शहद और घृत ये पांचों मिलकर पंचामृत कहलाते हैं।

*** पंचरत्न—**

सोना, हीरा, नीलम, पुखराज और मोती शास्त्रकारों ने इन पांचों को 'पंचरत्न' कहा है। पंचरत्न विशिष्ट पूजन व तान्त्रिक प्रयोगों में काम आते हैं। रत्न के अभाव में सोने की व्यवस्था शास्त्रकारों ने दी है। विष्णु धर्मोत्तर के अनुसार—मुक्ता, सोना, वैदूर्य्य, पद्मराग, पुष्पराग, गोमेद, नील, गारुत्मत और प्रवाल (मूंगा) ये महारत्न माने गये हैं।

*** पंचपल्लव—**

पीपल, गूलर, प्लक्ष, आम और बड़ की डारें ये पंचपल्लव कहलाते हैं। कर्मकाण्ड व तान्त्रिक पूजाओं में इनका बड़ा भारी महत्व है।

*** पंचगव्य—**

गोमूत्र, गोमय (गोबर) दूध, दही, घृत एवं कुशा से मार्जित जल युक्त मिश्रिण को शास्त्रकारों ने 'पंचगव्य'

कहा है जो कि महापातक दोषों को नाश करने वाला माना जाता है। विष्णुधर्म में कहा है कि जितना पंचगव्य बनाना हो तो आधा अंश तो गोमूत्र लेना चाहिये। तीन भाग गोबर और तीन ही भाग दूध का होना चाहिये। दो भाग दही और एक भाग घृत बाकी का कुशाजल होना चाहिये।

प्रायश्चित एवं पवित्रिकरण प्रक्रिया व आत्म शुद्धि में पंचगव्य का बड़ा भारी महत्त्व है।

*** पंचवर्ण—**

(मण्डलार्थ पंचवर्णानि) हवन इत्यादि मांगलिक कार्यों में पांच प्रकार के रंग का प्रयोग शास्त्रकारों ने इस प्रकार किया है—श्वेत के स्थान में गेहूं, चावल तथा यव का चूर्ण, कुसुम, सिन्दूर और गेरू को लाल रंग के स्थान में, हरताल व हल्दी के चूर्ण को पीले रंग के स्थान में, जले हुये जौओं से काला तथा पीले और काले से हरा रंग बना लेना चाहिये। अन्य प्रकार के रंग या केमिकल हवन एवं मण्डल इत्यादि में काम नहीं आते।

गोमूत्रं गोमय क्षीरं दधि सर्पि कुशोदकं,
पञ्चगव्यमिदं प्रोक्तम्महापातक नाशनम्॥
—वशिष्ठ संहितायाम्

पञ्चामृतं दधि क्षीरं सिता मधु घृतं स्मृतम्॥
—हेमाद्रौ शिवधर्मे

कनकं कुलिशं नीलं पद्मरागं च मौक्तिकम्।
एतानि पंचरत्नानि रत्नशास्त्रविदो विदुः॥
—समयप्रदीप, कालिका पुराण

अभावे सर्वरत्नानां हेम सर्वत्र योजयेत्॥ —स्मृत्यन्तरे

अश्वत्थोदुम्बरप्लक्षचूतन्यग्रोधपल्लवा,
पञ्चपल्लवा इति ख्याताः सर्वकर्मसु शोभनाः॥ —ब्रह्माण्डपुराणे

*अभ्यास प्रश्न

१. पूजा किसे कहते है ? यह कितने प्रकार की होती है ?
२. पंचोपचार पूजन में क्या होता है ?
३. षोडशोपचार पूजन की विधि क्या है ?
४. दशांग धूप किसे कहते है ?
५. षोडशांग धूप किसलिये काम आता है तथा इसमें कौन-कौन से पदार्थ होते है।
६. अष्टगन्ध किसे कहते है ?
७. अष्टगन्ध कितने प्रकार का होता है ?
८. अष्टगन्ध कितनी विधि से तैयार किया जाता है जिसमें श्रेष्ठ विधि कौन-सी मानी गई है ?
९. पंचामृत किसे कहते है ? इसमें क्या-क्या वस्तुऐं होती है ?
१०. पंचगव्य कौन-सी चीजों से बनता है ? और इसका क्या उपयोग है ?
११. पंचरत्न किसे कहते है ? महारत्न किसे कहते है ?
१२. पंचपल्लव किसे कहते है ?
१३ मण्डल एवं हवन इत्यादि बनाने में कौन-कौन से रंग काम में आते है तथा उनको किस प्रक्रिया से बनाया जाता है ?
१४. शिव पंचायत का क्रम क्या है ?
१५. शिव के पार्षद कौन-कौन है ?
१६. शिव पूजा के लिये वर्जित पुष्प कौन-कौन से हैं।
१७. शिव, देवी, विष्णु एवं गणपति को पूजन के लिये कौन-कौन सी सामग्री प्रिय है ?
१८. घर में देवपूजन हेतु क्या-क्या वस्तुयें वर्जित है ?
१९. महादेव के लिङ्ग में प्राण प्रतिष्ठा क्यों नहीं होती ? कारण क्या है ?
२०. तुलसी दल व कमल वासी क्यों नहीं माने जाते ?

अध्याय—६

स्वर मीमांसा

संसार में ज्ञान की सदा प्रशंसा होती है और अज्ञान की निन्दा। जो वेदपाठी विद्वान् वेदों को पढ़कर उसके अर्थ को नहीं जानता वह उस स्थाणु (गदहे) के समान है जो चन्दन के भार को ढोता हुआ भी उसके उपयोग से वञ्चित है। अर्थ को न जानकर पुस्तक पढ़ने वाला व्यक्ति केवल व्यर्थ ही श्रम करता है क्योंकि वह वेदवाणी को देखता हुआ भी नहीं देखता और इस पवित्र वाणी को सुनता हुआ भी (अर्थ ग्रहण के अभाव में) नहीं सुनता। निरुक्तकार यास्क कहते है—'ऋतुकाल के पश्चात् उत्तम वस्त्रों से अलंकृत कामयमाना पत्नी, जिस प्रकार अपने पति के आगे अपना सर्वस्व शरीर खोलकर रख देती हैं, ठीक उसी प्रकार से अर्थ के अभिमानी स्वामी (मर्मज्ञ) के आगे वेदवाणी भी (निर्वस्त्र) नग्न हो जाती है अर्थात् मर्मज्ञ वेदान्ती इसके तत्त्व को प्राप्त कर लेता है।

वैदिक मन्त्रों का उच्चारण शुद्धता उसके अर्थज्ञान पर निर्भर है तथा वेद में अर्थज्ञान का आधार स्तम्भ है स्वर-ज्ञान। व्याकरणाचार्य पाणिनि कहते हैं जिसे वैदिक स्वरों का ज्ञान नहीं उसे वैदिक (संहिता) पाठ करने का कोई अधिकार नहीं। यथा—

मन्त्रो हीनः स्वरतो वर्णतो वा, मिथ्या प्रयुक्तो न तमर्थमाह।
स वाग्वज्रो यजमानं हिनस्ति, यथेन्द्रशत्रुः स्वरतोऽपराधात् ॥

—पा० शि० श्लोक ५२

इन्द्र के पराभव के लिये वृत्र द्वारा किये गये यज्ञ में 'इन्द्रशत्रुर्वर्धस्व:' मन्त्र से आहुति दी जा रही थी। तत्पुरुष समास में उत्तरपद में उदात्त स्वर होना चाहिये था। जिसका अर्थ होता—इन्द्र का शत्रु अर्थात् वृत्र बढ़े। इसके स्थान पर उच्चारण भेद से (पूर्व पद में उदात्त के कारण) यह शब्द बहुव्रीहि बन गया और इसका अर्थ हुआ कि—इन्द्र बढ़े। स्वर की अशुद्धता के कारण अर्थ बिलकुल उल्टा हो गया और वृत्र का नाश हो गया।

*** स्वर परिचय—**

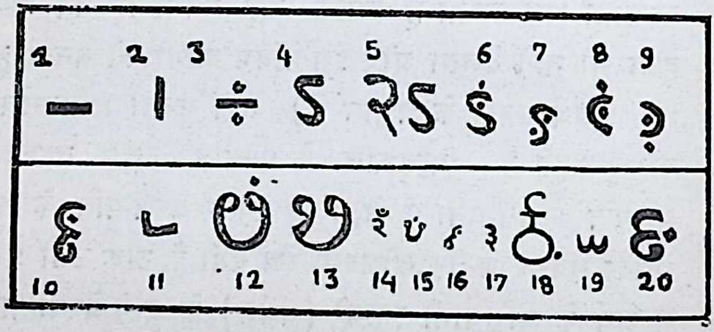

१. एक पडी-रेखा (Horizontal stroke) (—) से चिन्हित वर्णों को 'अनुदात्त' कहा जाता हैं। **नीचैरनुदात्तः** उच्चारण स्थान के निम्न भाग से उच्चारित बीच का स्वर अनुदात्त माना जाता है। यह हमेशा उदात्त स्वर के पूर्व होता है। यथा—सहस्राणि इस पद में 'ह' उदात्त और 'स' अनुदात्त है।

उच्चैरुदात्तः—उदात्त को उच्च का स्वर माना जाता है। उदात्त स्वर के उच्चारण में गात्रों को ऊपर खीचा जाता है। ध्वनी को कठोर बनाया जाता जाता है तथा कण्ठ को दबाकर उच्चारण किया जाता है। वैदिक (संहिता) पाठ में उदात्त स्वर को अचिन्हित छोड़ दिया जाता है। यथा—**सहस्राणि** इस पद में अचिन्हित वर्ण 'ह' उदात्त कहलायेगा।

२. **समाहार स्वरित**—स्वरित को उदात्त व अनुदात्त का समाहार (मध्यम स्वर) माना जाता है। यह एक स्वतन्त्र स्वर है। नियमानुसार उदात्त के बाद आने वाला अनुदात्त स्वरित के रूप में बदल जाता है। स्वरित को वर्ण के उपर एक खड़ी रेखा (।) Vertical stroke से चिह्नित किया जाता है। यथा—**सहस्राणि** इस पद में '**सा**' वर्ण स्वरित कहलायेगा।

उदात्त, अनुदात व स्वरित स्वरों के अलावा एक '**प्रचय**' नामक स्वर भी होता है। स्वरित के बाद आने वाले अनुदात्त चाहे एक हो या अनेक उनकी 'प्रचय' संज्ञा होती है। इन्हें भी अचिह्नित छोड़ दिया जाता है। यथा—**नासत्याभ्याम्** इस पद में '**या**', **भ्याम्** दोनों वर्ण 'प्रचय' कहलायेंगे।

३. ःइस प्रकार के विसर्ग में मुट्ठी बन्द करके तर्जनी व कनिष्ठिका को खोला जाता है। '**विसर्गेषु ईषद् विरामः**' विसर्ग आने पर कुछ थोड़ा सा विराम करना चाहिए। नं. ३, ६, ७, ८, ९ विसर्ग के ही भेद है। जिस विसर्ग

में बिन्दियां ऊपर (६, ८) होती है उस समय मन्त्र उच्चारण करते समय हाथ मध्य में रखते हुए दाहिनी मुठ्ठी बन्द कर कनिष्टिका ऊपर व बाये हाथ की तर्जनी निकाले।

४. अवग्रह ऽ में कुछ विश्राम लेते हुये 'अ' की दीर्घ ध्वनि निकलती है।

५. प्लुत स्वर को २ या २ऽ से चिह्नित किया जाता है। मन्त्र बोलते समय दाये हाथ की तर्जनी व मध्यमा को मुठ्ठी से खोलकर, हाथ ऊपर की ओर ले जाते हुए तर्जनी को तीन बार ऊपर नीचे करते हुए 'आ' की ध्वनि का दीर्घ उच्चारण किया जाता है। नं. १४, १७ भी यहीं स्वर हैं।

६. नं. १०, १२, १३, १५, १६, १८ व २० 'घृ' के भेद है। नं. १२, १३, १५ ह्रस्व 'घृ' के बोधक चिह्न है। इनको बोलते समय अंगुष्ट तर्जनी के मूल को स्पर्श करता है। नं. १०, १६ दीर्घ 'घृ' बोधक चिह्न है इनको बोलते समय अंगूठे से टक्कर देकर सीधी तर्जनी अंगुली बाहर निकाली जाती है। नं. १८ व २० भी इसी प्रकार मध्यम घोष वाला 'घृ' है इसमें तर्जनी बिना टक्कर के छोड़ी जाती है।

७. ११. अनुदात्त से वापस स्वरित में अक्षर बोलते समय यह चिह्न लगाया जाता है। इसको उच्चारित करते समय हाथ (Round) घुमाया जाता है। १६. यह स्वर अनुदात्त बोधक है। इसको बोलते समय गोकर्णवत् हाथ को नीचे की तरफ उल्टा किया जाता है।

*** उच्चारण नियम—**

१. यजुर्वेद में मूर्धन्य 'ष' का उच्चारण 'ख' होता है। परन्तु यदि ट वर्ग (ट, ठ, ड, ढ, ण) से संयुक्त हो तो 'स' का उच्चारण होगा। यथा—'उष्ण' में 'ख' नहीं बोला जाकर 'स' बोला जायेगा। यदि 'ष' के पूर्व में न, व, स, इत्यादि वर्ण हो तो इसका उच्चारण 'श्' वत् बोला जायेगा। यथा—**नमऽउष्णीषिणे** (५/२२) **इष्णन्निषाणामुम्म** (२/२२)

२. पद के प्रारम्भ में 'य' हो तो उसका उच्चारण 'ज' होता है। यदि 'ह', ऋ, र से 'य' संयुक्त हो तो पद के प्रारम्भ, मध्य व अन्त में भी इसका उच्चारण 'ज' ही होगा। 'र' से युक्त ह, य होने पर उसका द्वित्व होता है और उच्चारण 'ज' ही होता है। यथा—**तं य्यज्ञम्बर्हिषि** (२/९)

३. पद के प्रारम्भ में 'व' हो तो उसका द्वित्व होता है। **व्वेदाहमेतं** (२/१८)

४. श, ष, स, ह से रेफ (हल् 'र') संयुक्त हो तो 'र' का उच्चारण 'रे' हो जाता है। ह्रस्व 'ऋ' पृथक हो या किसी व्यंजन से युक्त हो तो उसका उच्चारण भी 'रे' हो जाता हैं। यथा—**सहस्रशीर्षापुरुषः** (२।१)

५. अनुस्वार के पीछे श, ष, ह या 'र' हो तो 'घुं' का उच्चारण होता है। अनुस्वार के पूर्व का स्वर ह्रस्व हो तो 'घूं' का उच्चारण दीर्घ होता है और पूर्ण का स्वर दीर्घ हो तो 'घुं' का उच्चारण ह्रस्व होता है।

६. 'आन्' के आगे कोई स्वर आवे तो 'न्' का चन्द्रबिन्दु हो जाता है और 'आ' का उच्चारण प्लुत स्वर में होता है। यथा—'तञ्जुनाँ ३ अनु (४।३)

७. यजुर्वेद में पदान्त हलन्त 'म्' को पूरे 'म' की तरह उच्चारित किया जाता है तथा इसको बोलते समय मुष्टिका बन्द कर दी जाती है।

८. पदान्त 'न्' को बोलते समय अंगुष्ठ व तर्जनी के नखों का परस्पर स्पर्श किया जाता है।

*अभ्यास प्रश्न

१. उदात्त व अनुदात्त में क्या अन्तर है ?
२. स्वरित के बाद आने वाले अनुदात्त को क्या कहते है ?
३. प्लुत स्वर क्या होता है ?
४. 'घृ' कितने प्रकार के होते हैं इनमें दीर्घ व ह्रस्व 'घृ' की पहिचान क्या है ?

अध्याय—७

❀शिव-पूजन का शास्त्रोक्त क्रम

प्रातःकाल पवित्र वस्त्र पहनकर, यजमान सपत्नीक आसन पर पूर्वाभिमुख या उत्तराभिमुख बैठे। तत्पश्चात् ब्राह्मण '**भद्रसूक्त**' का पाठ करते हुये यजमान के तिलक करें, कंकण बांधे, पुष्पाहार पहनावे। उसके बाद गणपति का स्मरण करते हुये गुरु व सर्व देवों को नमस्कार कर सङ्कल्प करे। दिग्रक्षण, वरुणपूजन के पश्चात् दीप स्थापन करे एवं शङ्ख व घंटा का पूजन करे। इसके बाद यजमान, ब्राह्मणों का वरुण बन्धन करे। इसमें प्रथम आचार्य का पूजन, ब्राह्मणों को तिलक कर उन्हें पुष्पहार पहनावें व पूंगीफल व ताम्बूल से उनका स्वागत करे। तब अवकाश हो तो यहां सम्पूर्ण '**पुण्याहवाचन-प्रयोग**' करे। इसके बाद यजमान गुरु व देवताओं की आज्ञा लेकर प्रथम सूर्य का पूजन, गणपति पूजन, अम्बिका पूजन, महादेव पूजन एवं फिर क्रमशः विष्णु पूजन करे। फिर '**साङ्गोपाङ्ग गणपति पूजन**' करें। यदि अवकाश हो तो यहां तत्पश्चात् **ऋष्यादिन्यास**, **सञ्चवक्त्रध्यान** एवं **मानसोपचार** पूजनादि क्रम से रुद्राभिषेक का प्रारम्भ करें। निरन्तर जलधारा, पयोधारा अथवा इच्छित द्रव्य से **रुद्राष्टाध्यायी** से शिवजी का अभिषेक करें। फिर उत्तर पूजन करें। स्तोत्रादि विहित पाठों के पश्चात् मन्त्र पुष्पाञ्जलि दें।

❁ अथ शिवपञ्चायतन पूजाप्रयोगः

पूर्वाभिमुख एवं उत्तराभिमुख होकर, अपने-२ आसनों पर बैठकर, शिवलिङ्ग के सन्मुख होकर वामभाग में पवित्र कलश एवं दक्षिण भाग में पूजन सामग्री, स्थापित करके उत्साह पूर्वक 'भद्रसूक्त' का वाचन करते हुये यजमान के ललाट प्रदेश पर चन्दन अथवा कंकुम से अंगूठे द्वारा तिलक करें। ब्राह्मणों का तिलक अंगूठे से नहीं होता अपितु तर्जनी व मध्यमा से होता है।

❁ अथ भद्रसूक्तम्—

ॐ आनोभद्द्राः क्क्रतवोयन्तु विश्श्वतोदब्ब्धासो ऽ अपरीतासऽउद्भिद—। देवानोयथासद्मिद्वृधेऽअसन्नप्रायुवो- रंक्षितारो दिवेदिवे ।।१।। देवानाम्भद्द्रासुमतिर्ऋ्जूयतान्दे- वाना ठं रातिरभिनोनिवर्त्तताम् । देवाना ठं सक्ख्यमुपसेदि- माव्वयन्देवानऽआयुः प्रतिरन्तुजीवसे ।।२।। तान्पूर्व्वयानि- विदाहूमहेव्वयम्भगम्मित्रमदितिन्दक्षमस्त्रिधम् । अर्य्यमणं- वरुण ठं सोममश्श्विना सरस्वतीनः सुभगामयस्करत् ।।३।। तन्नोव्वातोमयोभुव्वातुभेषजन्तन्मातापृथिवीतत्त्पिता द्यौः । तद्ग्रावाणः सोमसुतोमयोभुवस्तदश्श्विना श्शृणुतन्धिष्ण्ण्या- युवम् ।।४।। तमीशानञ्जगतस्तस्त्थुषस्प्पतिन्धियाञ्जिन्न्वव- सेहूमहेव्वयम् । पूषानो यथाव्वेद सामसद्वृधेरक्षितापायुर- दब्धः स्वस्तये ।।५।।

स्वस्तिनऽइन्द्रोव्वृद्धश्श्रवाः स्वस्तिन—पुषाव्विश्श्ववेदाः ।
स्वस्तिनस्ताक्क्ष्र्योऽअरिष्टनेमिः स्वस्तिनो बृहस्प्पतिर्द्दधातु ।।१।।
पृषदश्श्वामरुतः पृश्निमातरः शुभंयावानोव्विदथेषुजग्ग्मयः ।
अग्ग्निर्जिह्वामनवः सूरचक्षसोव्विश्श्वेनोदेवाऽअवसागमन्निह।।२।।

भद्द्रङ्कर्ण्णेभिः शृणुयामदेवाभद्द्रम्पश्श्येमाक्षभिर्य्यजत्त्राः ।
स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवा ठ्ँ सस्तनूभिर्व्व्यशेमहिदेवहितँय्यदायुः ।।३।
शतमिन्नुशरदोऽअन्तिदेवायत्रानश्चचक्काजरसन्तनूनाम् ।
पुत्त्रासोयत्रपितरोभवन्तिमानोमद्ध्यारीरिषतायुर्ग्गन्तोः ।।४।।
अदितिद्द्यौरदितिरन्तरिक्षमदितिर्म्माताषपितासपुत्त्रः । विश्-
श्वेदेवाऽअदितिःपञ्चजनाऽअदितिर्ज्जातमदितिर्ज्जनित्त्वम् ।।५।
द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष ठ्ँ शान्तिः पृथिवीशान्तिरापः शान्ति-
रोषधयः शान्तिः। व्वनस्प्पतयः शान्तिर्व्विश्श्वेदेवाः शान्ति-
र्ब्ब्रह्मशान्तिः सर्व्व ठ्ँ शान्तिः शान्तिरेवशान्तिः सामा-
शान्तिरेधि ।।६।।
यतोयतः समीहसेततोनोऽअभयंकुरु । शन्नः कुरुप्रजाब्भ्योभ-
यन्नः पशुब्भ्यः ।।७।। सुखशान्तिर्भवतु ।।

❀अथ गणेशगुर्वादीन्नमस्काराः

❀ अथगुरुनमनम्—

गुरुर्ब्रह्मा गुर्रुविष्णुः गुरुर्देवो महेश्वरः ।
गुरुः साक्षात्परब्रह्म तस्मै श्री गुरवे नमः ।।१।।

ध्यान मूलं गुरोः मूर्तिः पूजामूलं गुरोः पदम् ।
मन्त्रमूलं गुरोर्वाक्यं मोक्षमूलं गुरोः कृपा ।।२।।

न गुरोरधिकं तत्त्वं न गुरोरधिकं तपः ।
गुरोः परतरंनास्ति तस्मात्सम्पूज्यते गुरुः ।।३।।

नमामि सद्गुरुं शान्तं प्रत्यक्षं शिवरूपिणम् ।
गिरसायज्ञपीठस्थ तस्मै श्री गुरवे नमः ।।४।।

त्वं पिता, त्वं च मे माता, त्वं बन्धु त्वं च देवता ।
त्वं मोक्ष प्राप्ति हेतुश्च तस्मै श्री गुरवे नमः ।।५।।

अथसर्वदेवनमस्कारम्—

ॐ लक्ष्मीनारायणाभ्यां नमः। ॐ उमामहेश्वराभ्यां नमः।
ॐ वाणीहिरण्यगर्भाभ्यां नमः। ॐ शचीपुरन्दराभ्यां नमः।
ॐ मातृपितृचरणकमलेभ्यो नमः। ॐ इष्टदेवताभ्यो नमः।
ॐ कुलदेवताभ्यो नमः। ॐ ग्रामदेवताभ्यो नमः।
ॐ स्थान देवताभ्यो नमः। ॐ वास्तु देवताभ्यो नमः।
ॐ सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः। ॐ सर्वेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो नमः।
ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय श्री मन्महागणाधिपतये नमः॥

गणपति स्मरणम्—

ॐ सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णकः।
लम्बोदरश्च विकटो विघ्ननाशो विनायकः॥१॥
धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः।
द्वादशैतानि नामानि यः पठेच्छृणुयादपि॥२॥
विद्यारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा।
संग्रामे सङ्कटे चैव विघ्नस्तस्य न जायते॥३॥
शुक्लाम्बरधरं देवं शशिवर्णं चतुर्भुजम्।
प्रसन्नवदन ध्यायेत्सर्वविघ्नोपशान्तये॥४॥
अभीप्सितार्थ सिद्ध्यर्थं पूजितो यः सुरासुरैः।
सर्वविघ्नहरस्तस्मै गणाधिपतये नमः॥५॥
सर्वमङ्गलमाङ्गल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तुते॥६॥
सर्वदा सर्वकार्येषु नास्ति तेषाममङ्गलम्।
येषां हृदिस्थो भगवान्मङ्गलायतनं हरिः॥७॥
तदेव लग्नं सुदिनं तदेव ताराबलं चन्द्रबलं तदेव।
विद्याबलं दैवबलं तदेव लक्ष्मीपते तेऽङ्घ्रियुगं स्मरामि॥८॥

लाभस्तेषां जयस्तेषां कुतस्तेषां पराजयः ।
येषामिन्दीवरश्यामो हृदयेस्थो जनार्दनः ।।९।।
यत्रयोगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः ।
तत्रश्रीविजयोभूतिध्र ुवा नीतिर्मतिमम ।।१०।।
सर्वेष्वारब्धकार्येषु त्रयस्त्रिभुवनेश्वराः ।
देवा दिशन्तु नः सिद्धि ब्रह्मेशानजनार्दना ।।११।
विनायकं गुरुं भानुं ब्रह्मविष्णुमहेश्वरान् ।
सरस्वतीं प्रणौम्यादौ सर्वकार्यार्थसिद्धये ।।१२।।

※ अथ संकल्प—

यजमान एवं यजमान-पत्नी दक्षिण हाथ में जल लें। जल में कंकुम, अक्षत, पुष्प व द्रव्य रखकर, दृढ़चित्त होकर निम्न संकल्प बोलें। संकल्प के परिपूर्ण हो जाने पर हाथ का जल पवित्र स्थान में त्याग दें।

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्त्तमानस्य अद्यब्रह्मणो द्वितीये परार्द्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलि-युगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भरतखण्डे आर्यावर्तान्तर्गत ब्रह्मावर्तैकदेशे, श्रीमन्नृपविक्रमादित्य राज्यात् अमुकनाम्नि सम्वत्सरे सम्वत्...असुकायने...अमुकऋतौ...अमुकमासे... अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे...अमुकनक्षत्रे...... अमुक राशि स्थिते चन्द्रे . अमुक राशि स्थिते सूर्ये ..... अमुक राशि स्थिते देवगुरौ बृहस्पति...शेषेषु ग्रहेषु यथायथं राशिस्थानस्थितेषु सत्सु एवं ग्रहगुणविशेषणविशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ अमुक गोत्रोत्पन्नोऽहं...अमुक शर्माऽहं...... ममात्मनः श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्त्यर्थं निरन्तरऐश्वर्या-भिवृद्धयर्थम् अप्राप्तलक्ष्मीप्राप्त्यर्थं प्राप्तलक्ष्म्याचिरकाल-

संरक्षणार्थं सकलमनईप्सितकामनासंसिद्ध्यर्थं लोकेसभायां राजद्वारे वा सर्वत्र यशोलाभदिप्राप्त्यर्थम् इह जन्मनि जन्मान्तरे वा सकलदुरितोंपशमनार्थं मम सभार्यस्य सपुत्रस्य सबान्धवस्य अखिलकुटुम्बसहितस्य सपशोः समस्तभयव्याधिजरापीडामृत्युपरिहारद्वारा आयुष्यआरोग्यैश्वर्याभिवृद्धयर्थं मम जन्मराशिरखिलकुटुम्बस्य वा जन्मराशेः सकाशाद्ये केचिद्विरुद्धचतुर्थाष्टमद्वादशस्थानस्थितक्रूरग्रहास्तैः सूचितं सूचयिष्यमाणं च यत्सर्वारिष्टं तद्विनाशद्वारा एकादशस्थानस्थितवच्छुभफलप्राप्त्यर्थं पुत्रपौत्रादिसन्ततेरविच्छिन्नवृद्धयर्थम् आधिदैविकाऽऽधिभौतिकाऽऽध्यात्मिकत्रिविधतापोपशमनार्थम् धर्मार्थकाममोक्षफलावाप्त्यर्थं च श्रीशिवपञ्चायतन देवता प्रीत्यर्थं यथाज्ञानेन यथामिलितोपचारद्रव्यै ध्यानावाहनादिषोडशोपचारैः अन्योपचारैः श्रीमहादेवप्रीत्यर्थं रुद्राभिषेककर्म पूजनमहं करिष्ये ।

जल शुद्ध भूमि पर त्याग दे । पुनः आचमनी में जल लें ।

तदङ्गतया गणपतिपूजनं स्वस्तिपुण्याहवाचनं शिवपञ्चायतनदेवतापूजनं नवग्रहपूजनं च अहं करिष्ये ।

जल त्याग दें । पुनः आचमनी में जल लें ।

तत्रादौ दिग्रक्षणं कलशार्चनं शङ्खघण्टार्चनं दीपपूजनं च करिष्ये ।

* अथ दिग्रक्षणम्—

बायें हाथ में सरसों के दाने लेकर मन्त्र पढ़ते हुये समस्त दिशाओं का रक्षण करने हेतु 'रक्षोघ्न-सूक्त' का पाठ करें ।

ॐ रक्षोहणं व्वलगहनं व्वैष्णवीमिदमहन्तं व्वलगमुत्किरामि यम्मेनिष्टचो यममात्यो, निचखानेदमहन्तं व्वलग-

मुत्किरामियम्मे सबन्धुर्य्यमसबन्धुर्न्निचखानेदमहन्तं व्वलग-मुत्किरामियम्मेसजातोयमसजातो निचखानोत्कृंचयाङ्कि-रामि ॥१॥

रक्षोहणोवोव्वलगहनः प्प्रोक्षामिव्वैष्णवान्नक्षोह-णोवो व्वलगहनोवस्तृणामिव्वैष्णवान्नक्षोहणोवो व्वलग-गहनोवस्तृणामिव्वैष्णवान्नक्षोहणौवां व्वलगहनाऽउपद-धामि व्वैष्णवीररक्षोहणौवां व्वलरहनौपर्य्यूहामिव्वैष्णवो व्वैष्णवमसिव्वैष्णवास्त्थ ॥२॥

रक्षसांभागोसिनिरस्त ठ्ं रक्षऽउदमह ठ्ं रक्षोभितिष्ठा-मोदमह ठ्ं रक्षोवब्राधऽइदमह ठ्ं रक्षाधमन्तमानयामि । घृतेनद्द्यावापृथिवीप्प्रोण्र्णु वाथां व्वायोव्वेस्तोकानामग्नि-राज्ज्यस्यव्वेतुस्वाहास्वाहाकृतेऽउद्र्ध्वनभम्मारुतङ्गच्छतम् ।३।

रक्षोहाव्विश्श्वचर्षणिरभियोनिमयोहते । द्रोणेसधस्थ-मासदत् ॥४॥

अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भूमिसंस्थिताः ।
ये भूता विघ्नकर्तारस्तेनश्यन्तु शिवाज्ञया ॥१॥
अपक्रामन्तु भूतानि पिशाचा सर्वतो-दिशम् ।
सर्वेषामवरोधेन पूजाकर्म समारम्भे ॥२॥
यदत्र संस्थितं भूतं स्थानमाश्रित्य सर्वतः ।
स्थानं त्यक्त्वा तु तत्सर्वं यत्रस्थं तत्र गच्छतु ॥३॥
भूतप्रेतपिशाचाद्या अपक्रामन्तु राक्षसाः ।
स्थानादस्माद्व्रजन्त्वन्यत्स्वीकरोमि भुवं त्विमाम् ॥४॥
भूतानि राक्षसा वापि येऽत्र तिष्ठन्ति केचन ।
ते सर्वेऽप्यपगच्छन्तु पूजाकर्म करोम्यहम् ॥५॥

इतना बोलकर सभी दिशाओं में सरसों बिखेर दे । और वाम पाद से तीन बार भूमि का ताडन

करे। फिर हाथ में जल लेकर दसो दिशाओं में मार्जन करे। चाहे तो पञ्चगव्य से मार्जन करे।

ॐ पूर्वे रक्षतु गोविन्दः आग्नेय्यां गरुड़ध्वजः।
याम्यां रक्षतु वाराहो नारसिंहस्तु नैऋत्ये ॥
वारुण्यां केशवो रक्षेदवायव्यां मधुसूदनः।
उत्तरे श्रीधरो रक्षेदीशान्यां तु गदाधरः॥
उर्ध्वं गोवर्धनो रक्षेदधस्ताच्च त्रिविक्रमः।
एवं दश दिशो रक्षेद् वासुदेवो जनार्दनः॥१॥

*** भैरव नमस्कार—**

तीक्ष्णदंष्ट्र महाकाय कल्यान्तदहनोपम। भैरवाय नमस्तुभ्यमनुज्ञां दातुमर्हसि।

इसके बाद उदक का स्पर्श कर ले। हाथ धो ले। पुनः आचमनी में जल लेकर विनियोग करे।

*** अथ वरुणावाहनम्—**

तत्त्वायामीत्यस्य शुनःशेप ऋषिः त्रिष्टुप्छन्दः वरुणो देवता वरुणावाहने विनियोगः।

इतना कहकर जल त्याग दे। अपने वामभाग में चावल का अष्टदल बनाकर उस पर जलपूरित पवित्र कलश को स्थापना करे। उस कलश में थोड़ा कच्चा दूध, अक्षत, गन्ध, पत्र पुष्प, गंगाजल एवं द्रव्य का विसर्जन करे। तत्पश्चात् मन्त्र पढ़ते हुये कलश में वरुण देवता का आह्वान करे। आह्वान मन्त्र यह है—

ॐ तत्वायामिब्ब्रह्मणा व्वन्दमानस्तदाशास्ते यजमानो हर्विर्भिः। अहेडमानो व्वरुणेहबोद्‌ध्युरुश ठं समानऽआयुः प्रमोषीः॥

मकरस्थं पाशहस्तमम्भसां पतिमीश्वरम् ।
आवाहये प्रतीचीनं वरुणं यादसां पतिम् ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः अस्मिन्कलशे वरुणं साङ्गं सपरिवारं सायुधं सशक्तिकम् आवाहयामि स्थापयामि ।।

इसके पश्चात् चावलों से कलश में वरुण देवता की प्रतिष्ठा करे ।

* अथप्रतिष्ठापनम्—

ॐ मनोजूतिर्जुषतामाज्ज्यस्य बृहस्प्पतिर्य्यज्ञमिमन्त-नोत्वरिष्टँय्यज्ञ ठ्ँ समिमन्दधातु । व्विश्श्वेदेवासऽइहमाद-यन्तामो३म् प्रतिष्ठ ।।

ॐ वरुणाय नमः । वरुण सुप्रतिष्ठितो वरदो भव ।।प्रतिष्ठाप्य।।

ॐ भूर्भुवः स्वः वरुणाय नमः चन्दनं समर्पयामि

वरुण देवता को चन्दन, पुष्प गन्धादि चढ़ावे तथा अनामिका अंगुली से कलश को स्पर्श करता हुआ बोले ।

कलशस्य मुखे विष्णुः कण्ठे रुद्र समाश्रितः ।
मूलेतत्र स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्मृताः ।।१।।
कुक्षौ तु सागराः सर्वे सप्तद्वीपा वसुन्धरा ।
ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः सामवेदो ह्यथर्वणः ।।२।।
अङ्गैश्च सहिताः सर्वे कलशाम्बुसमाश्रिताः ।
गायत्री चात्र सावित्री शान्तिः पुष्टिकरी तथा ।।
आयान्तु मम शान्त्यर्थं दुरितक्षयकारकाः ।।३।।

---

* उदकस्पर्श—पूजा करते हुये अधोवायु आ जाय, अथवा कोई हंस दे, बीच में झूठ बोल जाय, बिल्ली, मूषक का स्पर्श हो जाय या क्रोध आ जाय तो कानों के पवित्र जल लगाना चाहिये, इससे शुद्धि हो जाती है ।

गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति ।
नर्मदे सिन्धो कावेरि जलेऽस्मिन् संन्निधिंकुरु ।।४।।
ब्रह्माण्डोदरतीर्थानि करै स्पृष्टानि ते रवे ।
तेन सत्येन मे देव तीर्थं देहि दिवाकर ।।५।।

कलश के चारों ओर पुष्प बिखेरते हुवे बोले—

ॐ पूर्वे ऋग्वेदाय नमः । दक्षिणे यजुर्वेदाय नमः ।
पश्चिमे सामवेदाय नमः । उत्तरे अथर्वणवेदाय नमः ।
कलशमध्ये आपाम्पतये वरुणाय नमः ।।
इतिवरुणं सम्पूज्य

कलश में स्थापित वरुण देवता को गंधाक्षत पुष्प चढ़ावे । धूप, दीप, नैवेद्य चढावे तत्पश्चात् सब तीर्थों का ध्यान करते हुये प्रार्थना पूर्वक नमस्कार करे ।

*** कलशं प्रार्थना—**

देवदानव संवादे मथ्यमाने महोदधौ ।
उत्पन्नोऽसि तदा कुम्भ विधृतो विष्णुना स्वयम् ।।१।।
त्वत्तोये सर्वतीर्थानि देवाः सर्वे त्वयि स्थिताः ।
त्वयि तिष्ठन्ति भूतानि त्वयि प्राणाः प्रतिष्ठिता ।।२।।
शिवः स्वयं त्वमेवासि विष्णुस्त्वं च प्रजापतिः ।
आदित्या वसवो रुद्रा विश्वेदेवाः सपैतृकाः ।।३।।
त्वयि तिष्ठन्ति सर्वेऽपि यत कामफलप्रदाः ।
त्वत्प्रसादादिमां पूजां कर्तुमीहे जलोद्भव ।।
सान्निध्यं कुरु मे देव प्रसन्नो भव सर्वदा ।।४।।

*** अथ पवित्रिकरणम्—**

तत्पश्चात् (१) अंकुश मुद्रा से (तीर्थों का आवाहन) (२)मत्स्यमुद्रा (आच्छादन) (३)धेनु मुद्रा (अमृतीकरण)

(४) कूर्म मुद्रा प्रदर्शन (५) शंख मुद्रा स्पर्श करते हुये 'वं' इस मूलमन्त्र को आठ बार अभिमन्त्रित करे। फिर कलश में से कुछ जल लेकर पूजन सामग्री पर छिड़के। भूमि का प्रोक्षण करे। कुछ जल स्वयं के शरीर पर छिड़के। शरीर को मार्जन द्वारा पवित्र करने का मन्त्र—

ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपिवा ।
यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचि ।।

पूजन सामग्री एवं अन्य वस्तुओं को मार्जन करने का मन्त्र—

ॐ आपोहिष्ट्ठामयोभुवस्तानऽऊर्ज्जेदधातन । महेरणाय चक्षसे । योव॒ःशिवतमोरसस्तस्यभाजयतेहनः । उशतीरिवमातरः ।।१।। तस्म्माऽअरङ्गमामवोयस्यक्षयाय जिन्नवथ । आपोजनयथाचनः ।।२।।

*** अथ दीप पूजनम्—**

वायुरहित स्थल पर शुद्ध घी का दीपक जलाकर चावल चढ़ाते हुये मन्त्र पढ़े।

ॐ अग्निर्ज्ज्योतिज्ज्योतिरग्निः स्वाहा सूर्य्योज्ज्योतिज्ज्योतिः सूर्य्यः स्वाहा। अग्निर्व्वर्चोज्ज्योतिर्व्वर्चः स्वाहा सूर्य्यो व्वर्चोज्ज्योतिर्व्वर्चः स्वाहा ।। ज्योतिः सूर्य्य सूर्योज्ज्योतिः स्वाहा ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः दीपस्थदेवतायै नमः आवहयामि सर्वोपचार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि नमस्करोमि।

(तत्पश्चात् हाथ जोड़कर दीपक को प्रार्थना करे)

*** दीप प्रार्थना—**

भो दीपदेवरूपस्त्वं कर्मसाक्षी ह्यविघ्नकृत् ।
यावत्पूजासमाप्तिः स्यात्तावदत्र स्थिरोभव ।।
अनेन पूजनेन दीपदेवता प्रीयताम् ।।

※ अथ शङ्खपूजनम्—

शंख में जल भर कर अर्धचन्द्राकार तिलक करे ।

शङ्खं चन्द्रार्कदैवत्यं वरुणं चाधिदैवतम् ।
पृष्ठे प्रजापतिं विद्यादग्रे गङ्गा सरस्वती ।।
त्रैलोक्ये यानि तीर्थानि वासुदेवस्यचाज्ञाया ।
शङ्खे तिष्ठन्ति विप्रेन्द्र तस्माच्छङ्खं प्रपूजयेत् ।।

ॐ अग्निर्ऋषिः पवमानः पाञ्चजन्यः पुरोहितः । तममिहे महागयम् । उपयामगृहीतोस्यग्नयेत्वाव्वर्चसऽ एषतेयोनिरग्नयेत्वाव्वर्च्चसे ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः शङ्खस्थदेवतायै नमः आवहयामि सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि नमस्करोमि ।

※ शङ्ख प्रार्थना—

त्वं पुरा सागरोत्पन्नो विष्णुना विधृतः करे ।
नमितः सर्वदेवैश्च पाञ्चजन्य नमोऽस्तुते ।।
पाञ्चजन्याय विद्महे पावमानाय धीमहि ।
तन्नो शङ्ख प्रचोदयात् ।। (शङ्ख मुद्रा का प्रदर्शन करे)

※ अथ घण्टापूजनम्—

आगमार्थं तु देवानां गमनार्थं तु राक्षसाम् ।
घण्टानादं प्रकुर्वीत पश्चाद् घण्टां प्रपूजयेत ।।

ॐ सुपर्णोसिगरुत्मॉंस्त्रिवृत्ते शिरोगायत्रञ्चक्षुर्बृहद्रथन्तरेपक्षौ । स्तोमऽआत्माच्छन्दा ठ्ं स्यङ्गानियजू ठ्ं षिनाम । सामतेतनूर्व्वामदेव्व्यँ य्यज्ञायज्ञिम्पुच्छंन्धिष्ण्ण्याः शुफाः । सुपर्णोसिगरुत्मान्दिवङ्गच्छस्वः पत ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः घण्टास्थाने गरुडाय नमः आवाहयामि सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि नमस्करोमि । (गरुड मुद्रा का प्रदर्शन करें ।)

* अथ पुण्याहवाचन सूक्ष्म प्रयोग—

यजमान अपने सामने, शुद्धभूमि पर चावलों का अष्टदल बनावे, उस पर पांच पत्तों व दूर्वा से युक्त पवित्रकलश को स्थापित करे। कलश में यव डाले फिर जल से परिपूर्ण करके अष्टदल के ऊपर रखे। इसके पश्चात् कलश में गन्ध, अक्षत, सर्वौषधी, पञ्चपल्लव, सातमृतिका, फल, पञ्चरत्न, सुवर्ण, द्रव्य इत्यादि चढ़ावे। लाल वस्त्र से कलश का वेष्टन करके, उस पर पूर्णपात्र रखे फिर नारियल रखे कलश में वरुणदेवता का आह्वान करे, चन्दनपुष्पादि अर्पण कर, अर्चना करे। तत्पश्चात् ब्राह्मणों के हाथ में जल, अक्षत, पुष्प, ताम्बूल, दक्षिणा आदि देवे। फिर आचार्य की आज्ञा लेकर यजमान हाथ जोड़कर वचन बोले, ब्राह्मण उसको प्रतिवचन देते हैं।

❀ यजमान के वचन	❀ ब्राह्मणों के प्रतिवचन
१. ॐ पुण्याहकालान्वाचयिष्ये।	१. वाच्यताम्।
२. भो ब्राह्मणाः! अस्मिन् कर्मणि पुण्याहम् भवन्तो ब्रुवन्तु।	२. ॐ अस्तु पुण्याहम्।
३. भो ब्राह्मणाः! कल्याणं भवन्तो ब्रुवन्तु।	३. ॐ अस्तु कल्याणम्।
४. भो ब्राह्मणाः! ऋद्धिं भवन्तो ब्रुवन्तु।	४. ॐ कर्म ऋद्ध्यताम्।
५. भो ब्राह्मणाः! स्वस्तिं भवन्तो ब्रुवन्तु।	५. ॐ आयुष्मते स्वस्ति।
६. भो ब्राह्मणाः! श्रीरस्त्विति भवन्तो ब्रुवन्तु।	६. ॐ अस्तु श्रीः ब्राह्मण सभी वचनों के उत्तर पद को तीन-तीन बार बोले।
७. अस्मिन् पुण्याहवाचने न्यूनातिरिक्ता या विधिः सा उपविष्ट ब्राह्मणानां वचनात् परिपूर्णास्तु।	७. ॐ अस्तु परिपूर्णः॥

अन्तिम वचन के साथ यजमान ब्राह्मणों को दक्षिणा देवे। यजमान अपनी पत्नी को वाम भाग में ले, चार अविधुर पुण्यवान ब्राह्मण यजमान के दक्षिण भाग में खड़े होकर, दूर्वा, आम्रपत्र से सपत्नीक यजमान को अभिषिक्त करे। तत्पश्चात् ब्राह्मण यजमान को मन्त्राशीर्वाद देवे।

*** अथ आचार्यादि ऋत्विग्वरणम्—**

सपत्नीक यजमान ब्राह्मणों को नमस्कार कर, अर्घ्य व आसन देकर उनका स्वागत करे। तत्पश्चात् सर्वप्रथम आचार्य* के दक्षिण पैर के अंगूठे का प्रक्षालन (दुग्ध मिश्रित जल से) कर चन्दन, पुष्पादि चढ़ावे।

*** पाँव धोने का मन्त्र—**

यत्पुण्यं कपिलादाने कार्तिक्यां ज्येष्ठपुष्करे।
तत्फलं पाण्डवश्रेष्ठ! विप्राणां पाद शौचने॥
पृथिव्यां यानि तीर्थानि तानि तीर्थानि सागरे।
सागरे सर्वतीर्थानि, विप्रस्य दक्षिण पदे॥

आचार्य को पुष्पाहार, वस्त्र, यथाशक्ति दान-दक्षिणा दे। तत्पश्चात् सभी ब्राह्मणों का इसी क्रम से पूजन करें एवं अक्षत, पुष्पाहार देते हुये चन्दन से तिलक करें।

---

* अपूज्यायत्रपूज्यन्ते, पूज्यन्ते च व्यतिक्रमात्।
त्रिणितत्रप्रवंतन्ते दुर्भिक्षं मरणं भयम्॥

पूजन में व्यतिक्रम करने से भारी दोष लगता है। अतः सबसे पहले आचार्य, गुरु, फिर ब्रह्मा, फिर ऋत्विक् उसके बाद अन्य लोगों का आतिथ्य-सत्कार क्रमवार करे।

*** ब्राह्मणों के तिलक करने का मन्त्र—**

ॐ नमोऽस्त्वनंताय सहस्रमूर्तये, सहस्रपादाक्षिशिरोरुबाहवे ।
सहस्रनाम्ने पुरुषाय शाश्वते, सहस्रकोटीयुगधारिणे नमः ।।

इसके पश्चात् पवित्र रक्तसूत्र (मौली) से ब्राह्मणों का अभीष्ट कर्म के लिये व्रतबन्धन करें ।

*** मौली बांधने का मन्त्र—**

व्रतेन दीक्षामाप्नोति दीक्षयाप्नोति दक्षिणाम् ।
तया च श्रद्धामाप्नोति श्रद्धया सत्यमाप्यते ।।

मौली बांधने के पश्चात् ब्राह्मणों को यथाशक्ति वस्त्रादि भेट कर दक्षिणा दें । इसके बाद ब्राह्मण अभीष्ट देवता का पूजन करते हुये कर्म प्रारम्भ करते हैं ।

*** शिवपंचायत ध्यान—**

शिवपंचायत की पीठस्थापन इस क्रम से करे ।

पूर्व

विष्णु ५		सूर्य १
	शिव ४	
देवी ३		गणेश २

१. सूर्यध्यानम्—

ध्येयः सदा सवितृमण्डलमध्यवर्ती,
नारायणः सरसिजासन सन्निविष्टः ।
केयूरवान्मकरकुण्डलवान्किरीटी,
हारी हिरण्मयवपुर्धृतशङ्खचक्रः ।।

ॐ सूर्य्यरश्मिर्हरिकेशः पुरस्तात्सविताज्ज्योतिरुदयाँ२ऽअजस्रम् । तस्यपूषाप्रसवेयातिविद्वान्त्सम्पश्यन्विश्श्वा-भुवनानि गोपाः ।।

२. गणपतिध्यानम्—

श्वेताङ्गं श्वेतवस्त्रं सितकुसुमगणैः पूजितं श्वेत गन्धैः ।
क्षीराब्धौ रत्नदीपैः सुरनरतिलकं रत्नसिंहासनस्थम् ।।
दोर्भिः पाशाङ्कुशाब्जाभयवरदधतं चन्द्रमौलिं त्रिनेत्रं ।

ध्याये शान्त्यर्थमीशं गणपतिममलं श्रीसमेतं प्रसन्नम् ।।

ॐ नमोगणेभ्यो गणपतिभ्यश्चवोनमोनमोव्व्रातेभ्यो-व्व्रातपतिभ्यश्चवोनमोनमोगृत्सेभ्योगृत्सपतिभ्यश्चवो-नमोनमोव्विरूपेभ्यो व्विश्वरूपेभ्यश्चवो नमः ।।

३. देवीध्यानम्—

विद्युद्दामसमप्रभां मृगपतिस्कन्धस्थितां भीषणां,
कन्याभिः करवालखेटविलसद्धस्ताभिरासेविताम् ।
हस्तैश्चक्रगदासिखेटविशिखांश्चचापं गुणं तर्जनी,
विभ्राणामनलात्मिकां शशिधरां दुर्गां त्रिनेत्रां भजे ।।

ॐ मनसः काममाकूतिं व्वाचः सत्यमशीय । पशूनां रूपमन्नस्य रसो यशः श्री श्रयतास्मयि स्वाहा ।।

४. शिवध्यानम्—

ध्याये नित्यं महेशं रजतगिरिनिभं चारुचन्द्रावतंसं,
रत्नाकल्पोज्ज्वलाङ्गं परशुमृगवराभीतिहस्तं प्रसन्नम् ।
पद्मासीनं समन्तात्स्तुतममरगणैर्व्याघ्रकृत्तिं वसानं,
विश्वाद्यं विश्ववन्द्यं निखिलभयहरं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रम् ।।

ॐ नमस्तेरुद्द्रमन्न्यवऽउतोतऽइषवेनमः । ब्बाहुब्भ्यामुतते नमः ।।

५. विष्णुध्यानम्—

शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशं
विश्वाधारं गगनसदृश मेघवर्णं शुभाङ्गम् ।

रविर्विनायकश्चण्डी ईशोविष्णुस्तथैव च ।
अनुक्रमेण पूज्यन्ते व्युत्क्रमे तु महद्भयम् ।।

सूर्य, गणपति, अम्बिका, महादेव तथा विष्णु का पूजन क्रम से करे अन्यथा उद्वेग व भय उत्पन्न होता हैं ।

लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगिभिर्ध्यानगम्यं,
वन्दे विष्णु भवभयहरं सर्वलोकैकनाथम् ।।

ॐ व्विष्णोरराटमसिव्विष्णोः श्नप्प्त्रेस्थोव्विष्णोः स्यूरसिव्विष्णोर्द्ध्रुवोसि । वैष्णवमसि व्विष्णवेत्त्वा ।।

* अथ रुद्रपूजनपूर्वकं साङ्गोपाङ्ग गणपति पूजनम्

ताम्रपात्र में गणपति की मूर्ति दूर्वासन पर विराजित करे, अथवा सोपारी पर पवित्र रक्तसूत्र वेष्टित कर गणपति बनावे। उस पर ध्यान केन्द्रित करते हुये आह्वान मुद्रा में यह मन्त्र पढ़े।

१. आवाहन—

हे हेरम्ब त्वमेह्ये ह्यम्बिकात्र्यम्बकात्मज ।
सिद्धिबुद्धिपते त्र्यक्ष लक्षलाभ पितुः पितः ।।
नागास्यं नागहारं त्वां गणराजं चतुर्भुजम् ।
भूषितं स्वायुधैर्दिव्यैः पाशाकुंशपरश्वधैः ।।
आवाहयामि पूजार्थं रक्षार्थं च मम क्रतोः ।
इहागत्य गृहाण त्वं पूजां यागं च रक्ष मे ।।

"हे माता पार्वती तथा त्रिलोचन महादेव के पुत्र हेरम्ब ! आप आइये, आइये। आप सिद्धि और ऋद्धि के पति हैं, तीन नेत्रों से सुशोभित हैं, लाखों का लाभ कराने वाले तथा पिता के भी पिता हैं लक्ष और लाभ के पिता है। यहां पधारिये। आप गजानन हैं नागमय हार धारण करते हैं, आपके चार भुजाऐं हैं, आप गणों के राजा हैं, पाश, अंकुश और परशु आदि दिव्य निजी आयुध आपके हाथों की शोभा बढ़ाते हैं। मैं पूजन के लिये और अपने इस यज्ञ की रक्षा के लिये भी आपका आह्वान करता हूँ। यहां पधारकर आप पूजा ग्रहण करें और यज्ञ की रक्षा भी करें।"

ॐ गणानांत्वा गणपति ठ्ँ हवामहे प्रियाणांत्वां प्रियपति ठ्ँ हवामहे निधीनांत्वा निधिपति ठ्ँ हवामहे वसोमम ।। आहमजानि गर्भधमात्वमजासि गर्भधम् ।।

अथवा ॐ सहस्रशीर्षा० (यजु० २३।१९) ॐ भूर्भुवः स्वः सिद्धिबुद्धिसहिताय गणपतये नमः, गणपतिमावाहयामि ध्यायामि स्थापयामि ।

*** प्रतिष्ठापन—**

आह्वान के पश्चात् देवता का प्रतिष्ठापन करें—

ॐ मनोजूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमंन्तनोत्वरिष्टं यज्ञठ्ँसमिमन्धातु । विश्वेदेवासऽइह मादयन्तामों ३ प्रतिष्ठ ।। (यजु० २।१३) ।।

अस्यै प्राणाः प्रतिष्ठन्तु अस्यै प्राणाः क्षरन्तु च ।
अस्यै देवत्वमर्चायै मामहेति च कश्चन ।।

सिद्धिबुद्धिसहिताय गणपतये नमः सुप्रतिष्ठितो वरदो भव ।

कंकुम से रंगे चावल गणेशजी पर चढ़ावे ।

२. आसन-अर्पण—

इसके बाद निम्नलिखित मन्त्र पढ़कर दिव्य सिंहासन की भावना से पुष्प अर्पित करें—

विचित्ररत्नाचितं दिव्यास्तरणसंयुतम् ।
स्वर्णसिंहासनं चारु गृहाण सुरपूजित ।।

"देव पूजित गणेश ! यह सुन्दर स्वर्णमय सिंहासन ग्रहण कीजिये । इसमें विचित्र रत्न जड़े गये हैं तथा इस पर दिव्य आस्तरण (बिछावन) पड़ा हुआ है ।" लाल पुष्प या दूर्वांकुर गणेशजी के नीचे आसन रूप में रखना ।

ॐ पुरुषऽएवेदं ठ्ँ सर्वं यद्भूतं यच्चभाव्यम्। उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति ।। (यजु० ३१।२) ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय महागणपतये नमः, आसनं समर्पयामि ।

३. पाद्यम्—

इसके बाद निम्नांकित मन्त्र से गणेशजी के पादप्रक्षालन के लिये पाद्य अर्पित करें—

ॐ सर्वतीर्थसमुद्भूतं पाद्यं गन्धादिभिर्युतम् ।
विघ्नराज गृहाणेदं भगवन् भक्तवत्सल ।।

"भक्तवत्सल भगवान् विघ्नराज ! यह सब तीर्थों के जल से तैयार किया गया गन्ध आदि से मिश्रित पाद्य जल आप ग्रहण कीजिये ।"

ॐ एतावानस्य महिमातो ज्यायांश्च पुरुषः । पादोस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतंनदिवि ।। (यजु० ३।३) ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय **महागणपतये नमः** पादयोः पाद्यं समर्पयामि ।

४. अर्घ्य-दान—

तदनन्तर गन्ध आदि से युक्त अर्घ्य-जल अर्पित करे और निम्नांकित मन्त्र पढ़े—

ॐ गणाध्यक्ष नमस्तेऽस्तु गृहाण करुणाकर ।
अर्घ्यं च फलसंयुक्तं गन्धमाल्याक्षतैर्युतम् ।।

"करुणानिधान गणाध्यक्ष ! आपको नमस्कार है। आप गन्ध, पुष्प, अक्षत और फल आदि से युक्त यह अर्घ्यजल❀ आप स्वीकार करें।"

❀ आपः क्षिरं कुशाग्राणीदधि कंकुम अक्षताः ।
दूर्वा सरसूपाश्चैव अष्टाङ्गो अर्घ्य उच्यते ।।
अर्थात् जल, दूध, कुश, दधि, कंकुम, अक्षत, पूर्वा, सरसों इनको ताम्रपात्र (अर्घ्य पात्र) में देवता के पैरों में चढ़ाना ही अर्घ्य कहा जाता है ।

ॐ त्रिपादूर्ध्वऽउदैत्पुरुषः पादोऽस्येहाभवत् पुनः । ततो विष्वङ् व्यक्रामत्साशनानशनेऽअभि ।।(यजु० ३१।४) ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय महागणपतये नमः हस्तयोरर्घ्यं समर्पयामि ।

५. आचमनीय-अर्पण—

इसके अनन्तर गंगाजल से आचमन कराये और नीचे दिया हुआ मन्त्र पढ़े—

विनायक नमस्तुभ्यं त्रिदशैरभिवन्दितः ।
गंगोदकेन देवेश कुरुष्वाचमनं प्रभो ।।

"देवेश्वर ! देववन्दित प्रभो ! विनायक ! आपको नमस्कार है । आप गंगाजल से आचमन करें ।"

ॐ ततोव्विराडजायत व्विराजोऽअधि पूरुषः । स जातोऽअत्यरिच्यत पश्चाद्भूमिमथों पुरः ।। (यजु० ३१।५) ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय महागणपतये नमः मुखे आचमनीयं समर्पयामि ।

ठण्डा जल कपूर से सुवासित कर आचमनी में लेकर देवता के मुख के पास ले जाकर निवेदन करना, आचमनीयं कहलाता है ।

६. स्नानीय-समर्पण—

तदन्नतर नीचे दिये हुए मन्त्र को बोलकर गंगाजल से स्नान कराने की भावना से स्नानीय जल अर्पित करे—

मन्दाकिन्यास्तु यद्वारि सर्वपापहरं शुभम् ।
तदिदं कल्पितं देव स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ।।

"देव ! मन्दाकिनी (गंगा) का जो जल समस्त पापहारी और प्रभु है, वही आपके स्नान के लिये प्रस्तुत किया गया है, आप स्वीकार करें ।

ॐ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः सम्भृतम्पृषदाज्यम् । पशूंस्तांश्चक्रे वायव्यानारण्या ग्ग्राम्याश्चये ।। (यजु० ३१।६)

ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय महागणपतये नमः, सर्वाङ्गे स्नानं समर्पयामि ।

पहले शुद्ध जल से, फिर पंचामृत से पुनः शुद्ध जल से देव-प्रतिमा को यथाविध स्नान कराना ।

*** पञ्चामृत-स्नान—**

इसके बाद नीचे लिखे मन्त्र को पढ़कर पंचामृत से गणपति देव को स्नान करायें—

पंचामृतं मयाऽनीतं पयो दधि घृतं मधु ।
शर्करा व समायुक्तं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ।।

"प्रभो ! दूध, दही, घी, मधु और शर्करा को एकत्र मिलाकर तैयार किया गया यह पंचामृत, मैं ले आया हूँ । इसे आप स्नान के लिये ग्रहण करें ।"

ॐ पंचनद्यः सरस्वतीमपियन्तिसस्रोतसः । सरस्वती-तु पंचधासो देशेऽभवत्सरित् ।। (यजु० ३४।११) ॐ सिद्धि-बुद्धिसहिताय **महागणपतये नमः** पंचामृत स्नानं समर्पयामि ।

पंचामृतस्नानान्ते शुद्धोदकस्नान समर्पयामि ।

इसके बाद दूध, दही आदि से पृथक् पृथक् स्नान कराकर शुद्ध जल से भी स्नान कराना चाहिये । दूध से स्नान कराने के लिये मन्त्र निम्नलिखित हैः—

*** पयः स्नान—**

कामधेनुसमुद्भूतं सर्वेषां जीवनं परम् ।
पावनं यज्ञहेतुश्च पयः स्नानार्थमर्पितम् ।।

"प्रभो ! कामधेनु के थन से प्रकट, सबके लिये परम-जीवन पवित्र तथा यज्ञ का हेतुभूत दूध आपको स्नान के लिये अर्पित है ।"

ॐ पयः पृथिव्याम्पयऽओषधीषुपयो दिव्यन्तरिक्षे पयोधाः । पयस्वतीः प्रदिशः सन्तुमह्यम् ।।(यजु० १८।३६)

ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय महागणपतये नमः, पयः स्नानं समर्पयामि ।

पयः स्नानन्ते शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि । शुद्धोदकस्नानान्ते आचमनीयं समर्पयामि ।

*** दधि स्नान—**

पयसस्तु समुद्भूतं मधुराम्लं शशिप्रभम् ।
दध्यानीतं मया देव स्नानर्थं प्रतिगृह्यताम् ।।

"देव ! यह दूध से उत्पन्न, मीठा-खट्टा, चन्द्राद्दश उज्ज्वल दही में ले आया हूं, आप इसे स्नान के लिये ग्रहण करें ।"

ॐ दधिक्राव्णोऽअकारिषंञ्जिष्णोरश्वस्यव्वाजिनः । सुरभिनोमुखा करत्त्प्रणऽआयूँ ठ्ँ षि तारिषत् ।। (यजु० २३। ३२) ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय महागणपतये नमः, दधिस्नानं समर्पयामि ।

*** घृत स्नान—**

नवनीतसमुत्पन्नं सर्वसंतोषकारकम् ।
घृतं तुभ्यं प्रदास्यामि स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ।।

"हे भगवान् ! नवनीत (मक्खन) से उत्पन्न तथा सबको सन्तुष्ट करने वाला यह घृत, मैं आपको अर्पित करता हूं । इसे आप स्नान के लिये स्वीकार करें ।"

ॐ घृतंघृतपावानः पिबतव्वसांव्वसापावानः पिबतान्तरिक्षस्यहविरसि स्वाहा । दिशः प्प्रदिशऽआदिशोव्विदिशऽउद्दिशोदिग्ग्भ्यः स्वाहा ।। (यजु० १९।६) ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय महागणपतये नमः, घृतस्नानं समर्पयामि ।

घृतस्नानांन्ते शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि ।

※ मधु स्नान—

पुष्परेणुसमुद्भूतं सुस्वादु मधुरं मधु ।
तेजः पुष्टिकरं दिव्यं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ।।

"प्रभो ! यह पुष्प के पराग से प्रकट और तेज की पुष्टि करने वाला दिव्य सुस्वादु, मधुर-मधु आपकी सेवा में प्रस्तुत है । आप इसे स्नान के लिये ग्रहण करें ।"

ॐ मधु वाताऽऋतायते मधुक्षरन्तिसिन्धवः । माद्ध्वीन्नः सन्त्वोषधीः ।।१।। मधुनक्तमुतोषसो मधुमत्पार्थिव ठं रजः । मधुद्द्यौरस्तु नः पिता ।।२।। मधुमान्नोव्वनस्पतिर्मधुमाँ २ऽअस्तुसूर्य्यः । माद्ध्वीर्ग्गावोभवन्तुनः ।। (यजु० १३। २७-२६) ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय महागणपतये नमः, मधुस्नानं समर्पयामि ।

मधुस्नानान्ते शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि ।

※ शर्करा-स्नान—

इक्षुसारसमुद्भूता शर्करा पुष्टिदा शुभा ।
मलापहारिका दिव्या स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ।।

"जो ईख के सार तत्व से बनी है, पुष्टि देने वाली तथा मैल को दूर कर देने वाली है । वह दिव्य शर्करा आपकी सेवा में प्रस्तुत है, आप इसे स्नान के लिये स्वीकार करें ।"

ॐ अपां ठं रसमुद्वयस ठं सूर्येसन्त ठं समाहितम् । अपा ठं रसस्य योरसस्तंवो गृह्णाम्युत्तममुपयामगृहीतोसीन्द्राय त्वाजुष्टंगृह्णाम्येषतेयोनिरिन्द्राय त्वा जुष्टतमम् ।। (यजु० ९।३) ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय महागणपतये नमः, शर्करास्नानं समर्पयामि ।

शर्करास्नानान्ते शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि ।

इसके बाद सुगन्ध तैल (इत्र) आदि अर्पित करें—

*** मांगलिक स्नान—(सुदासित तैल यज्ञ-तत्र)**

चम्पकाशोकबकुलमालतीमोगरादिभिः ।
वासितं स्निग्धताहेतु तैलं चारू प्रतिगृह्यताम् ।।

"प्रभो ! चम्पा, अशोक, मौलसिरी, मालती और मोगरा आदि से वासित तथा चिकनाहट हेतुभूत यह सुन्दर तैल आप ग्रहण करें ।"

ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय **महागणपतये नमः**, सुवासितं तैलं समर्पयामि ।

मलयाचल संभूतं चन्दनागरु संभवम् ।
चन्दनं देवदेवेश स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ।।

ॐ गन्धर्वस्त्वा विश्वावसुः परिदधातु । विश्वस्यारिष्टयै यजमानस्य परिधि रस्यग्निरिडऽईड्रितः ।।३/२।।

ॐ भूर्भुवः स्वः श्री सिद्धिऋद्धि सहिताय **महागणपतये नमः** गन्धोदक स्नानं समर्पयामि ।

नाना सुगन्धिद्रव्यं च चन्दनं रजनीयुतम् ।
उद्वर्तनं मयादत्तं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ।।

ॐ **अर्ठ्ठशुनातेऽअर्ठ्ठशुः पृच्यताम्परुषापरुः ।। गन्धस्ते सोममवतु मदाय रसोऽअच्युतः ।।२७-२०।।**

*** शुद्धोदक स्नान—(घण्टा बजावें)**

तदनन्तर गंगाजल से या तीर्थ जल से शुद्ध स्नान करायें । मन्त्र निम्नलिखित है—

गंगा च यमुना चैव गोदावरी सरस्वती ।
नर्मदा सिन्धु कावेरी स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ।।

'इस शुद्ध जल के रूप में यहां गंगा, यमुना, गोदावरी, सरस्वती, नर्मदा, सिन्धु और कावेरी उपस्थित हैं, आप स्नान के लिये जल ग्रहण करें ।

ॐ आपोहिष्ठा मयोभुवस्तानऽऊर्ज्जे दधातन। महेर-
णाय चक्षसे ।। योवः शिवतमो रसस्तस्य भाजयते हनः ।।
उशतीरिव मातरः ।।५१/११।। तस्याऽअरंग मामवो यस्य-
क्षयाय जिन्वथ ।। आपोजन यथाचनः ।।५२/११।। (यजु०
११।५०) ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय महागणपतये नमः, शुद्धो-
दक स्नानं समर्पयामि ।

❋ स्नानांग पूजा—

ॐ भूर्भुवः स्वः महागणाधिपतये नमः (बोलते हुए)

१. वस्त्रोपवस्त्रार्थे अक्षतान् समर्पयामि ।
२. यज्ञोपवीतार्थे अक्षतान् समर्पयामि ।
३. गधं समर्पयामि । ४. पुष्पाणि समर्पयामि ।
५. धूपम् आघ्रापयामि । ६. दीपं दर्शयामि ।
७. शर्करोपहार नैवेद्यम् निवेदयामि ।
८. नैवेद्यमध्ये पानीयं समर्पयामि ।
९. नैवेद्यान्ते हस्त प्रक्षालनं, मुख प्रक्षालनं, समर्पयामि ।
१०. करोद्वर्तनार्थे चंदनं समर्पयामि ।
११. मुखवासार्थे पूंगीफलं, ताम्बूलं च समर्पयामि ।
१२. हिरण्यमुद्रा दक्षिणां समर्पयामि ।
१३. कर्पूरातिक्यं दर्शयामि । १४. प्रदक्षिणां समर्पयामि ।
१५. प्रार्थनापूर्वकं नमस्करोमि । १६. क्षमापनं निवेदयामि ।

ततो निर्माल्यम् उत्तरे विसृज्य । गन्धाक्षत पुष्पाणि-
पत्राणि वा समर्प्य अभिषेकं कुर्यात् ।

फिर पूजन का सारा जलादि उत्तर में विसर्जित करके वापस गन्धादि चढ़ाकर शुद्ध जल से गणपति का व उपस्थित देव का अभिषेक करें। गणपति का अभिषेक "गणपति अथर्वशीर्ष" से अथवा सहस्रशीर्षा के १६ मन्त्रों से करें।

***"अथ गणपत्यथर्वशीर्षम्"**

ॐ नमस्ते गणपतये । त्वमेव प्रत्यक्षं तत्त्वमसि । त्वमेव केवलं कर्तासि । त्वमेव केवलं धर्तासि । त्वमेव केवलं हर्तासि । त्वमेव सर्वं खल्विदं ब्रह्मासि । त्वं साक्षादात्मासि नित्यम् । ऋतं वच्मि । सत्यं वच्मि । अव त्वं माम् । अव वक्तारम् । अव श्रोतारम् । अव दातारम् । अव धातारम् । अवानूचानमव शिष्यम् । अव पश्चात्तात् । अव पुरस्तात् । अवोत्तरात्तात् । अव दक्षिणात्तात् । अव चोर्ध्वात्तात् । अवाधरात्तात् । सर्वतो मां पाहि पाहि समन्तात् । त्वं वाङ्मयस्त्वं चिन्मयः । त्वमानन्दमयस्त्वं ब्रह्ममयः । त्वं सच्चिदानन्दा द्वितीयोऽसि । त्वं प्रत्यक्षब्रह्मासि । त्वं ज्ञानमयो विज्ञानमयोऽसि । सर्वं जगदिदं त्वत्तो जायते । सर्वं जगदिदं त्वत्तस्तिष्ठत्ति । सर्वं जगदिदं त्वयिलयमेष्यति । सर्वं जगदिद त्वयि प्रत्येति । त्वं भूमिरापोऽनलोऽनिलो नभः । त्वं चत्वारि वाक्पदानि । त्वं गुणत्रयातीतः । त्वमवस्थात्रयातीतः । त्वं देहत्रयातीतः । त्वं कालत्रयातीतः । त्वं मूलाधारस्थितोऽसि नित्यम् । त्वं शक्तित्रयात्मकः । त्वां योगिनो ध्यायन्ति नित्यम् । त्वं ब्रह्मा, त्वं विष्णुस्त्वं रुद्रस्त्वमिद्रस्त्वमग्निस्त्वं वायुस्त्वं सूर्यस्त्वं चन्द्रमास्त्वं ब्रह्मभूर्भुवः स्वरोम् । गणादीन्पूर्वमुच्चार्य वर्णादींस्तदनन्तरम् । अनुस्वारः परतरः । अर्धेन्दुलसितम् । तारेण रुद्धम् । एतत्तव मनुस्वरूपम् । गकारः पूर्वरूपम् । अकारो मध्यमरूपम् । अनुस्वारश्चान्त्यरूपम् । बिन्दुत्तररूपम् । नादः सन्धानम् । स ठ॑ हिता सन्धिः । सैषा गणेशविद्या । गणक ऋषिः । निचृद्गायत्रीछन्दः । गणपतिर्देवता ॥ ॐ गं गणपतये नमः । एकदन्ताय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि । तन्नो दन्ती प्रचोदयात् ॥ एकदन्तं

चतुर्हस्तं पाशमङ्कुशधारिणम् । रदं च वरदं हस्तेविभ्राणं मूषकध्वजम् ।। रक्तं लम्बोदरं शूर्पकर्णकं रक्तवातसम् । रक्तगन्धानुलिप्तांग रक्त पुष्पैः सूपूजितम् ।। भक्तानुकम्पिनं देवं जगत्कारणमच्युतम् । आविर्भूतं च सृष्टयादौ प्रकृतेः पुरुषात्परम् ।। एवं ध्यायति यो नित्यं स योगी योगिनां वरः ।। नमो व्रातपतये नमो गणपतये नमः प्रमथपतये नमस्तेऽस्तु लम्बोदरायैकदन्ताय विघ्ननाशिने शिवसुताय श्रीवरदमूर्तये नमः ।। एतदथर्वशीर्षं योऽधीते । स ब्रह्मभूयाय कल्पते । स सर्वविघ्नैर्न बाध्यते स सर्वतः सुखमेधते । स पंचमहापापात्ममुच्यते ।। सांयमधीयानो दिवसकृतं पापं नाशयति । प्रातरधीयानो रात्रिकृतं पापं नाशयति । सायम्प्रातः प्रयुञ्जानोऽपापो भवति । सर्वत्राधीयानोऽपविघ्नो भवति । धर्ममर्थं कामं मोक्षं च विन्दति ।। इदमथर्वशीर्षमशिष्याय न देयम् । यो यदि मोहाद्दास्यति । त पापीयान्भवति ।। सहस्रावर्तनाद्यं यं काममधीते । तं तमनेन साधयेत् ।। अनेन गणपतिमभिषिञ्चति । स वाग्मी भवति ।। चतुर्थ्यामनश्नञ्जपति । स विद्यावान्भवति ।। इत्यथर्वणवाक्यम् ।। ब्रह्माद्यात्ररणं त्विद्यान्न विभेति कदाचनेति ।। यो दूर्वाकुंरैर्यजति । स वैश्रवणोपमो भवति ।। यो लाजैर्यजति । स यशोवान् भवति । स मेधावान् भवति ।। यो मोदकसहस्त्रेण यजति । स वांछितफलमवाप्नोति ।। यः साज्यमिद्भिर्यजति । स सर्व लभते स सर्वं लभते ।। अष्टौ ब्राह्मणान्सम्यग्ग्राहयित्वा सूर्यवर्चस्वी भवति ।। सूर्यग्रहे महानद्यां प्रतिमासन्निधौ वा जप्त्वा सिद्धमन्त्रो भवति ।। महाविघ्नात्प्रमुच्यते । महादोषात्प्रमुच्यते । महाप्रत्यवायात्प्रमुच्यते ।। स सर्वविद्भवति स सर्वविद्भवति । य एवं वेद ।। इत्युपनिषत् ।। **इति गणपत्यथर्वशीर्षम् ।।**

तब उन्हें पोंछकर शुद्धासन वा स्थापित पीठ पर बिठावे। फिर वस्त्रादि से पूजन करे।

७. **वस्त्र समर्पण**—(उत्तर पूजा)

शीतवातोष्णसंत्राणं लजाया रक्षणं परम् ।
देहातंकरणं वस्त्रमतः शान्तिं प्रयच्छ मे ।।

"प्रभो ! यह वस्त्र आपकी सेवा में अर्पित हैं। यह सर्दी, हवा और गर्मी से बचाने वाला, लज्जा का उत्तम रक्षक तथा शरीर का अलंकार है, आप इसे स्वीकार करके मुझे शान्ति प्रदान करें।"

ॐ युवा सुवासाः परिवीत आगात् स उ श्रेयान् भवति जायमानः। तं धीरासः कवय उन्नयन्ति स्वाध्यो ३ मनसा देवयन्तः ।। ॐ तस्मात्यज्ञात्सर्व० (ऋ० ३।८।४) ॐ सिद्धि-बुद्धिसहिताय महागणपतये नमः, वस्त्रं समर्पयामि ।

ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय **महागणपतये नमः,** आचमनं समर्पयामि ।*

*** उपवस्त्र (उत्तरीय) समर्पण—**

उत्तरीयं तथा देव नानाचित्रितमुत्तमम् ।
गृहाणेदं मया भक्त्या दत्तं तत् सफलीकुरु ।।

"हे देव ! नाना प्रकार के चित्रों (बेल-बूटों) से सुशोभित यह उत्तम उत्तरीय वस्त्र मैंने भक्तिपूर्वक आपको अर्पित किया हैं, आप इसे ग्रहण करें और सफल बनायें।"

ॐ सुजातोज्योतिषा सह शर्म वरूथमासदत्स्वः । व्वासो-ऽग्ग्ने विश्वरूपं ठं संव्ययस्व विभावसो ।।(यजु० ११।४०)

---

* स्नाने वस्त्रे च नैवेद्ये दद्यादाचमन तथा ।
चकाराद्यज्ञोपवीतान्तेऽपि दद्यात् ।।
(१) स्नान (२) वस्त्र (३) नैवेद्य (४) यज्ञोपवीत इन सबके बाद आचमन देना चाहिये ।

ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय महागणपतये नमः उप वस्त्रं समर्पयामि । तदन्ते आचमनीयं समर्पयामि ।

(वस्त्र के अभाव में लाल सूत एवं अलंकरण के लिये अक्षत् चढ़ाना चाहिये।)

ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय महागणपतये नमः वस्त्रोंपवस्त्रार्थे रक्तसूत्रं समर्पयामि । वस्त्रान्ते आचमनीयं समर्पयामि ।

*** अलंकरण—**

ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय महागणपतये नमः, अलंकरणार्थेअक्षतान् समर्पयामि ।

*** यज्ञोपवीत-समर्पण—**

नवभिस्तन्तुभिर्युक्तं त्रिगुणं देवतामयम् ।
उपवीतं मया दत्तं गृहाण परमेश्वर ।।

'परमेश्वर ! नौ तन्तुओं से युक्त, त्रिगुण और देवता स्वरूप यह यज्ञोपवीत मैंने आपको समर्पित किया है। आप इसे ग्रहण करें ।"

ॐ यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात् ।।
आयुष्यमग्रच प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः ।।

ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय महागणपतये नमः, यज्ञोपवीतं समर्पयामि । यज्ञोपवीतान्ते आचमनं समर्पयामि ।

*** गन्ध—**

श्रीखण्डचन्दनं दिव्यं गन्धढ्यं सुमनोहरम् ।
विलेपनं सुरश्रेष्ठ चन्दनं प्रतिगृह्यताम् ।।

"सुरश्रेष्ठ ! यह दिव्य श्रीखण्डचन्दन, सुगन्ध से परिपूर्ण एवं मनोहर है । विलेपनस्वरूप यह चन्दन आप स्वीकार करें ।"

ॐ त्वां गन्धर्वाऽअखनंस्त्वामिन्द्रस्त्वां बृहस्पतिः । त्वामोषधे सोमो राजा विद्वान्यक्ष्मादमुच्यत ।। (यजु० १२।६८)
ॐ तंयज्ञम्बर्हि० ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय महागणपते नमः, चन्दनं समर्पयामि ।

* अक्षत—

अक्षताश्च सुरश्रेष्ठ कुङ्कुमाक्ताः सुशोभिताः ।
मया निवेदिता भक्त्या गृहाण परमेश्वर ।।

"सुरश्रेष्ठ परमेश्वर ! ये कुकुंम में रंगे हुए सुन्दर अक्षत हैं, मैंने भक्ति-भाव से इन्हें आपकी सेवामें अर्पित किया है. आप इन्हें ग्रहण करें ।"

ॐ अक्षन्नमीमदन्त ह्यव प्रियाऽअधूषत । अस्तोषत स्वभानवो विप्रा नविष्ठयामतीयोजान्विन्द्रते हरी ।। (यजु० ३। ५१) ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय महागणपतये नमः, अक्षतान् समर्पयामि ।

* पुष्प-माला—

माल्यादीनि सुगन्धीनि मालत्यादीनि वै प्रभो ।
मयाहृतानि पुष्पाणि गृहाण परमेश्वर ।।

"प्रभो ! मालती आदि की सुगन्धित मालाएँ और पुष्प मेरे द्वारा लाये गये हैं, आप इन्हें पूजार्थ ग्रहण करें ।"

ॐ ओषधीः प्रतिमोदध्वंम्पुष्पवतीः प्रसूवरीः । अश्वाऽइवसजित्वरीर्वीरुधः पारयिष्णवः ।। (यजु० १२।७७) ॐ यत्पुरुषं० ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय महागणपतये नमः, पुष्पमालां समर्पयामि ।

* मन्दार-पुष्प—

वन्दारुजनमन्दार मन्दारप्रिय धीपते ।
मन्दारजानि पुष्पाणि श्वेतार्कादीन्युपेहि भोः ।।

'हे वन्दना करने वाले भक्तों के लिये मन्दार (कल्पवृक्ष) के समान कामनापूरक ! मन्दारप्रिय ! बुद्धिपते गणेश ! मन्दार के तथा श्वेत आक आदि के पुष्प आप ग्रहण कीजिये ।"

ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय महागणपतये नमः, मन्दार पुष्पाणि समर्पयामि ।

*** शमीपत्र—**

त्वत्प्रियाणि सुपुष्पाणि कोमलानि शुभानि वै ।
शमीदलानि हेरम्ब गृहाण गणनायक ।।

"गणनायक हेरम्ब ! आपके जो प्रिय सुन्दर पुष्प तथा कोमल शुभ शमीपत्र हैं, उन्हें ग्रहण कीजिये ।"

ॐ य इन्द्राय वचोयुजा ततक्षुर्मनसा हरी । शमीभिर्यज्ञमाशत ।। (ऋग० १।२०।२) ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय महागणपतये नमः, शमीपत्राणि समर्पयामि ।

*** दूर्वाङ्कुर—**

दूर्वाङ्कुरान् सुहरितानमृतान् मंगलप्रदान् ।
आनीतांस्तव पूजार्थं गृहाण गणनायक ।।

"गणनायक ! आपकी पूजा के लिये मेरे द्वारा अत्यन्त हरे, अमृतमय तथा मंगलप्रद दूर्वाङ्कुर लाये गये हैं, आप इन्हें स्वीकार करें ।"

ॐ काण्डात्काण्डात्प्ररोहन्तीपरुषः परुषस्परि । एवानो-दूर्वेप्र तनु सहस्रेण शतेन च ।।(यजु० १३।२०)ॐ सिद्धि-बुद्धिसहिताय महागणपतये नमः, दुर्वाङ्कुरान् समर्पयामि ।

*** सिन्दूर—**

सिन्दूरं शोभनं रक्तं सौभाग्यं सुखवर्धनम् ।
शुभदं कामदं चैव सिन्दूरं प्रतिगृह्यताम् ।।

"प्रभो ! सुन्दर लाल सौभाग्यस्वरूप सुखवर्धक शुभद एवं कामपूरक सिन्दूर आपकी सेवामें प्रस्तुत है, आप इसे ग्रहण करें।"

ॐ सिन्धोरिव प्राध्वने शूघनासो वातप्रमियः पतयन्ति यह्वाः। घृतस्य धारा अरुषो न वाजी काष्ठाभिन्दन्नूर्मिभिः पिन्वमानः ॥ (यजु० १७।१५) ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय महागणपतये नमः सिन्दूरं समर्पयामि।

*** नाना परिमलद्रव्य, अबीर चूर्ण—**

नानापरिमलैर्द्रव्यैर्निर्मितं चूर्णमुत्तमम्।
अबीरनामकं चूर्णं गन्धाढ्य चारू गृह्यताम् ॥

"भांति-भांति के सुगन्धित द्रव्योंसे निर्मित यह गन्धयुक्त अबीर-नामक सुन्दर तथा उत्तम चूर्ण ग्रहण कोजिये।"

ॐ अहिरिव भोगैः पर्येति बाहुं ज्याया हेतिं परिबाधमानः। हस्तघ्नो विश्वा वयुनानि विद्वान् पुमान् पुमा ठं स परिपातु विश्वतः ॥ (यजु० २९।५१) ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय महागणपतये नमः, नानापरिमलद्रव्याणि समर्पयामि।

*** दशांग धूप—(घण्टा बजाकर करें*)**

वनस्पतिरसोद्भूतो गन्धाढ्यो गन्ध उत्तमः।
आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥

"वनस्पति के रस से प्रकट, सुगन्धित, उत्तम गन्धरूप और समस्त देवताओं के सूंघने योग्य यह धूप आपकी सेवामें अर्पित हैं। प्रभो ! आप इसे ग्रहण करें।"

ॐ धूरसि धूर्व धूर्वन्तं धूर्व तंयोस्मान्धूर्वति तं धूर्वयं वयंधूर्वामः। देवानामसि वह्निनतमं ठं सस्नितमं पप्रितमं जुष्टतमं देवहूतमम् ॥ (यजु० १।८) ॐ ब्राह्मणोस्य० ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय महागणपतये नमः धूपमाघ्रापयामि।

---

*"स्नाने धूपे च दीपे च घण्टादेर्नाद माचरेत् ।।"

※ दीप दर्शन—(घण्टा बजावें)

साज्यं च वर्तिसंयुक्तं वह्निना योजितं मया ।
दीपं गृहाण देवेश त्रैलोक्यतिमिरापहम् ।।
भक्त्या दीपं प्रयच्छामि देवाय परमात्मने ।
त्राहि मां निरयाद् घोराद्दीपज्योतिर्नमोऽस्तुते ।।

"देवेश ! घी में डुबोयी रुई की बत्ती को अग्नि से प्रज्वलित करके दीप आपकी सेवामें अर्पित किया गया है, आप इसे ग्रहण करें, यह त्रिभुवन के अन्धकार को दूर करने वाला है। मैं इष्ट देवता परमात्मा गणपति को दीप देता हूँ। प्रभो ! आप मुझे घोर नरक से बचाइये। दीपज्योतिर्मय देव ! आपको नमस्कार है।"

ॐ **अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा सूर्योज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा। अग्निर्वर्चोज्योतिर्वर्चः स्वाहा सूर्यो वर्चोज्योतिर्वर्चः स्वाहा। ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा ।। (यजु० ३।९) ॐ चन्द्रमा० ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय महागणपतये नमः, दीपं दर्शयामि।**

※ नैवेद्य निवेदन—

दीप अर्पण के पश्चात् हाथ धोकर नैवेद्य अर्पण करें। नैवेद्य में भांति भांति के मोदक, गुड़ तथा ऋतु के अनुकूल उपलब्ध नाना प्रकार के उत्तमोत्तम फल प्रस्तुत करें। नैवेद्य में देय वस्तु का पहले शुद्ध-जल से प्रोक्षण करें। फिर धेनु-मुद्रा दिखाकर देवता के सम्मुख स्थापित करें। इसके बाद निम्नांकित मन्त्रों को पढ़ें—

नैवेद्यं गृह्यतां देव भक्तिं मे ह्यचलां कुरु ।
ईप्सितं मे वरं देहि परत्रं च परां गतिम् ।।

शर्कराखण्डखाद्यानि दधिक्षीर घृतानि च ।
आहारं भक्ष्यभोज्यं च नैवेद्यं प्रतिगृह्यताम् ।।

"देव ! आप नैवेद्य ग्रहण करें और अपने प्रति मेरी भक्ति को अविचल कीजिये। वान्छित वर दीजिये और परलोक में परम गति

प्रदान कीजिये। शक्कर और खांड से तैयार किये गये खाद्य पदार्थ, दही, दूध, घी तथा भक्ष्यभोज्य आहार नैवेद्य के रूप में प्रस्तुत हैं, आप यह नैवेद्य कृपा पूर्वक स्वीकार करें।"

ॐ नाभ्याऽआसी दन्तरिक्षं ठ् शीर्ष्णो द्यौः समवर्तत। पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकाँ २ अकल्पयन्॥ (यजु० ३१।१३) नैवेद्य गायत्री मंत्रेण संप्रोक्ष्य, तुलसीदलं धेनुमुद्रया अमृतीकृत्यं ग्रासमुद्रां प्रदशर्य निवेदयेत् निधाय ॐ प्राणाय स्वाहा। ॐ अपानाय स्वाहा। ॐ समानाय स्वाहा। ॐ उदानाय स्वाहा। ॐ व्यानाय स्वाहा॥ ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय **महागणपतये नमः**, नैवेद्य मोदकादिनि ऋतुफलानि च समर्पयामि।

ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय **महागणपतये नमः**, आचमनीयं मध्ये पानीयं, उत्तरापोशानं हस्तप्रक्षालनं, मुख प्रक्षालनं, अन्ते आचमनीयं च समर्पयामि।

(नैवेद्यान्न अग्नि को भी निवेदित करें)

*** करोद्वर्तन के लिये चन्दन—**

ॐ चन्दनं मलयोद्भूतं कस्तूर्यादिसमन्वितम्।
करोद्वर्तनकं देव गृहाण परमेश्वर॥

"देव ! मलयपर्वत से उत्पन्न चन्दन में कस्तूरी आदि मिलाकर मैंने करोद्वर्तन तैयार किया है। हे परमेश्वर ! आप इसे स्वीकार करें।"

टिप्पणी—तुलसी गन्ध पुष्पैक्य सम्पूज्यान्नं हरेः प्रियम्। सम्प्रोक्ष्यार्घ्यजलेनैव संरक्ष्या स्त्रैत्र सर्वदा। धेनुमुद्रां प्रदर्श्याथ ततो देवं निवेदयेत्॥ वैश्वदेवं पुराकृत्वा नित्ये चाभ्युदयेतथा। स्वाभीष्ठ देवतादिभ्यो नैवेद्य च निवेदयेत् अकृत्वा वैश्वदेवं तु नैवेद्यं यो निवेदयेत्। तदन्नं न च गृह्णन्ति देवा विष्णवादयो ध्रुवम्।

अंशुना ते अंशुः पृच्यतां परुषा परुः । गन्धस्ते सोम-मवतु मदाय रसो अच्युतः (यजु० २०।२७) ॐ सिद्धिबुद्धि-सहिताय महागणपतये नमः, चन्दनेन करोद्वर्तनं समर्पयामि ।

* पूंगी फलादिसहित ताम्बूल अर्पण—

ॐ पूगीफलं महद्दिव्यं नागवल्लीदलैर्युतम् ।
एलाचूर्णादिसंयुक्तं ताम्बूलं प्रतिगृह्यताम् ।।

"प्रभो ! महान् दिव्य पूंगीफल, इलायची और चूना आदि ये युक्त पान का बीड़ा आपकी सेवामें प्रस्तुत हैं आप इसे ग्रहण करें ।"

ॐ यत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत । वसन्तोऽस्या-सीदाज्यं ग्रीष्म इध्मः शरद्धविः ।। (यजु० ३१।१४) ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय महागणपतये नमः, मुखवासार्थ-मेलापूंगीफलादिसहितं ताम्बूलं समर्पयामि ।

* नारिकेलफल-अर्पण—

इदं फलं मया देव स्थापितं पुरतस्तव ।
तेन मे सफलावाप्तिर्भवेज्जन्मनि जन्मनि ।।

"देव ! यह नारियल का फल मैंने आपके सामने रखा हैं, इससे जन्म-जन्म में मुझे सफलता प्राप्त हो ।"

ॐ याः फलीनीर्याऽअफलाऽअपुष्पा याश्च पुष्पिणीः । बृहस्पतिप्रसूतास्ता नो मुञ्चन्त्वंहसः ।। (यजु० १२।८९) ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय महागणपतये नमः, नारिकेलफलं समर्पयामि ।

* दक्षिणा-समर्पण—

हिरण्यगर्भगर्भस्थं हेम बीजं विभावसोः ।
अनन्तपुण्यफलदमतः शान्तिं प्रयच्छ मे ।।

"सुवर्ण हिरण्यगर्भ ब्रह्मा के गर्भ में स्थित अग्नि का बीज हैं। वह अनन्त पुण्य-फल प्रदान करने वाला है। भगवन्! वह आपकी सेवामें अर्पित है, अत: इसे स्वीकार कर मुझे शान्ति प्रदान करें।"

ॐ हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्यजातः पतिरेक आसीत्। स दाधार पृथिवी द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ (यजु० १३।.)

ॐ यद्दत्तं यत्परादानं यत्पूर्तं याश्च दक्षिणाः।
तदग्नि वैश्वकर्म्मणः स्वर्देवेषु नो दधत् ॥६४/१८॥

ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय महागणपतये नमः, कृतायाः पूजायाः साद्गुण्यार्थं द्रव्यदक्षिणां समर्पयामि।

*** नीराजन या आरार्तिक—(आरती)**

कदलीगर्भसम्भूतं कर्पूरं तु प्रदीपितम्।
आरार्तिकमहं कुर्वे पश्य मे वरदो भव ॥

'प्रभो! केले के गर्भ से उत्पन्न यह जलाया गया कपूर हैं, इसी के द्वारा मैं आपकी आरती करता हूं। आप इसे देखिये और मेरे लिये वरदायक होइये।"

ॐ इदं ठ्ं हविः प्रजननं मे अस्तु, दशवीरं ठ्ं सर्वगण ठ्ं स्वस्तये। आत्मसनि प्रजासनि पशुसनि लोकसन्यभय-सनिः। अग्निः प्रजां बहुलां मे करोत्वन्नं पयो रेतो अस्मासु धत्त ॥ (यजु० १९।४८) ॐ आ रात्रि पार्थिवं ठ्ं रजः पितुरप्रायि धामभिः। दिवः सदाठ्ंसि बृहती तिष्ठसऽ-आत्वेषं वर्तते तमः ॥ (यजु० ३४।३२)

ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय महागणपतये नमः, कर्पूर-नीराजनं समर्पयामि।

*** पुष्पाञ्जलि-समर्पण—**

नानासुगन्धिपुष्पाणि यथाकालोद्भवानि च।
पुष्पाञ्जलिर्मया दत्तो गृहाण परमेश्वर ॥

"परमेश्वर ! यथा समय उत्पन्न होने वाले नाना प्रकार के सुगन्धित पुष्प मैंने पुष्पांजलि के रूप में अर्पित किये हैं, आप इन्हें स्वीकार करें।"

ॐ यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् । ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः ।। (यजु० ३१।१६) ॐ गणानां त्वा गणपति ठं हवामहे प्रियाणात्वा प्रियपति ठं हवामहे निधिनांत्वा निधिपति ठं हवामहे वसो मम । आहमजानि गर्भधमात्वजासि गर्भधम् ।। (यजु० २३।१९) ॐ अम्बे अम्बिकेऽम्बालिके न मा नयति कश्चन । ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकां काम्पीलवासिनीम् ।। (यजु० १९।६)

ॐ राजाधिराजाय प्रसह्यसाहिने । नमो वयं वैश्रवणाय कुर्महे । समे कामान् काम कामाया मह्यं कामेश्वरों वैश्रवणोदधातु कुबेराय वैश्रवणाय । महाराजाय नमः ।

ॐ स्वस्ति । साम्राज्यं, भोज्यं, स्वराज्यं, पारमेष्ठ्यं, राज्यं, महाराज्यमाधिपत्यमयं समन्तपर्यायी स्यात् सार्वभौमः । सार्वायुषऽआन्तादापरार्धात् । पृथिव्यै समुद्रपर्यन्तायाऽएकराडिति । तदप्येष श्लोकोऽभिगीतो मरुतः परिवेष्टारो मरुत्तस्यावसन् गृहे । आविक्षितस्य कामप्रेर्विश्वेदेवाः सभासद इति ।

ॐ विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतोमुखो विश्वतोबाहुरुत विश्वतस्पात् । सम्बाहुभ्यां धमति सम्पतत्रैर्द्यावाभूमी जनयन् देवऽएकः ।। (यजु० १७।१९)

ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय महागणपतये नमः, मन्त्रपुष्पाञ्जलिं समर्पयामि ।

* प्रदक्षिणा—

यानि कानि च पापानि ज्ञाताज्ञातकृतानि च ।
तानिसर्वाणि नश्यन्ति प्रदक्षिणपदे-पदे ।।

"मनुष्य द्वारा जाने या अनजाने में जो कोई पाप किये गये हैं, वे परिक्रमा करते समय पद-पद पर नष्ट होते हैं।"

ॐ ये तीर्थानि प्रचरन्ति सृकाहस्ता निषङ्गिणः ।
तेषां ठ्ँ सहस्रयोजनेऽवधन्वानि तन्मसि ।। (यजु० १६।६१)

ॐ सप्तास्य० ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय महागणपतये नमः, प्रदक्षिणां* समर्पयामि ।

*** विशेषार्घ्यं समर्पण—**

तदनन्तर जल, गन्ध, अक्षत, फल, फूल, दूर्वा और दक्षिणा एक ताम्रमय पात्र में रखकर दोनों घुटनों को पृथ्वी पर टेक कर उक्त अर्घ्यपात्र (ताम्रपात्र) को दोनों हाथों की अंगुलियों में लेकर और उसे मस्तक से लगाकर निम्नांकित श्लोकों को पढ़ते हुए श्रीगणपति को अर्घ्य दे :—

रक्ष रक्ष गणाध्यक्ष रक्ष त्रैलोक्य रक्षक ।
भक्तानामभयं कर्ता त्राता भव भवार्णवात् ।

---

* प्रदक्षिणा—एकां विनायके कुर्याद्द्वे, सूर्ये तिस्र ईश्वरे ।
चतस्रः केशवे कुर्यात्सप्ताश्वत्थे प्रदक्षिणाः ।।
एका चण्ड्याः रवे सप्त, तिस्रः कार्या विनायके ।
हरेश्चतस्रः कर्तव्याः शिवस्यार्ध प्रदक्षिणा ।।
वृषं चण्डं, वृषं चैव सोमसूत्र पुनर्वृषम् ।
अपसव्यं यतीनान्तु सव्यन्तु ब्रह्मचारिणाम् ।।
सव्याऽपसव्यं गृहिणामेवं शम्भोः प्रदक्षिणा ।
सव्यं व्रजेत्ततोऽसव्यं प्रनाल नैव लङ्घयेत् ।।

गणपति को एक, सूर्य के दो, कृष्ण के चार, अश्वत्थ (पीपल) के वृक्ष के सात दूसरे मत से चण्डी को एक, सूर्य को सात, विष्णु को चार, गणपति को तीन एवं शिवजी के आधी प्रदक्षिणा होती है। वृषभ से द्वारपाल की तरफ, फिर वहां से परनाल, तथा परनाल से वृष की तरफ प्रदक्षिणा। यति लोग बायी तरफ से, ब्रह्मचारी लोग दायी तरफ से तथा गृहस्थी लोग दोनों तरफ से प्रदक्षिणा कर सकते हैं।

द्वैमातुर कृपासिन्धो षाण्मातुरग्रज प्रभो।
वरदस्त्वं वरं देहि वांछितं वाञ्छितार्थद।
अनेन सफलार्घ्येण सफलोऽस्तु सदामम ।।

त्रिलोकी की रक्षा करने वाले गणाध्यक्ष! रक्षा कीजिये। रक्षा कीजिये, रक्षा कीजिये। आप भक्तों को अभय देने वाले और भव-सागर से उनकी रक्षा करने वाले होइये। दयासागर! आप दो माताओं के पुत्र होने से 'द्वैमातुर" कहे गये हैं।

"प्रभो! आप षाण्मातुर स्कन्द के बड़े भाई हैं, वरदाता हैं, वर दीजिये अभीष्ट वस्तुओं के दाता गणेश! मेरी वाच्छा पूर्ण कीजिये। इस फलयुक्त अर्घ्य-दान से आप मेरे लिये सफल-फलदाता होइये।"

ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय **महागणपतये नमः**, विशेषार्घ्यं समर्पयामि।

* तत्पश्चात् गुप्त **प्रार्थना**,—नमस्कार, अपराधक्षमापन करते हुये देवता का विसर्जन किया जाता है। यदि इनका पूजन गौण ही तथा प्रधान देवता कोई अन्य हो तो प्रधान देवता की उत्तर पूजन के पश्चात् ही अपराध क्षमापन एवं विसर्जन होता है।

* पुरुषसूक्त के षोड़श मन्त्र कोई भी देवता के षोडशोपचार पूजन में काम आ सकते है केवल महागणपतये की जगह अभीष्ट देवता का नाम चतुर्थी विभक्ति में लिया जायेगा। जैसे **शिवाय नमः**, **अम्बिकायै नमः**, **विष्णवे नमः**, **सूर्याय नमः**, इत्यादि।

जहां तक ब्रह्मकर्म में ही पुराणोक्त श्लोक काम में न लाकर केवल वैदिक विधान से करे। ब्राह्मणेतर लोगों के लिये पुराणोक्त श्लोकों का विधान है। विस्तार से करना हो तो दोनों ही काम में ले सकते।

विशेष टिप्पण—

"ब्राह्मवैष्णवरौद्रैस्तु सावित्रैर्मित्र वारुणैः ।
तल्लिङ्गैरेव मन्त्रैस्तु ह्यर्चयेत्सुसमाहितः ॥

ब्रह्मा, विष्णु, शिव, अम्बा, सूर्य, वरुण इनके पूजन में इनसे सम्बन्धित सूक्तों का पाठ करना चाहिये ।

षोडशोपचार पूजा में अलग-अलग देवताओं के अलग-अलग सूक्तों से की गई पूजा भी शास्त्रविहित हैं, परन्तु यजुर्वेदीय ऋषि 'पुरुषसूक्त' को ही सब प्रकार के देवताओं के पूजन के लिये सर्वश्रेष्ठ मानते है ।

यजुर्वेद के ऋषियों द्वारा सर्वत्र सर्वदेवपूजन में पुरुष-सूक्त ही विहित है—

यथा—आद्ययाऽऽवाहयेद्देवमृचा तु पुरुषोत्तमम् ।
द्वितीययाऽऽसनं दद्यात्पाद्यं चैव तृतीयया ॥
अर्घ्यंश्चतुर्थ्या दातव्यः पञ्चम्याऽऽचमनं तथा ।
षष्ठ्या स्नानं प्रकुर्वीत, सप्तम्या वस्त्रधौतकम् ॥
यज्ञोपवीतं चाष्टम्यां नवम्या गन्धमेव च ।
चतुर्दश्या नमस्कारं, पञ्चदश्या प्रदक्षिणाः ॥
षोडश्योद्वासनं कुर्याच्छेष कर्माणि पूर्ववत् ।
तञ्चसर्वे जपेद्भूयः पौरुषं सूक्तमेव च ॥

जोधपुर के विद्वान् गणपति को दूर्वाङ्कुर चढ़ाते वक्त निम्न आठ नामों का प्रयोग भी करते है—

(१) गणाधिपाय नमः (२) उमापुत्राय नमः (३) अघनाशाय नमः (४) विनायकाय नमः (५) ईशपुत्राय नमः (६) सर्वसिद्धि-प्रदाय नमः (७) कुमार गुरवे नमः (८) इभवक्त्राय नमः ।

❋ अथ रुद्राभिषेक प्रयोगः

❋ अथविशिष्टषडङ्गन्यासा❋—

ॐ मनो ज्जूतिर्ज्जुषतामाज्ज्यस्य बृहस्पतिर्य्यज्ञमिमन्त-नोत्वरिष्टं य्यज्ञ ठ्ँ समिमन्दधातु। विश्वेदेवासऽइह मादय-न्तामों ३ म्प्रतिष्ठ्ठ ॥१॥ ॐ हृदयाय नमः ॥

ॐ अबोद्ध्यग्निः समिधा जनानाम्प्रतिधेनुमिवायती-मुषासम्। यह्वाऽइवप्प्रवयामुज्जिहानाः प्प्रभानवः सिस्रते नाकमच्छ ॥२॥ ॐ शिरसे स्वाहा ॥

ॐ मूर्द्धानंदिवोऽअरतिम्पृथिव्या व्वैश्वानरमृतऽआजात-मग्निम्। कवि ठ्ँ सम्म्राजमतिथिञ्जनानामासन्ना पात्र-ञ्जनयन्त देवाः ॥३॥ ॐ शिखायै वषट् ॥

ॐ मर्म्माणि ते व्वर्म्मणाच्छादयामि सोमस्त्वाराजाऽमृते नानुवस्ताम्। उरोर्व्वरीयो व्वरुणस्ते कृणोतुजयन्तन्त्वानु-देवा मदन्तु ॥४॥ ॐ कवचाय हुम् ॥

ॐ विश्श्वतश्श्चक्षुरुत व्विश्श्वतो मुखो व्विश्श्वतो बाहु-रुत व्विश्श्वतस्प्पात्। सम्बाहुब्भ्यान्धमतिसम्पतत्रैर्द्यावा-भूमीजनयन्देवऽएकः ॥५॥ ॐ नेत्रत्रयाय वौषट् ॥

❋ चन्द्रमौलीश्वर भगवान् शङ्कर के अभिषेक के अधिकारी बनने हेतु उपरोक्त षडङ्ग न्यास आवश्यक है अन्यथा सारा कर्म निष्फल चला जाता है।

ॐ मानस्तोकेतनये मानऽआयुषि मानोगोषु मानोऽअश्वेषुरोरिषः । मानोव्वीरान्रुद्रभामिनो व्वधीर्हविष्मन्तः सदमित्त्वाहवामहे ।।६।। ॐ अस्त्रायफट् ।।

*** अथ विनियोगः—**

ॐ अस्य श्रीरुद्राध्यायमहामन्त्रस्य अघोरऋषिः । अमृतानुष्टुप्छंदः ।। संकर्षणमूर्तिस्वरूपो योऽसावादित्यः स एष रुद्रो देवता ।। ॐ नमस्ते रुद्र इति बीजम् । ॐ नमः शिवाय इति शक्तिः । शिवतराय इति कीलकम् । श्रीरुद्राध्याय महामन्त्र जपे विनियोगः ।।

*** अथ ऋष्यादिन्यासः**

ॐ अघोरऋषये नमः शिरसि ।। ॐ अमृतानुष्टुप्छंदसे नमः मुखे ।। ॐ संकर्षणमूर्ति स्वरूपो योसावादित्यः स एष रुद्रो देवतायै नमः हृदये ।। ॐ नमस्ते रुद्र इति बीजाय नमः गुह्ये ।। ॐ नमः शिवाय इति शक्तये नमः पादयोः ।। ॐ शिवतराय इति कीलकाय नमः इत्यस्त्रम् ।। ॐ श्रीरुद्राध्यायजपे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे ।।

*** अथ करन्यासः—**

ॐ अग्निहोत्रात्मने अंगुष्ठाभ्यां नमः ।। ॐ दर्शपूर्णमासात्मने तर्जनीभ्यां नमः ।। ॐ चातुर्मासात्मने मध्यमाभ्यां नमः ।। ॐ ज्योतिष्ठात्मने अनामिकाभ्यां नमः ।। ॐ निरुढे पशुबन्धात्मने कनिष्ठिकाभ्यां नमः ।। हृदयादिन्यासः ।। ॐ अग्नि होत्रात्मने हृदयाय नमः ।। ॐ दर्शपूर्णमासात्मने शिरसे स्वाहा ।। ॐ चातुर्मासात्मने शिखायै वषट् ।। ॐ ज्योतिष्ठात्मने कवचाय हुँ ।। ओं निरुढे पशुबंधात्मने नेत्रत्रयाय वौषट् ।। ओं सर्वकर्त्रात्मने अस्त्राय फट् ।।

*** अथ ध्यानम्—**

आपातालनभस्थलं त्रिभुवनं ब्रह्माण्डमौलिस्फुरत्,

ज्योतिष्फाटिकलिंग मौलिविलसत् पूर्णेन्दुराकामृतैः ।। अस्त्रोकाप्लुतमेषमेवमनिशं रुद्रानुवाकान् पठन् ध्यायेदीप्सितसिद्धये धृतपदं विप्रोऽभिषिञ्चेच्छिवम् ।।१।। ब्रह्माण्डं व्याप्त देहा यमभसितरूचा भासमाना भुजङ्गैः, कण्ठे काला कपर्द्दाः किरिटिचरुचिरा छन्दकोदण्डहस्ताः ।। अक्षारुद्राक्षमालाप्रकटितविभवा शंभवा मूर्तिभेदाः रुद्राक्षं रुद्रसूक्तं प्रकटितविभवान् नः प्रयच्छंतु सौख्यम् ।।२।।

*** पश्चिममुख ध्यानम्—**

ॐ प्रालेयामलबिंदुकुंदधवलं गोक्षीरफेनप्रभं, भस्माभ्यंङ्गमनंङ्गदेहदमनं ज्वालावलो लोचनम् ।। ब्रह्मेन्द्रादिमरुद्‌गणैः स्तुतिपरैरभ्यर्चितं योगिभि, र्वन्देऽहं सकलं कलंकरहितं स्थाणोर्मुखं पश्चिमम् ।

*** उत्तरमुख ध्यानम्—**

गौरं कुंकुमपिङ्गलं सुतिलकं व्यापाण्डुगण्डस्थलं, भ्रू विक्षेपकटाक्षवीक्षणलसत् संसक्तकर्णोत्पलम् ।। स्निग्धं बिम्बफलीधरं प्रहसितं नीलालकालंकृतं वंदे पूर्णशशांकमण्डलनिभं वक्त्रं हरस्योत्तरम् ।।

*** दक्षिणमुख ध्यानम्—**

ॐ कालाभ्रभ्रमराञ्जनाचलनिभं व्यावृत्तपिङ्गेक्षणं, खण्डेन्दुद्वयमिश्रितांशुदशनात् प्रोद्भिन्नदंष्ट्रांकुरम् ।। सर्पप्रोतकपाल शक्तिसकलं व्याकीर्णसच्छेखरं, वंदे दक्षिणमीश्वरस्यजटिलं भ्रूभंगरौद्रं मुखम् ।।

*** पूर्वमुख ध्यानम्—**

ॐ संवृत्ताग्नितडित्प्रतप्तकनकं संसिद्धतेजोरुणं, गंभीरस्मितनिः सृतोग्रदशनं प्रोद्भासिताम्राधरम् ।। बालेंदुद्युतिलोलपिंगलजटाभारप्रबद्धोरगं, वंदे सिद्धसुरासुरैश्च नमितं पूर्वंमुखं शूलिनः ।।

*** इत्यूर्ध्ववक्त्र ध्यानम्—**

व्यक्ताव्यक्तगुणोत्तरं सुवदनं षड् विंशतत्वाधिकम्। तस्मादूर्ध्वज वक्रमक्षयमिति ध्येयं सदा योगिभिः ॥ वंदे तामसवर्जितेन मनसा सूक्ष्मातिसूक्ष्मं परं, शान्तं पञ्चममोश्वरस्य वदनं खं व्यापि तेजोमयम् ॥

*** अथ शिव मानस पूजा**

रत्नैः कल्पितमासनं हिमजलैः स्नानं च दिव्याम्बरं
नानारत्नविभूषितं मृगमदामोदाङ्कितं चन्दनम्।
जातीचम्पकबिल्वपत्ररचितं पुष्पं च धूपं तथा
दीप देव दयानिधे पशुपते हृत्कल्पितं गृह्यताम् ॥१॥
सौवर्णे नवरत्नखण्डरचिते पात्रे घृतं पायसं
भक्ष्यं पञ्चविधं पयोदधियुतं रम्भाफलं पायसं।
शाकानामयुतं जलं रुचिकरं कर्पूरखण्डोज्ज्वलं
ताम्बूलं मनसा मया विरचितं भक्त्या प्रभो! स्वीकुरु ॥२॥
छत्रं चामरयोर्युगं व्यजनकं चादर्शकं निर्मलं
वीणाभेरिमृदंगकाहलकला गीतं च नृत्यं तथा।
साष्टांगं प्रणतिः स्तुतिर्बहुविधा ह्येतत् समस्तं मया
सङ्कल्पेन समर्पितं तव विभो पूजां गृहाणप्रभो ॥३॥
आत्मा त्वं गिरिजा मतिःसहचराःप्राणाःशरीरं गृहं
पूजा ते विषयोपभोगरचना निद्रा समाधिस्थितिः।
सञ्चारः पदयोः प्रदक्षिणविधिः स्तोत्राणि सर्वा गिरो
यद्यत्कर्म करोमि तत्तदखिलं शम्भो तवाऽऽराधनम् ॥४॥
करचरणकृतं वाक्कायजं कर्मजं वा
श्रवणनयनजं वा मानसं वाऽपराधम्।
विहितमविहितं वा सर्वमेतत् क्षमस्व
जय जय करुणाब्धे श्रीमहादेवशम्भो! ॥५॥

*** अधिकार क्रमः—**

(विना भस्मत्रिपुंडेन० ११) ॐ हुँ नमः इति रुद्राक्षान् प्रत्येकं अभिमंत्र्य। मालां धारयेदित्युक्तं तत्रैव। पूजाधिकारार्थं पंचाक्षरजप उक्तस्तत्रैव भविष्ये ।। महापातकयुक्तो वा मन्त्रस्यास्य जपे यथा। अधिकारीभवेत् सर्वं इति देवो ब्रवीच्छिवः ।।३।।

*** शतरुद्रीय क्रमः—**

षड्षष्टी नीलसूक्तं च पुनः षोडशमेव च। एषते द्वे नमस्ते द्वे न तं विद्वयमेव च ।। मीढुष्टमेति चत्वारि वयं च वसुसंख्यया ।। शतरुद्री समाख्याता यजुर्वेदेन भाषिता ।।

*** नमक चमक पाठे क्रमः—**

वेदेवेदाब्धिरामाश्च रामरामब्ध्यकैकका ।। द्वौ द्वौ मन्त्रौ पृथक् प्रोक्तौ नमके चमके तथा, इत्येव पाठः समीचीनम् ।।

इति ध्यात्वा मानसोपचारैः संपूज्य।

* पंचदेव स्मरण

गणनाथ सरस्वति, रवि शुक्रो बृहस्पतिः ।
पञ्चैतानि स्मरेन्नित्यं वेदवाणीप्रवर्तते ।।

[नीचे लिखे माच्छन्दः आदि तीन मन्त्र कुछ परम्पराओं में उल्लेखित हैं । प्रचलित रुद्र—पाठों में 'गणान्त्वा' से ही रुद्राष्टाध्यायी प्रारम्भ होती है ।]

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ ॥ माच्छन्दः प्रमाच्छन्दः प्रतिमाच्छन्दोऽअस्रीवयश्छन्दः पङ्क्तिश्छन्दऽ उष्णिक्छन्दो बृहतीच्छन्दो नुष्टुप्छन्दो विराट् छन्दो गायत्रीच्छन्दस्त्रिष्टुप्छन्दोजगतीच्छन्दः॥ पृथिवीच्छन्दोन्तरिक्षच्छन्दो द्यौश्छन्दःसमाश्छन्दो नक्षत्राणिच्छन्दोवाक्छन्दो मनश्छन्दः कृषिश्छन्दो हिरण्यच्छन्दो गौश्छन्दोऽजाच्छन्दोऽश्वश्छन्दः ॥ प्राणायस्वाहा ऽपानायस्वाहा व्यानायस्वाहा । अम्बे ऽअम्बिके ऽम्बालिके नमानयति कश्चन । ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकाङ्काम्पील वासिनीम् ॥

अथ 'रुद्रः' तत्रादौ—'रुद्रे प्रथमोऽध्यायः'—हरिः ॐ गणानान्त्वा गणपतिꣳ हवामहे प्रियाणान्त्वा प्रियपतिꣳ हवामहे निधीनान्त्वा निधिपतिꣳ हवामहे वसो मम । आहमजानि गर्भधमात्वमजासि गर्भधम् । १ ॥

गायत्रीं त्रिष्टुब्जगत्यनुष्टुप्पङ्क्त्या सह । बृहत्युष्णिहा कुकुप्सूचीभिः शम्यन्तु त्वा । २ $\frac{३३}{३३}$ ॥ द्विपदा याश्चतुष्पदास्त्रिपदा याश्च षट्पदाः । विच्छन्दा याश्च सच्छन्दाः सूचीभिः शम्यन्तु त्वा । ३ $\frac{३४}{३३}$ ॥ सहस्तोमाः सहछन्दसऽआवृतः सहप्रमाऽऋषयः सप्त दैव्याः । पूर्वेषाम्पन्थामनुदृश्य धीराऽअन्वालेभिरे रथ्यो न रश्मीन् । ४ $\frac{३४}{३२}$ ॥ यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवन्तदु सुप्तस्य तथैवैति । दूरङ्गमञ्ज्योतिषाञ्ज्योतिरेकन्तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु । ५ $\frac{३}{३४}$ ॥ येन कर्म्माण्यपसो मनीषिणो यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः । यदपूर्व्वं यक्षमन्तः प्रजानान्तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु । ६ $\frac{३}{३४}$ ॥ यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतम्प्रजासु । यस्मान्नऽऋते किञ्चन कर्म्म क्रियते तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु । ७ $\frac{३}{३४}$ ॥ येनेदम्भूतम्भुवनम्भविष्यत्परिगृहीतममृतेन सर्व्वम् । येन यज्ञस्तायते सप्तहोता तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु । ८ $\frac{४}{३४}$ ॥ यस्मिन्नृचः साम यजूँषि यस्मिन्प्रतिष्ठिता रथनाभाविवाराः । यस्मिँश्चित्तँ सर्व्वमोतम्प्रजानान्तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु । ९ $\frac{५}{३४}$ ॥ सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान्नेनीयतेऽभीशुभिर्व्वाजिनऽइव । हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठन्तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु । १० $\frac{६}{३४}$ ॥

इति रुद्रे प्रथमोऽध्यायः ॥ (एते ६ मन्त्राः ३४ अध्यायोक्ताः ५ माद्याः) ॥

अथ 'रुद्रे द्वितीयोऽध्यायः.' हरिः ॐ—सहस्रशीर्षा पुरुषः । सहस्राक्षः सहस्रपात् । स भूमिँ सर्व्वतस्पृत्वा त्यति-

द्दशाङ्गुलम् । १ ॥ पुरुषऽएवेदꣳ सर्वं यद्भूतं यच्च
भाव्यम् । उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति । २ ॥
एतावानस्य । महिमा तो ज्यायाँश्च पूरुषः । पादोऽस्य
विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतन्दिवि । ३ ॥ त्रिपादू-
र्ध्वऽउदैत्पुरुषः पादोऽस्येहा भवत्पुनः । ततो विष्व-
ङ्व्यक्रामत्साशनानशनेऽअभि । ४ ॥ ततो विराड-
जायत विराजोऽअधिपूरुषः । स जातोऽअत्यरिच्यत
पश्चाद्भूमिमथो पुरः । ५ ॥ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः स-
म्भृतम्पृषदाज्यम् । पशूँस्ताँश्चक्रे वायव्या नारण्या
ग्राम्याश्च ये । ६ ॥ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतऽऋचः
सामानि जज्ञिरे । छन्दाꣳसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्त-
स्मादजायत । ७ ॥ तस्मादश्वाऽअजायन्त ये के चो-
भयादतः । गावो ह जज्ञिरे तस्मात्तस्माज्जाताऽ अ-
जावयः । ८ ॥ तं यज्ञम्बर्हिषि प्रौक्षन्पुरुषञ्जातम-
ग्रतः । तेन देवाऽ अयजन्त साध्याऽ ऋषयश्च ये
। ९ ॥ यत्पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन् । मुखङ्कि-
मस्यासीत्किम्बाहू किमूरूपादाऽउच्येते । १० ॥
ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्बाहू राजन्यः कृतः । ऊरू त-
दस्य यद्वैश्यः पद्भ्याꣳशूद्रोऽअजायत । ११ ॥ चन्द्र-
मा मनसो जातश्चक्षोः सूर्योऽअजायत । श्रोत्राद्वा-
युश्च प्राणश्च मुखादग्निरजायत । १२ ॥ नाभ्याऽ-
आसीदन्तरिक्षꣳ शीर्ष्णो द्यौः समवर्त्तत । पद्भ्याम्भू-
मिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकाँ२ ॥ ऽअकल्पयन । १३ ॥
यत्पुरुषेण । हविषा देवा यज्ञमतन्वत । वसन्तोऽस्यासी-

दाज्यङ्ग्रीष्मऽइध्मःशरद्धविः । १४ ॥ सप्तास्या-
सन्परिधयस्त्रिः सप्त समिधः कृताः । देवा यद्यज्ञन्त-
न्वानाऽ अबध्नन्पुरुषम्पशुम् । १५ ॥ यज्ञेन यज्ञम-
यजन्त देवास्तानि धर्म्माणि प्रथमान्यासन् । ते ह ना-
कम्महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याःसन्ति देवाः
। १६ ॥ अद्भ्यःसम्भृतः । पृथिव्यै रसाच्च विश्वकर्म्म-
णः समवर्त्तताग्ग्रे । तस्य त्वष्टा विदधद्रूपमेति तन्म-
र्त्यस्य देवत्वमाजानमग्ग्रे । १७ ॥ वेदाहमेतम्पुरुष-
म्महान्तमादित्यवर्णन्तमसः परस्तात् । तमेव विदि-
त्वाति मृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय । १८ ॥
प्रजापतिश्चरति गर्ब्भे ऽअन्तरजायमानो बहुधा वि-
जायते । तस्य योनिम्परि पश्यन्ति धीरास्तस्मिन्ह तस्थु-
र्भुवनानि विश्वा । १९ ॥ यो देवेभ्यऽआतपति यो
देवानाम्पुरोहितः । पूर्वो यो देवेभ्यो जातो नमो
रुचाय ब्राह्मये । २० ॥ रुचम्ब्राह्मञ्जनयन्तो देवाऽ
अग्ग्रे तदब्रुवन् । यस्त्वैवम्ब्राह्मणो विद्यात्तस्य देवा-
ऽअसन्वशे । २१ ॥ श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहो-
रात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम् । इष्णन्निषा-
णामुम्मऽइषाण सर्व्वलोकम्मऽइषाण । २२ ॥ इति रुद्रे
द्वितीयोऽध्यायः ॥ (एते २२ मन्त्रा ३१ दध्यायोक्ताः १ माद्याः) ॥

अथ 'रुद्रे तृतीयोऽध्यायः' हरिः—ॐ—आशुःशिशानो
वृषभो न भीमो घनाघनःक्षोभणश्चर्षणीनाम् । स-
ङ्क्रन्दनो निमिषऽएकवीरःशतꣳ सेनाऽअजयत्साक-
मिन्द्रः । १ ॥ सङ्क्रन्दनेना निमिषेण । जिष्णुना यु-

त्कारेण दुश्च्यवनेन धृष्णुना । तदिन्द्रेण जयत तत्सह-
हध्वं युधो नरऽइषुहस्तेन वृष्णा । २ ॥ सऽइषुहस्तैः
स निषङ्गिभिर्वशी सᳬस्रष्टा स युधऽइन्द्रो गणेन ।
सᳬसृष्टजित्सोमपा बाहुशर्द्ध्युग्रधन्वा प्रतिहिता-
भिरस्ता । ३ ॥ बृहस्पते परि । दीया रथेन रक्षोहा-
मित्राँ२ ॥ अपबाधमानः । प्रभञ्जन्सेनाः प्रमृणो
युधा जयन्नस्माकमेध्यविता रथानाम । ४ ॥ बलवि-
ज्ञाय स्थविरः प्रवीरः सहस्वान्वाजी सहमानऽउग्रः ।
अभिवीरोऽअभिसत्त्वा सहोजा जैत्रमिन्द्र रथमातिष्ठ गो-
वित् । ५ ॥ गोत्रभिदं गोविदं वज्रबाहुं जयन्तमज्म
प्रमृणन्तमोजसा । इमᳬ सजाताऽअनु वीरयध्वमि-
न्द्रᳬ सखायोऽअनु सᳬरभध्वम् । ६ ॥ अभि गोत्राणि
सहसा गाहमानो दयो वीरः शतमन्युरिन्द्रः । दुश्च्यवनः
पृतनाषाडयुध्योऽस्माकᳬ सेनाऽअवतु प्रयुत्सु । ७ ॥
इन्द्रऽआसां नेता बृहस्पतिर्दक्षिणा यज्ञः पुरऽएतु सो-
मः । देवसेनानामभिभञ्जतीनां जयन्तीनां मरुतो
यन्त्वग्रम् । ८ ॥ इन्द्रस्य वृष्णो वरुणस्य राज्ञऽआ-
दित्यानां मरुताᳬ शर्द्धऽउग्रम् । महामनसां भुवन-
च्यवानां घोषो देवानां जयतामुदस्थात् । ९ ॥ उद्ध-
र्षय । मघवन्नायुधान्युत्सत्त्वनां मामकानां मनाᳬसि ।
उद्वृत्रहन्वाजिनां वाजिनान्युद्रथानां जयतां यन्तु घो-
षाः । १० ॥ अस्माकमिन्द्रः । समृतेषु ध्वजेष्व-
स्माकं याऽइषवस्ता जयन्तु । अस्माकं वीराऽ
उत्तरे भवन्त्वस्माँ२ ॥ ऽउ देवाऽअवता हवेषु ॥ ११ ॥
अमीषां चित्तं प्रतिलोभयन्ती गृहाणाङ्गान्यप्वे परेहि ।

अभिप्प्रेहि निर्दहं हृत्सुशोकैरुन्धेनामित्त्रांस्तमसा सच-
न्ताम् । १२ ।अवसृष्टापरा । पत शरव्व्ये ब्रह्मसं सᳪंशिते।
गच्छामित्त्रान्प्प्रपद्द्यस्व मामीषाङ्कञ्चनोच्छिषः । १३ ॥
प्प्रेता जयता नरऽइन्द्रो वः शर्म्म यच्छतु । उग्ग्रा वः
सन्तु बाहवो नाधृष्ष्या यथासथ । १४ ॥ असौ या ।
सेना मरुतः परेषामुब्भ्यैति नऽओजसा स्पर्द्धमाना ।
ताङ्गूहत तमसापव्रतेन यथा मीऽअन्योऽअन्यन्न जा-
नन् । १५ ॥ यत्र बाणाः सम्पतन्ति कुमारा विशिखा-
ऽइव । तन्नऽइन्द्रो बृहस्प्पतिरदितिः शर्म्म यच्छतु विश्वा-
हा शर्म्म यच्छतु । १६ ॥ मर्म्माणि ते वर्म्मणा च्छाद-
यामि सोमस्त्वा राजामृतेनानुवस्ताम् । उरोर्व्वरीयो
वरुणस्ते कृणोतु जयन्तन्त्वानु देवामदन्तु । १७ ॥
इति रुद्रे तृतीयोऽध्यायः ॥ (एते १७ मन्त्राः १७ ध्यायोक्ताः
३३ दामाः) ॥

अथ 'रुद्रे चतुर्थोऽध्यायः'—हरिः–ॐ विब्भ्राड्बृहत्पिब-
तु सोम्म्यम्मध्द्वायुर्द्दधद्यज्ञपतावविह्रुतम् । वातजूतो
योऽअभिरक्षतित्त्मना प्प्रजाः पुपोष पुरुधा विराजति
। १ ॥ उदुत्त्यञ्जातवेदसन्देवं वहन्ति केतवः । दृशे
विश्वाय सूर्य्यम् । २ ॥ येनापावकचक्षसा भुरण्यन्तञ्ज-
नाँ२ ॥ ऽअनु । त्त्वं वरुण पश्यसि । ३ ॥ दैव्व्यावद्ध्व-
र्यूऽआगतᳪं रथेन सूर्य्यत्त्वचा । मद्ध्वा यज्ञᳪं समञ्जाथे ।
तम्प्प्रत्क्नथायं वेनश्चित्रन्देवानाम् । ४ ॥ तम्प्प्रत्क्नथा ।
पूर्व्वथा विश्वथेमथा ज्येष्ठतातिम्बर्हिषदᳪं स्वर्व्विदम् ।
प्प्रतीचीनं वृजनन्दोहसे धुनिमाशुञ्जयन्तमनु यासु वर्द्धसे । * * । ५ ॥ अयं वेनश्चोदयत्पृश्निगर्ब्भा ज्यो-

तिर्ज्जरायु रजसो विमाने। इममपाᳫं सङ्गमे सूर्य्यस्य
शिशन्न विप्रा मतिभीरिहन्ति। * ६ ॥ चित्रन्देवाना-
मुदगादनीकञ्चक्षुर्म्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः । आप्रा
द्यावा पृथिवीऽअन्तरिक्षᳫं सूर्य्य आत्मा जगतस्तस्थु-
षश्च । ७ ॥ आनऽइडाभिर्व्विदथे सुशस्ति विश्वानरः
सविता देवऽएतु । अपि यथा युवानो मत्सथानो विश्वं
जगदभिपित्वे मनीषा । ८ ॥ यदद्य कच्च वृत्रहन्नुद-
गाऽअभिसूर्य्य । सर्व्वन्तदिन्द्र ते वशे । ९ ॥ तरणिर्व्वि-
श्वदर्शतो ज्योतिष्कृदसि सूर्य्य । विश्वमाभासि रोच-
नम् । १० ॥ तत्सूर्य्यस्य । देवत्वन्तन्महित्वम्मद्ध्या
कर्त्तोर्व्विततᳫं सञ्जभार । यदेदयुक्त हरितः सधस्थादा-
द्रात्री वासस्तनुते सिमस्मै । ११ ॥ तन्मित्रस्य
वरुणस्याभिचक्षे सूर्य्यो रूपङ्कृणुते द्योरुपस्थे । अन-
न्तमन्यद्रुशदस्य पाजः कृष्णमन्यद्धरितः सम्भरन्ति ।
१२ ॥ वण्महा२ ॥ ऽअसि सूर्य्य वडादित्य महा२ँ ॥
ऽअसि । महस्ते सतो महिमा पनस्यतेऽद्धादेव महा२ँ ॥
ऽअसि । १३ ॥ बट्सूर्य्य श्रवसा महा२ँ ॥ ऽअसि
सत्रा देव महा२ँ ॥ ऽअसि । मह्नादेवानामसुर्य्यः पुरो-
हितो विभुज्योतिरदाभ्यम् । १४ ॥ श्रायन्तऽइव
सूर्य्यं विश्वेदिन्द्रस्य भक्षत । वसूनि जाते जनमानऽओ-
जसा प्रतिभागन्नदीधिम । १५ ॥ अद्या देवाऽउ-
दिता सूर्य्यस्य निरᳫंहसः पिपृता निरवद्यात् । तन्नो
मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवीऽउत
द्यौः । १६ ॥ आकृष्णेन रजसा वर्त्तमानो निवेशय-

न्नमृतम्मर्त्यञ्च । हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति
भुवनानि पश्यन् । १७ ॥ इति रुद्रे चतुर्थोऽध्यायः ॥
अथ 'रुद्रे पञ्चमोऽध्यायः'—हरिः—ॐ—नमस्ते रुद्र म-
न्यव ऽउतो त ऽइषवे नमः । बाहुभ्यामुत ते नमः ।
१ ॥ याते । रुद्र शिवा तनूरघोरा पापकाशिनी । तया
नस्तन्वा शन्तमया गिरिशन्ताभिचाकशीहि । २ ॥ या-
मिषुङ्गिरिशन्त हस्ते बिभर्ष्यस्तवे । शिवाङ्गिरित्रताङ्कुरु
मा हिꣳसीः पुरुषञ्जगत् । ३ ॥ शिवेन वचसा । त्वा
गिरिशाच्छा वदामसि । यथा नः सर्वमिज्जगदयक्ष्मꣳ सु-
मना ऽअसत् । ४ ॥ अध्यवोचदधिवक्ता प्रथमो
दैव्यो भिषक् । अहीँश्च सर्वाञ्जम्भयन्त्सर्वांश्च यातु-
धान्यो धराचीः परासुव । ५ ॥ असौ यस्ताम्रोऽअ-
रुण ऽउत बभ्रुः सुमङ्गलः । ये चैनꣳ रुद्रा ऽअभितो
दिक्षु श्रिताः सहस्रशो वैषाꣳ हेड ऽईमहे । ६ ॥ असौ यो
वसर्पति नीलग्रीवो विलोहितः । उतैनङ्गोपा ऽअदृ-
श्रन्नदृश्रन्नुदहार्य्यः स दृष्टो मृडयाति नः । ७ ॥ न-
मोस्तु नीलग्रीवाय सहस्राक्षाय मीढुषे । अथो येऽ-
अस्य सत्वानोऽहन्तेभ्यो करन्नमः । ८ ॥ प्रमुञ्च ध-
न्वनस्त्वमुभयोरार्त्न्योर्ज्याम् । याश्च ते हस्त ऽइष-
वः परा ता भगवो वप । ९ ॥ विज्यन्धनुः । कपर्दिनो
विशल्यो बाणवाँ२ ॥ ऽउत । अनेशन्नस्य या ऽइषव ऽ
आभुरस्य निषङ्गधिः । १० ॥ याते । हेतिर्मीढुष्टम
हस्ते बभूव ते धनुः । तयास्मान्विश्वतस्त्वमयक्ष्मया
परिभुज । ११ ॥ परि ते धन्वनो हेतिरस्मान्वृणक्तु
विश्वतः । अथो य ऽइषुधिस्तवारे ऽअस्मन्निधेहि तम्

। १२ ॥ अवतत्य धनुष्ट्वꣳ सहस्राक्ष शतेषुधे । निशीर्य्य
शल्यानाम्मुखा शिवो नः सुमना भव । १३ ॥ नम-
स्तऽआयुधायानातताय धृष्णवे । उभाभ्यामुत ते
नमो बाहुभ्यान्तव धन्वने । १४ ॥ मा नो महान्तमुत
मा नोऽअर्भकम्मा नऽउक्षन्तमुत मा नऽ उक्षितम् ।
मा नो वधीः पितरम्मोत मातरम्मा नः प्रियास्त-
न्वो रुद्र रीरिषः । १५ ॥ मा नस्तोके । तनये मा
नऽआयुषि मा नो गोषु मा नोऽअश्वेषु रीरिषः । मा
नो वीरान्रुद्र भामिनो वधीर्हविष्मन्तः सदमित्त्वा
हवामहे । १६ ॥ नमो हिरण्यबाहवे । सेनान्ये दि-
शाञ्च पतये नमो नमो वृक्षेभ्यो हरिकेशेभ्यः पशूना-
म्पतये नमो नमः शष्पिञ्जराय त्विषीमते पथीना-
म्पतये नमो नमो हरिकेशायोपवीतिने पुष्टानाम्पतये
नमो नमो बभ्लुशाय । १७ ॥ नमो बभ्लुशाय । व्या-
धिनेऽन्नानाम्पतये नमो नमो भवस्य हेत्यै जगताम्प-
तये नमो नमो रुद्रायाततायिने क्षेत्राणाम्पतये नमो
नमः सूतायाहन्त्यै वनानाम्पतये नमो नमो रोहिताय
। १८ ॥ नमो रोहिताय । स्थपतये वृक्षाणाम्पतये
नमो नमो भुवन्तये वारिवस्कृतायौषधीनाम्पतये
नमो नमो मन्त्रिणे वाणिजाय कक्षाणाम्पतये नमो न-
मऽउच्चैर्घोषायाक्रन्दयते पत्तीनाम्पतये नमो नमः
कृत्स्नायतया । १९ ॥ नमः कृत्स्नायतया । धावते सत्वना-
म्पतये नमो नमः सहमानाय निव्याधिनऽआव्याधिनी-
नाम्पतये नमो नमो निषङ्गिणे ककुभाय स्तेनानाम्पतये
नमो नमो निचेरवे परिचरायारण्यानाम्पतये नमो

नमो वञ्चते । २० ॥ नमो वञ्चते । परिवञ्चते स्तायूना
म्पतये नमो नमो निषङ्गिणऽइषुधिमते तस्कराणाम्प-
तये नमो नमः सृकायिभ्यो जिघाँ सद्भ्यो मुष्णताम्प-
तये नमो नमोऽसिमद्भ्यो नक्तञ्चरद्भ्यो विकृन्तानाम्प-
तये नमः । २१ ॥ नमऽउष्णीषिणे । गिरिचराय कुलु-
ञ्चानाम्पतये नमो नमऽइषुमद्भ्यो धन्वायिभ्यश्च वो
नमो नमऽआतन्वानेभ्यः प्रतिदधानेभ्यश्च वो नमो
नमऽआयच्छद्भ्योऽस्यद्भ्यश्च वो नमो नमो विसृजद्भ्यः ।
२२ ॥ नमो विसृजद्भ्यो विध्यद्भ्यश्च वो नमो नमः स्व-
पद्भ्यो जाग्रद्भ्यश्च वो नमो नमः शयानेभ्यऽआ-
सीनेभ्यश्च वो नमो नमस्तिष्ठद्भ्यो धावद्भ्यश्च वो नमो
नमः सभाभ्यः । २३ ॥ नमः सभाभ्यः । सभापति-
भ्यश्च वो नमो नमोऽश्वेभ्योऽश्वपतिभ्यश्च वो नमो
नमऽआव्याधिनीभ्यो विविध्यन्तीभ्यश्च वो नमो न-
मऽउगणाभ्यस्तृँहतीभ्यश्च वो नमो नमो गणेभ्यः ।
२४ ॥ नमो गणेभ्यो । गणपतिभ्यश्च वो नमो नमो
व्रातेभ्यो व्रातपतिभ्यश्च वो नमो नमो गृत्सेभ्यो गृत्स-
पतिभ्यश्च वो नमो नमो विरूपेभ्यो विश्वरूपेभ्यश्च
वो नमो नमः सेनाभ्यः । २५ ॥ नमः सेनाभ्यः । सेना-
निभ्यश्च वो नमो नमो रथिभ्योऽअरथेभ्यश्च वो नमो
नमः क्षत्तृभ्यः सङ्ग्रहीतृभ्यश्च वो नमो नमो महद्भ्योऽअ-
र्भकेभ्यश्च वो नमः । २६ ॥ नमस्तक्षभ्यो रथकारेभ्यश्च
वो नमो नमः कुलालेभ्यः कर्मारेभ्यश्च वो नमो न-
मो निषादेभ्यः पुञ्जिष्ठेभ्यश्च वो नमो नमः श्वनिभ्यो

मृगयुभ्यश्च वो नमो नमःश्वभ्यः ।२७॥ नमःश्व-
भ्यः श्वपतिभ्यश्च वो नमो नमो भवाय च रुद्राय
च नमः शर्वाय च पशुपतये च नमो नीलग्रीवाय च
शितिकण्ठाय च नमः कपर्दिने ।२८॥ नमः कपर्दिने ।
च व्युप्तकेशाय च नमः सहस्राक्षाय च शतधन्वने च
नमो गिरिशयाय च शिपिविष्टाय च नमो मीढुष्टमा-
य चेषुमते च नमो ह्रस्वाय ।२९॥ नमो ह्रस्वाय ।
च वामनाय च नमो बृहते च वर्षीयसे च नमो वृद्धा-
य च सवृधे च नमोऽग्र्याय च प्रथमाय च नमऽआ-
शवे ।३०॥ नमऽआशवे । चाजिराय च नमः शी-
घ्र्याय च शीभ्याय च नमऽऊर्म्याय चावस्वन्याय
च नमो नादेयाय च द्वीप्याय च ।३१॥ नमो ज्ये-
ष्ठाय । च कनिष्ठाय च नमः पूर्वजाय चापरजाय च
नमो मध्यमाय चापगल्भाय च नमो जघन्याय च
बुध्न्याय च नमः सोभ्याय ।३२॥ नमः सोभ्याय ।
च प्रतिसर्याय च नमो याम्याय च क्षेम्याय च
नमः श्लोक्याय चावसान्याय च नमऽउर्वर्याय च ख-
ल्याय च नमो वन्याय ।३३॥ नमो वन्याय । च
कक्ष्याय च नमः श्रवाय च प्रतिश्रवाय च नमऽआ-
शुषेणाय चाशुरथाय च नमः शूराय चावभेदिने च
नमो बिल्मिने ।३४॥ नमो बिल्मिने । च कव-
चिने च नमो वर्मिणे च वरूथिने च नमः श्रुताय
च श्रुतसेनाय च नमो दुन्दुभ्याय चाहनन्याय च
नमो धृष्णवे ।३५॥ नमो धृष्णवे । च प्रमृशाय च
नमो निषङ्गिणे चेषुधिमते च नमस्तीक्ष्णेषवे चायुधिने

च नम॑÷स्वायुधाय॑ च सुधन्व॑ने च । ३६ ॥ नम॒ऽ स्रु॒त्याय॑ । च॒ पथ्या॑य च॒ नम॒ऽकाट्याय॑ च॒ नीप्या॑य च॒ नम॒ऽकुल्या॑य च सर॒स्याय॑ च॒ नमो॑ नादेयाय॑ च वैश॒न्ताय॑ च॒ नम॒ऽकूप्या॑य । ३७ ॥ नम॒ऽकूप्या॑य । चाव॒ट्याय॑ च॒ नमो॒ वीध्र्या॑य चातप्या॑य च॒ नमो॒ मेघ्या॑य च विद्युत्याय॑ च॒ नमो॒ वर्ष्या॑य चाव॒र्ष्याय॑ च॒ नमो॒ वात्या॑य । ३८ ॥ नमो॒ वात्या॑य । च॒ रेष्म्या॑य च॒ नमो॑ वास्तव्या॑य च वास्तुपाय॑ च॒ नम॒ऽसोमा॑य च रु॒द्राय॑ च॒ नम॑स्ताम्राय॑ चारु॒णाय॑ च॒ नम॑÷शङ्गवे॑ ।३९ ॥ नम॑÷शङ्गवे॑ च पशुपत॑ये च॒ नम॑ऽउग्राय॑ च भीमाय॑ च॒ नमो॑ऽग्रेव॒धाय॑ च दूरे व॒धाय॑ च॒ नमो॑ ह॒न्त्रे च॒ हनी॑यसे च॒ नमो॑ वृक्षेभ्यो॒ हरि॑केशेभ्यो नम॑स्ताराय॑ । ४० ॥ नम॑÷शम्भवाय॑ । च मयो॒ भवाय॑ च॒ नम॑÷ श॒ङ्कराय॑ च मयस्क॒राय॑ च॒ नम॑÷शिवाय॑ च शिवत॑राय च । ४१ ॥ नम॒ऽपार्या॑य । चावार्या॑य च॒ नम॑÷प्रतर॑णाय चोत्तर॑णाय च॒ नम॒स्तीर्थ्या॑य च॒ कूल्या॑य च॒ न॒मऽशष्प्या॑य च॒ फेन्या॑य च॒ नम॑÷सिकत्याय॑ । ४२ ॥ नम॑÷सिकत्याय॑ । च प्रवाह्याय॑ च॒ नम॑÷कि॒ꣳशिलाय॑ च क्षयणाय॑ च॒ नम॑÷कपर्दिने॑ च पुलस्तये॑ च॒ नम॑ऽइरि॒ण्याय॑ च प्रपथ्याय॑ च॒ नमो॒ व्रज्या॑य । ४३ ॥ नमो॒ व्रज्या॑य । च॒ गोष्ठ्या॑य च॒ नम॒स्तल्प्या॑य च॒ गेह्या॑य च॒ नमो॑ हृदय्याय॑ च निवेष्प्याय॑ च॒ नम॒ऽकाट्या॑य च गह्वरेष्ठाय॑ च॒ नम॒ऽशुष्क्या॑य । ४४ ॥ नम॒ऽशुष्क्या॑य । च हरित्याय॑ च॒ नम॑÷पाꣳसव्याय॑ च रजस्याय॑ च॒ नमो॒ लोप्या॑य चोलप्याय॑ च॒ नम॒ऽऊर्व्या॑य च॒ सू-

र्ण्याय च नमः पर्ण्याय । ४५ ॥ नमः पर्णाय । च पर्णश
दाय च नमऽउद्गुरमाणाय चाभिघ्नते च नमऽआखि-
दते च प्रखिदते च नमऽइषुकृद्भ्यो धनुष्कृद्भ्यश्च वो-
नमो नमो वः किरिकेभ्यो देवानाꣳ हृदयेभ्यो नमो
विचिन्वत्केभ्यो नमो विक्षिणत्केभ्यो नमऽआनिर्हु-
तेभ्यः । ४६ ॥ द्रापेऽअन्धसस्पते दरिद्रन्नीललोहित ॥
आसां प्रजानामेषां पशूनां मा भेर्मारोङ्मो च नः किं-
चनाममत् । ४७ ॥ इमा रुद्राय । तवसे कपर्दिने क्ष-
यद्वीराय प्रभरामहे मतीः । यथा शमसद्द्विपदे च-
तुष्पदे विश्वं पुष्टं ग्रामेऽअस्मिन्ननातुरम् । ४८ ॥
या ते । रुद्र शिवा तनूः शिवा विश्वाहा भेषजी । शि-
वा रुतस्य भेषजी तया नो मृड जीवसे । ४९ ॥ परि नो
रुद्रस्य हेतिर्वृणक्तु परि त्वेषस्य दुर्मतिरघायोः । अव-
स्थिरा मघवद्भ्यस्तनुष्व मीढ्वस्तोकाय तनयाय मृड
। ५० ॥ मीढुष्टम शिवतम । शिवो नः सुमना भव ।
परमे वृक्षऽआयुधन्निधाय कृत्तिं वसानऽआचर पिनाक-
म्बिभ्रदागहि ॥ ५१ ॥ विकिरिद्र विलोहित । नम-
स्तेऽअस्तु भगवः । यास्ते सहस्रꣳ हेतयोन्यमस्मन्नि-
वपन्तु ताः । ५२ ॥ सहस्राणि सहस्रशो बाह्वोस्तव हे-
तयः । तासामीशानो भगवः पराचीना मुखा कृधि ।
। ५३ ॥ असंख्याता सहस्राणि । ये रुद्राऽअधिभूम्याम्
तेषाꣳ सहस्रयोजनेव धन्वानि तन्मसि । ५४ ॥
अस्मिन्महत्यर्णवेन्तरिक्षे भवाऽअधि । तेषाꣳ सह-
स्रयोजनेव धन्वानि तन्मसि । ५५ ॥ नीलग्रीवाः शि-

तिकण्ठा दिवꣳ रुद्राऽउपश्रिताः । तेषाꣳ सहस्र-
योजनेवधन्वानितन्मसि । ५६ ॥ नीलग्ग्रीवाःशि-
तिकण्ठाः । शर्वाऽअधःक्क्षमाचराः । तेषाꣳ सहस्रयो-
जनेवधन्वानितन्मसि । ५७ ॥ ये वृक्षेषु । शष्पिञ्जरा
नीलग्ग्रीवा विलोहिताः । तेषाꣳ सहस्रयोजनेवधन्वा-
नितन्मसि । ५८ ॥ ये भूतानामधिपतयो विशिखासः
कपर्द्दिनः । तेषाꣳ सहस्रयोजनेवधन्वानितन्मसि ।
। ५९ ॥ ये पथाम्पथिरक्षयऽऐलबृदाऽआयुर्य्युधः । ते-
षाꣳ सहस्रयोजनेवधन्वानितन्मसि । ६० ॥ ये ती-
र्त्थानि । प्प्रचरन्ति सृकाहस्ता निषङ्गिणः । तेषाꣳ स-
हस्रयोजनेवधन्वानितन्मसि । ६१ ॥ येन्नेषु । विवि-
द्ध्यन्ति पात्रेषु पिबतो जनान् । तेषाꣳ सहस्रयोजनेव-
धन्वानितन्मसि । ६२ ॥ यऽएतावन्तश्च भूयाꣳ स-
श्च दिशो रुद्रा वितस्त्थिरे । तेषाꣳ सहस्रयोजनेवध-
न्वानितन्मसि । ६३ ॥ नमोस्तु । रुद्रेब्भ्यो ये दिवि
येषां वर्षमिषवः । तेब्भ्यो दशप्प्राचीर्द्दशदक्षिणा दशप्प्र-
तीचीर्द्दशोदीचीर्द्दशोर्द्ध्वाः । तेब्भ्यो नमोऽअस्तु ते नो
वन्तु ते नो मृडयन्तु ते यन्द्विष्मो यश्च नो द्वेष्टितमे-
षाञ्जम्भे दद्धमः । ६४ ॥ नमोस्तु । रुद्रेब्भ्यो येन्तरिक्षे
येषां वातऽइषवः । तेब्भ्यो दशप्प्राचीर्द्दशदक्षिणा दश-
प्प्रतीचीर्द्दशोदीचीर्द्दशोर्द्ध्वाः । तेब्भ्यो नमोऽअस्तु ते नो
वन्तु ते नो मृडयन्तु ते यन्द्विष्मो यश्च नो द्वेष्टितमे-
षाञ्जम्भे दद्धमः । ६५ ॥ नमोस्तु । रुद्रेब्भ्यो ये पृथि-
व्यां येषामन्नमिषवः । तेब्भ्यो दशप्प्राचीर्द्दशदक्षिणा
दशप्प्रतीचीर्द्दशोदीचीर्द्दशोर्द्ध्वाः । तेब्भ्यो नमोऽअस्तु

ते नोवन्तु ते नो मृडयन्तु ते यन्द्विष्मो यश्च नो द्वेष्टि
तमेषाञ्जम्भे दद्धमः । ६६ ॥ इति रुद्रे पञ्चमोध्यायः ॥
(एते ६६ मन्त्राः १६ ध्यायोक्ताः १ मात्राः)

※ शतरुद्री क्रमे विशेषः—

नमस्ते रुद्र मन्यवऽउतो तऽइषवे नमः बाहुभ्यामुत ते नमः ॥६७॥ या ते रुद्र शिवा तनूरघोराऽपापकाशिनी ॥ तया नस्तन्वा शन्तमया गिरिशन्ताभिचाकशीहि ॥६८॥ यामिषुं गिरिशन्त हस्ते बिभर्ष्यस्तवे ॥ शिवां गिरित्र तां कुरु मा हिंसीः पुरुषं जगत् ॥६९॥ शिवेन वचसा त्वा गिरिशाच्छावदामसि ॥ यथा नः सर्वमिज्जगदयक्ष्मं सुमना ऽअसत् ॥ ७० ॥ अध्यवोचदधिवक्ता प्रथमो दैव्यो भिषक् ॥ अहींश्च सर्वाञ्जम्भयन्त्सर्वाश्च यातुधान्योऽधराचीः परासुव ॥७१॥ असौ यस्ताम्रो ऽअरुण ऽउत बभ्रुः सुमङ्गलः ॥ ये चैनं रुद्रा ऽअभितो दिक्षु श्रिताः सहस्रशोऽवैषां हेड ऽईमहे ॥७२॥ असौ योऽवसर्पति नीलग्रीवो विलोहितः ॥ उतैनं गोपा ऽअदृश्रन्नदृश्रन्नुदहार्य्यः स दृष्टो मृडयाति नः ॥७३॥

नमोऽस्तु नीलग्रीवाय सहस्राक्षाय मीढुषे ॥ अथो ये ऽअस्य सत्वानोऽहन्तेभ्योऽकरन्नमः ॥७४॥ प्रमुञ्च धन्वनस्त्वमुभयोरार्त्न्योर्ज्याम् ॥ याश्च ते हस्त ऽइषवः परा ता भगवो वप ॥७५॥ विज्यं धनुः कपर्दिनो विशल्यो बाणवाँ२ ऽउत ॥ अनेशन्नस्य याऽइषव ऽआभुरस्य निषङ्गधिः ॥७६॥ या ते हेतिर्मीढुष्टम हस्ते बभूव ते धनुः ॥ तयास्मान्विश्वतस्त्वमयक्ष्मया परिभुज ॥७७॥ परि ते धन्वनो हेतिरस्मान्वृणक्तु विश्वतः ॥ अथो य ऽइषुधिस्तवारे ऽअस्मन्निधेहि तम् ॥७८॥ अवतत्य धनुष्ट्वं सहस्राक्ष शतेषुधे ॥ निशीर्य्य शल्यानां मुखा शिवो नः सुमना भव ॥७९॥ नमस्त ऽआयुधायानातताय धृष्णवे ॥ उभाभ्यामुत ते नमो बाहुभ्यां तव धन्वने ॥८०॥

मा नो महान्तमुत मा नो ऽअर्भकं मा न ऽउक्षन्तमुत मा न ऽउक्षितम् ॥ मा नो वधीः पितरं मोत मातरं मा नः प्रियास्तन्वो रुद्र रीरिषः ॥८१॥ मा नस्तोके तनये मा न ऽआयुषि मा नो गोषु मा नो ऽअश्वेषु रीरिषः ॥ मा नो वीरान्रुद्र भामिनो वधीर्हविष्मन्तः सदमित्त्वा हवामहे ॥८२॥ एष ते रुद्र भागः सह स्वस्राम्बिकया तं जुषस्व स्वाहैष ते रुद्र भाग ऽआखुस्ते पशुः ॥८३॥ अव रुद्रमदीमह्यव देवं त्र्यम्बकम् ॥ यथा नो वस्यसस्करद्यथा नः श्रेयसस्करद्यथा नो व्यवसाययात् ॥८४ नमस्ते रुद्र मन्यवऽउतोत ऽइषवे नमः ॥ बाहुभ्यामुत ते नमः ॥८५॥ या ते रुद्र शिवा तनूरघोराऽपापकाशिनी ॥ तया नस्तन्वा शन्तमया गिरिशन्ताभिचाकशीहि ॥८६॥

न तं विदाथ य ऽइमा जजानान्यद्युष्माकमन्तरम्बभूव ॥ नीहारेण प्रावृता जल्प्या चासुतृप ऽउक्थशासश्चरन्ति ॥ ८७ ॥ विश्वकर्मा ह्यजनिष्ट देव ऽआदिद्गन्धर्वो ऽअभवद्द्वितीयः ॥ तृतीयः पिता जनितौषधीनामपां गर्भं व्यदधात्पुरुत्रा ॥८८॥ मीढुष्टम शिवतम शिवो नः सुमना भव ॥ परमे वृक्ष ऽआयुधन्निधाय कृत्तिं वसान ऽआचर पिनाकम्बिभ्रदागहि ॥८९॥ विकिरिद्र विलोहित नमस्ते ऽअस्तु भगवः ॥ यास्ते सहस्रं हेतयोऽन्यमस्मन्निवपन्तु ताः ॥९०॥ सहस्राणि सहस्रशो बाह्वोस्तव हेतयः ॥ तासामीशानो भगवः पराचीना मुखा कृधि ॥९१॥ असंख्याता सहस्राणि ये रुद्रा ऽअधि भूम्याम् । तेषां सहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि ॥९२॥

अथ 'रुद्रे षष्ठोध्यायः.' हरिः—ॐ—व्वयꣳ सोम व्व्रते तव
मनस्तनूषु बिब्भ्रतः। प्प्रजावन्तःसचेमहि।१॥ एषते।
रुद्रभागः सहस्वस्राम्बिकया। तञ्जुषस्व स्वाहैषते रुद्र
भागऽआखुस्ते पशुः। २॥ अव रुद्रमदीमह्यव देव-
न्त्र्यम्बकम्। यथा नो व्वस्यसस्करद्यथा नःश्रेयस-
स्करद्यथा नो व्यवसाययात्। ३॥ भेषजमसि। भे
षजङ्गवेश्वाय पुरुषाय भेषजम्। सुखम्मेषाय मेष्यै
। ४॥ त्र्यम्बकं य्यजामहे। सुगन्धिम्पुष्टिवर्द्धनम्। उर्व्वा-
रुकमिव बन्धनान्मृत्योर्म्मुक्षीय मामृतात्। त्र्यम्बकं
य्यजामहे सुगन्धिम्पतिवेदनम्। उर्व्वारुकमिव बन्ध-
नादितो मुक्षीयमामुतः। ५॥ एतत्ते। रुद्रा वसन्तेनं
परो मूजवतोतीहि। अवततधन्वा पिनाकवासः
कृत्तिवासाऽअहिꣳसन्नः शिवोतीहि। ६॥ त्र्यायुष-
ञ्जमदग्नेः कश्यपस्य त्र्यायुषम्। यद्देवेषु त्र्यायुषन्तन्नोऽ-
अस्तु त्र्यायुषम्। ७॥ शिवो नामासि स्वधितिस्ते
पिता नमस्तेऽअस्तु मा मा हिꣳसीः। निवर्त्तयाम्या-
युषेन्नाद्याय प्प्रजननाय रायस्पोषाय सुप्रजास्त्वाय
सुवीर्य्याय। ८॥ ॥ (एते ८ मन्त्राः
२ षाध्यायोक्ताः ५६ दाद्याः)॥

—ॐ—उग्रश्च। भीमश्च
ध्वान्तश्च धुनिश्च। सासहाँश्चाभियुग्वा च विक्षिपः
स्वाहा। १॥ अग्निꣳहृदयेनाशनिꣳ हृदयाग्रेण प-

★ ९२+८ षष्ठाध्याय के कुल १०० मन्त्र होने से यहां शतरुद्र-
क्रम समाप्त होता है।

शुपतिङ्कृत्स्नहृदयेन भवं यक्ना । शर्वम्मतस्नाभ्या-
मीशानम्मन्युना महादेवमन्तःपर्शव्येनोग्रन्देवं वनि-
ष्ठुना वसिष्ठहनुःशिङ्गीनि कोश्याभ्याम् ।२॥ उग्रं लो-
हितेन । मित्रꣳ सौव्रत्येन रुद्रन्दौर्व्रत्येनेन्द्रम्प्रक्रीडेन म-
रुतो बलेन साध्यान्प्रमुदा । भवस्य कण्ठ्यꣳ रुद्र-
स्यान्तःपार्श्व्यम्महादेवस्य यकृच्छर्वस्य वनिष्ठुः पशुप-
तेःपुरीतत् । ३ ॥ लोमभ्यःस्वाहा । लोमभ्यःस्वाहा
त्वचे स्वाहा त्वचे स्वाहा लोहिताय स्वाहा लोहिताय
स्वाहा मेदोभ्यःस्वाहा मेदोभ्यःस्वाहा । माꣳसेभ्यः
स्वाहा माꣳसेभ्यःस्वाहा स्नावभ्यःस्वाहा स्नाव-
भ्यःस्वाहा स्थभ्यःस्वाहा स्थभ्यःस्वाहा मज्जभ्यः-
स्वाहा मज्जभ्यःस्वाहा । रेतसे स्वाहा पायवे स्वाहा
। ४ ॥ आयासाय स्वाहा । प्रायासाय स्वाहा सं या-
साय स्वाहा वियासाय स्वाहोद्यासाय स्वाहा । शुचे
स्वाहा शोचते स्वाहा शोचमानाय स्वाहा शोकाय
स्वाहा । ५ ॥ तपसे स्वाहा तप्यते स्वाहा तप्यमा-
नाय स्वाहा तप्ताय स्वाहा घर्माय स्वाहा । निष्कृ-
त्यै स्वाहा प्रायश्चित्यै स्वाहा । भेषजाय स्वाहा । ६ ॥
यमाय स्वाहान्तकाय स्वाहा मृत्यवे स्वाहा । ब्रह्मणे
स्वाहा ब्रह्महत्यायै स्वाहा विश्वेभ्यो देवेभ्यःस्वाहा
द्यावापृथिवीभ्याꣳस्वाहा ।७॥ इति रुद्रे षष्ठोऽध्यायः ॥
(एते ७ मन्त्राः ३९ दध्यायोक्ताः ७ साद्याः)

★ अथ 'रुद्रे सप्तमोऽध्यायः' हरिः—ॐ—वाजश्च । मे प्रस-
वश्च मे प्रयतिश्च मे प्रसितिश्च मे धीतिश्च मे क्रतुश्च मे
स्वरश्च मे श्लोकश्च मे श्रवश्च मे श्रुतिश्च मे ज्योतिश्च

★ (१) अन्य मत काण्वादि (२) इस सप्तम अध्याय को चमक-
पाठ कहते है और नमक-चमक पाठ करने वालों को निम्न ★
चिह्नित मन्त्रों के बाद (नील-सूक्त के १६ व ६६ मन्त्रों का नमक
पाठ करना चाहिए) यथा—'वेद वेदाब्धि' श्लोकानुसार ।

★ मे त्वृक्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् । १ ॥ प्राणश्च । मेपा-
नश्च मे व्यानश्च मे सुञ्च मे चित्तञ्चमऽआधीतञ्च मे
वाक्चमे मनश्च मे चक्षुश्च मे श्रोत्रञ्च मे दक्षश्च मे
दलञ्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् । २ ॥ ओजश्च । मे सह-
श्च मऽआत्मा च मे तनूश्च मे शर्म्म च मे वर्म्म च
मेङ्गानि च मेस्थीनि च मे परूᳬंषि च मे शरी-
राणि च मऽआयुश्च मे जरा च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्
। ३ ॥ ज्यैष्ठ्यंञ्च । मऽआधिपत्यञ्च मे मन्युश्च मे भा-
मश्च मेमश्च मेम्भश्च मे जेमा च मे महिमा च मे
वरिमा च मे प्रथिमा च मे वर्षिमा च मे द्राघिमा
★ च मे वृद्धञ्च मे वृद्धिश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् । ४ ॥
सत्यञ्च मे । श्रद्धा च मे जगच्च मे धनञ्च मे विश्वञ्च मे
महश्च मे क्रीडा च मे मोदश्च मे जातञ्च मे जनिष्य-
माणञ्च मे सूक्तञ्च मे सुकृतञ्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्
। ५ ॥ ऋतञ्च । मे मृतञ्च मे यक्ष्मञ्च मे नामयच्च मे
जीवातुश्च मे दीर्घायुत्वञ्च मे नमित्रञ्च मे भयञ्च मे
सुखञ्च मे शयनञ्च मे सूषाश्च मे सुदिनञ्च मे यज्ञेन
कल्पन्ताम् । ६ ॥ यन्ता च । मे धर्त्ता च मे क्षेमश्च
मे धृतिश्च मे विश्वञ्च मे महश्च मे संविच्च मे ज्ञात्रञ्च
मे सूश्च मे प्रसूश्च मे सीरञ्च मे लयश्च मे यज्ञेन क-
ल्पन्ताम् । ७ ॥ शञ्च मे मयश्च मे प्रियञ्च मेनुका-
मश्च मे कामश्च मे सौमनसश्च मे भगश्च मे द्रविणञ्च
मे भद्रञ्च मे श्रेयश्च मे वसीयश्च मे यशश्च मे यज्ञेन
★ कल्पन्ताम् । ८ ॥ ऊर्क्च । मे सूनृता च मे पयश्च मे
रसश्च मे घृतञ्च मे मधु च मे सग्धिश्च मे सपीतिश्च

★ मन्त्र–१ 'वाजश्च०', के पूर्व १६ व ६६ मन्त्र नील-सूक्त के पढ़े ।
★ मन्त्र–४ 'सत्यञ्च०', के पूर्व १६ व ६६ मन्त्र नील-सूक्त के पढ़े ।
★ मन्त्र–८ 'उर्क्च' के पूर्व भी पढ़े ।

मे कृषिश्च मे वृष्टिश्च मे जैत्रञ्चमऽऔद्भिद्यञ्च मे यु-
ज्ञेन कल्पन्ताम् । ९ ॥ रयिश्च । मे रायश्च मे पुष्टञ्च
मे पुष्टिश्च मे विभु च मे प्रभु च मे पूर्णञ्च मे पूर्णतं-
रञ्च मे कुयवञ्च मे क्षितञ्च मे न्नञ्च मे क्षुच्च मे यज्ञेन
कल्पन्ताम् । १० ॥ वित्तञ्च । मे वेद्यञ्च मे भूतञ्च
मे भविष्यच्च मे सुगञ्च मे सुपत्थ्यञ्च मऽऋद्धञ्च मऽ-
ऋद्धिश्चमे क्लृप्तञ्च मे क्लृप्तिश्च मे मतिश्च मे सुमतिश्च
मे यज्ञेन कल्पन्ताम् । ११ ॥ व्रीहयश्च । मे यवाश्च
मे माषाश्च मे तिलाश्च मे मुद्गाश्च मे खल्वाश्च मे
प्रियङ्गवश्च मेणवश्च मे श्यामाकाश्च मे नीवाराश्च मे
★ गोधूमाश्च मे मसूराश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् । १२ ॥ अ-
श्म्मा च मे मृत्तिका च मे गिरयश्च मे पर्वताश्च मे सिक-
ताश्च मे वनस्पतयश्च मे हिरण्यञ्च मे यश्च मे श्यामञ्च
मे लोहञ्च मे सीसञ्च मे त्रपु च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्
। १३ ॥ अग्निश्च । मऽआपश्च मे वीरुधश्च मऽओष-
धयश्च मे कृष्टपच्याश्च मेकृष्टपच्याश्च मे ग्राम्याश्च
मे पशवऽआरण्याश्च मे वित्तञ्च मे वित्तिश्च मे भूतञ्च
मे भूतिश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् । १४ ॥ वसु च । मे
वसतिश्च मे कर्म्म च मे शक्तिश्च मेर्थश्च मऽएमश्च
मऽइत्या च मे गतिश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् । १५ ॥
★ अग्निश्च । मऽइन्द्रश्च मे सोमश्च मऽइन्द्रश्चमे सवि-
ता च मऽइन्द्रश्च मे सरस्वती च मऽइन्द्रश्च मे पूषा च
मऽइन्द्रश्च मे बृहस्पतिश्च मऽइन्द्रश्च मे यज्ञेन क-
ल्पन्ताम् । १६ ॥ मित्रश्च । मऽइन्द्रश्च मे वरुणश्च

★ मन्त्र–१२ 'अश्माच' के पूर्व १६ व ६६ मन्त्र नील-सूक्त के पढ़े ।

★ मन्त्र–१६ 'अग्निश्च' के पूर्व १६ व ६६ मन्त्र नील-सूक्त के पढ़े ।

मुऽइन्द्रश्च मे धाता च मुऽइन्द्रश्च मे त्वष्टा च मुऽइन्द्र-
श्च मे मुरुतश्च मुऽइन्द्रश्च मे विश्वे च मे देवाऽइन्द्रश्च
मे युज्ञेन कल्पन्ताम् । १७ ॥ पृथिवी च । मुऽइन्द्रश्च
मेन्तरिक्षञ्च मुऽइन्द्रश्च मे द्यौश्च मुऽइन्द्रश्च मे समाश्च
मुऽइन्द्रश्च मे नक्षत्राणि च मुऽइन्द्रश्च मे दिशश्च मुऽइन्द्र-
★ श्च मे युज्ञेन कल्पन्ताम् । १८ ॥ अ ठं शुश्च । मे रुश्मिश्च
मे दाभ्यश्च मेधिपतिश्च मऽउपा ठं शुश्च मेन्तर्यामश्च
मऽऐन्द्रवायवश्च मे मैत्रावरुणश्च मऽआश्विनश्च मे प्र-
तिप्रस्थानश्च मे शुक्रश्च मे मन्थी च मे युज्ञेन कल्प-
न्ताम् । १९ ॥ आग्रयणश्च । मे वैश्वदेवश्च मे ध्रुवश्च
मे वैश्वानरश्च मऽऐन्द्राग्नश्च मे महावैश्वदेवश्च मे
मरुत्वतीयाश्च मे निष्केवल्यश्च मे सावित्रश्च मे सा-
रस्वतश्च मे पात्नीवतश्च मे हारियोजनश्च मे युज्ञेन
कल्पन्ताम् । २० ॥ स्रुचश्च । मे चमसाश्च मे वाय-
व्यानि च मे द्रोणकलशश्च मे ग्रावाणश्च मेधिषवणे
च मे पूतभृच्च मऽआधवनीयश्च मे वेदिश्च मे बर्हिश्च
मेवभृथश्च मे स्वगाकारश्च मे युज्ञेन कल्पन्ताम्
। २१ ॥ अग्निश्च । मे घर्मश्च मेर्कश्च मे सूर्यश्च मे
प्राणश्च मेश्वमेधश्च मे पृथिवी च मे दितिश्च मेदि-
तिश्च मे द्यौश्च मेङ्गुलयः शक्वरयो दिशश्च मे यु-
ज्ञेन कल्पन्ताम् । २२ ॥ व्रतञ्च । मऽऋतवश्च मे
तपश्च मे संवत्सरश्च मेहोरात्रेऽऊर्वष्ठीवे बृहद्रथन्तरे
★ च मे युज्ञेन कल्पन्ताम् । २३ ॥ एका च । मे ति-
स्रश्च मे तिस्रश्च मे पञ्च च मे पञ्च च मे सप्त च

★ मन्त्र–१८ 'अ ठं शुश्च' के पूर्व १६ व ६६ नील-सूक्त के मन्त्र पढ़े।
★ मन्त्र–२३ 'ए का च' के पूर्व १६ व ६६ नील-सूक्त के मन्त्र पढ़े।

मे सुप्तर्च मे नव॑ च मे नव॑ च मुऽ एकादश च मुऽए-
कांदश च मे त्रयोंदश च मे त्रयोंदश च मे पञ्च॑-
दश च मे पञ्च॑दश च मे सुप्तदंश च मे सुप्तदंश च
मे नवंदश च मे नवंदश च मु ऽएकंवि॑ꣳशति-
श्च मुऽएकंवि॑ꣳशतिश्च मे त्रयोंवि॑ꣳशतिश्च मे त्रयों-
वि॑ꣳशतिश्च मे पञ्चंवि॑ꣳशतिश्च मे पञ्चंवि॑ꣳशतिश्च
मे सुप्तवि॑ꣳशतिश्च मे सुप्तवि॑ꣳशतिश्च मे नवंवि॑ꣳ
शतिश्च मे नवंवि॑ꣳशतिश्च मुऽ एकंत्रि॑ꣳशच्च मुऽ एकं-
★ त्रि॑ꣳशच्चमे त्रयंस्त्रि॑ꣳशच्च मे युज्ञेनं कल्पन्ताम् । २४॥
चतंस्रश्च । मे ष्टौ चं मे ष्टौ चं मे द्वादंश च मे द्वादंश
च मे षोडंश च मे षोडंश च मे वि॑ꣳशतिश्च मे वि॑ꣳ
शतिश्च मे चतुंर्वि॑ꣳशतिश्च मे चतुंर्वि॑ꣳशतिश्च मेष्टावि॑ꣳ
शतिश्च मेऽष्टावि॑ꣳशतिश्च मे द्वात्रि॑ꣳशच्च मे द्वात्रि॑ꣳ
शच्च मे षट्त्रि॑ꣳशच्च मे षट्त्रि॑ꣳशच्च मे चत्वारि॑ꣳशच्च
मे चत्वारि॑ꣳशच्च मे चतुंश्चत्वारि॑ꣳशच्च मे चतुंश्चत्वारि॑ꣳ
शच्च मे ष्टाचंत्वारि॑ꣳशच्च मे युज्ञेनं कल्पन्ताम् ।२५॥
★ त्र्यविंश्च । मे त्र्युवी चं मे दित्युवाट् मे दित्यौही चं मे
पञ्चांविश्च मे पञ्चावी चं मे त्रिवुत्सश्च मे त्रिवुत्सा चं
मे तुर्य्युवाट् मे तुर्य्यौही चं मे युज्ञेनं कल्पन्ताम् ।२६॥
पष्ठुवाट् । मे पष्ठौही चं मऽउक्षा चं मे वुशा चं मऽ-
ऋषुभश्च मे वेहच्च मेनुड्वाँश्च मे धेनुश्च मे युज्ञेन क-
★ ल्पन्ताम् । २७ ॥ वाजाय स्वाहां । प्रसुवाय स्वाहां
पिजाय स्वाहा क्रतंवे स्वाहा वुसंवे स्वाहां हुर्प्पतंये
स्वाहाह्ने मुग्धाय स्वाहां मुग्धायं वै न॑ꣳशिनाय
स्वाहां विन॑ꣳशिनंऽआन्त्यायुनाय स्वाहान्त्याय भौवु-

★ मन्त्र–२४ 'चतस्रश्च', ★ मन्त्र–२५ 'त्र्यविश्च'
★ मन्त्र–'व्वाजाय स्वाहा' के पूर्व १६ व ६६ मन्त्र पढ़े ।

नाय स्वाहा भुवनस्य पतये स्वाहाधिपतये स्वाहा प्रजापतये स्वाहा। इयन्ते राण्मित्राय यन्तासि यमनऽऊर्ज्जे त्वा वृष्ट्यै त्वा प्रजानान्त्वाधिपत्याय। २८॥
आयुर्य्यज्ञेन कल्पताम्प्राणो यज्ञेन कल्पताञ्चक्षुर्य्यज्ञेन कल्पताꣳ श्रोत्रं यज्ञेन कल्पतां वाग्यज्ञेन कल्पताम्मनो यज्ञेन कल्पतामात्मा यज्ञेन कल्पताम्ब्रह्मा यज्ञेन कल्पताञ्ज्योतिर्य्यज्ञेन कल्पताꣳ स्वर्य्यज्ञेन कल्पताम्पृष्ठं यज्ञेन कल्पतां यज्ञो यज्ञेन कल्पताम् स्तोमश्च यजुश्च ऽऋक् च साम च बृहच्च रथन्तरञ्च। स्वर्देवाऽअगन्मामृताऽअभूम प्रजापतेः प्रजाऽ अभूम वेट्स्वाहा। २९॥ इति रुद्रे सप्तमोऽध्यायः॥ (एते २९ मन्त्राः १८ ध्यायोक्ताः १ गाथाः)॥

अथ रुद्रे अष्टमोऽध्यायः हरिः—ॐ—ऋचं वाचम्प्रपद्ये मनो यजुः प्रपद्ये साम प्राणम्प्रपद्ये चक्षुः श्रोत्रम्प्रपद्ये। वागोजः सहौजो मयि प्राणापानौ। १॥ यन्मे। छिद्रञ्चक्षुषो हृदयस्य मनसो वातितृण्णं बृहस्पतिर्मे तद्दधातु शन्नो भवतु भुवनस्य यस्पतिः। २॥ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं०। ३॥ कया नश्चित्रऽआभुव दूती सदा वृधः सखा। कया शचिष्ठया वृता। ४॥ कस्त्वा। सत्यो मदानाम्मꣳहिष्ठो मत्सदन्धसः। दृढाचिदारुजे वसु। ५॥ अभीषुणः सखीनामविता जरितॄणाम्। शतम्भवास्यूतिभिः। ६॥ कया त्वन्नऽऊत्याभिप्रमन्दसे वृषन्। कयास्तोतृभ्यऽआभर। ७॥ इन्द्रो विश्वस्य। राजति। शन्नोऽअस्तु द्विपदे शञ्चतुष्पदे। ८॥ शन्नो मित्रःशं वरु-

---

★ नमक-चमक पाठ हेतु समय-समय पर प्रदत्त मन्त्रों के नीचे चितसू टिप्पणी के द्वारा नील-सूक्त का पाठ विहित है।

णऽशन्नो भवत्त्वर्य्यमा । शन्नऽइन्द्रो बृहस्पतिऽर्शन्नो विष्णुरुरुक्रमः । ९ ॥ शन्नो व्वातः । पवताᳬशन्न-स्तपतु सूर्य्यः । शन्नऽकनिक्रदद्देवः पर्जन्योऽअभिवर्षतु । १० ॥ अहानि शम्भवन्तु नऽशᳬ रात्रीः प्रतिधीयताम् शन्नऽइन्द्राग्नी भवतामवोभिः शन्नऽइन्द्रा वरुणा रातहव्या । शन्नऽइन्द्रा पूषणा व्वाजसा तौ शमिन्द्रा सोमा सुविताय शं य्योः । ११ ॥ शन्नो देवीरभिष्टयऽआपो भवन्तु पीतये । शं य्योरभिस्रवन्तु नः । १२ ॥ स्योना पृथिवि । नो भवानृक्षरा निवेशनी । यच्छा नऽशर्म्म सप्रथाः । १३ ॥ आपो हि । ष्ठामयो भुवस्तानऽऊर्ज्जे दधातन । महेरणाय चक्षसे । १४ ॥ यो वः शिवतमो रसस्तस्य भाजयतेह नः । उशतीरिवमातरः । १५ ॥ तस्माऽअरङ्गमामवो यस्य क्षयाय जिन्वथ । आपो जनयथा च नः । १६ ॥ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षᳬ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः । व्वनस्पतयः शान्तिर्व्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्मशान्तिः सर्व्वᳬशान्तिः शान्तिरेव शान्तिᳬ सामा शान्तिरेधि । १७ ॥ दृते दृᳬह मा मित्रस्य मा चक्षुषा सर्व्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम् । मित्रस्याहञ्चक्षुषा सर्व्वाणि भूतानि समीक्षे । मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे । १८ ॥ दृते दृᳬ हमा । ज्योक्ते सन्दृशि जीव्या सञ्ज्योक्ते सन्दृशि जीव्या सम् । १९ ॥ नमस्ते हरसे शोचिषे नमस्तेऽ अस्त्वर्चिषे । अन्याँस्तेऽअस्मत्तपन्तु हेतयः पावकोऽअस्मभ्यᳬ शिवो भव । २० ॥ नमस्ते । ऽअस्तु व्विद्युते नमस्ते स्तनयित्नवे । नमस्ते भगवन्नस्तु

यतः स्व÷समीहसे । २१ ॥ यतो यतऽसमीहसे ततो नोऽअभयङ्कुरु । शन्न÷कुरु प्रजाब्भ्योऽभयन्नऽ पशुब्भ्य÷ । २२ ॥ सुमित्त्रियानऽ आपऽ ओषधयऽ सन्तु दुर्म्मित्रियास्तस्मै सन्तु योस्म्मान्द्वेष्ट्टि ऽयञ्च वयन्द्विष्म्मः । २३ ॥ तच्चक्षुर्द्देवहितम्पुरस्ताच्छुक्क्रमुच्चरत् । पश्येम शरदं÷शतञ्जीवेम शरदं÷शतꣳ शृणुयाम शरदं÷शतम्प्रब्रवाम शरदं÷शतमदीनाऽस्याम शरदं÷शतम्भूयश्च शरदं÷शतात । २४ ॥ इति रुद्रे शान्त्यध्यायः ॥ (एते २४ मन्त्राः ३६ दध्यायोक्ताः १ मायाः)

❋ अथ रुद्रेस्वस्तिप्रार्थनामन्त्राऽध्यायः

ॐ स्वस्तिनऽइन्द्रोवृद्धश्श्रवाः स्वस्तिनः पूषाविश्शववेदाः । स्वस्तिनस्तार्क्ष्योऽअरिष्टनेमिः स्वस्तिनोबृहस्पतिर्द्दधातु ॥१॥ ॐ पयः पृथिव्व्याम्पयऽओषधीषुपयोदिव्व्यन्तरिक्षे पयोधाः । पयस्वतीः प्प्रदिशः सन्तुमह्यम् ॥२॥ ॐ व्विष्ण्णोरराटमसिव्विष्ण्णोः श्नप्त्रेस्त्थोव्विष्ण्णोः स्यूरसि व्विष्ण्णोद्ध्रुवोऽसि ॥ व्वैष्ण्णव मसि व्विष्ण्णवेत्त्वा ॥३॥ अग्निर्द्देवता व्वातोदेवता सूर्य्योदेवता चन्द्रमादेवता व्वसवोदेवता रुद्द्रादेवताऽऽदित्त्यादेवता मरुतोदेवता व्विश्श्वेदेवादेवता बृहस्प्पतिर्द्देवतेन्द्रो देवता व्वरुणोदेवता ।४।चत्त्वारिशृङ्गात्रयो अस्यपादाद्द्वे शीर्षे सप्त्तहस्तासोऽअस्य । त्रिधाबद्धोव्वृषभोरोरवीतिमहोदेवो मर्त्त्याँ२ आविवेश ॥५॥ नमः शम्भवाय च मयोभवाय च नमः शंकराय च मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च ॥६॥ अदितिर्द्यौरदितिरन्तरिक्षमदितिर्म्माता सपिता सपुत्रः । विश्श्वेदेवा अदितिः पञ्चजना अदितिर्ज्जातमदितिर्ज्जनित्त्वम् ॥७॥ दीर्घायुत्वाय बलायव्वर्च्चसे सुप्रजास्त्वायाच्चासाऽअथो जीवशरदः शतम् ॥८॥ ॐ द्यौ शान्ति... २॥ ॐ सद्यो जातं प्रपद्यामि सद्योजातायवै नमो

नमः । भवे भवे नातिभवे भवस्व मां भवोद्भवाय नमः ।।९।। वामदेवाय नमो ज्येष्ठाय नमः श्रेष्ठाय नमो रुद्राय नमः कालाय नमः कलविकरणाय नमो बलविकरणाय नमो बलाय नमो बलप्रमथनाय नमः सर्वभूतदमनाय नमो मनोन्मनाय नमः ।।१०।। अघोरेभ्योथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः। सर्वेभ्यः सर्व शर्वेभ्यो नमस्तेऽअस्तु रुद्ररूपेभ्यः ।।११।। तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि। तन्नो रुद्रः प्रचोदयात् ।।१२।। ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानाम् । ब्रह्माधिपति र्ब्रह्मणोधिपतिर्ब्रह्मा शिवो मेऽ अस्तु सदाशिवोम् । शिवो नामासि स्वधितिस्ते पिता नमस्ते ऽ अस्तु मा मा हि ठ्ँ सीः । निवर्त्तयाम्म्यायुषेन्नाद्याय प्रजननाय रायस्पोषाय सुप्रजास्त्वाय सुवीर्य्याय ।।१४।। ॐ विश्वानि देव सवितुर्दुरितानि परासुव । यद्भद्रन्तन्नऽआसुव ।।१५।। ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष ठ्ँ शान्तिः पृथिवी शान्ति रापः शान्ति रोषधयः शान्तिः । व्वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्व्व ठ्ँ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि ।।१६।। ॐ सर्वेषां वा एष व्वेदाना ठ्ँ रसो यत्साम सर्वेषामेवैनमेतद्वेदाना ठ्ँ रसेनाभिषिञ्चति । पालाशे भवति तेन ब्राह्मणोभिषिञ्चति ब्रह्म वै पालाशो ब्रह्मणैवैनमे तदभिषिञ्चति यद्वेवकल्पां जुहोति प्राणावै कल्पाः अमृतमुवैप्राणा अमृतेनेवैनमे तदभिषिञ्चति*। अमृताभिषेक मस्तु ।।

---

* यह ब्राह्मण कण्ड़िका का मन्त्र है, प्रायः सभी प्रचलित रुद्रीपाठों में यह मन्त्र अधूरा ही प्रकाशित हुआ है केवल यहां पूरा मन्त्र दिया जा रहा है ।

ॐ शान्तिः शान्तिः सुशान्तिर्भुवतु । सर्वारिष्टशान्तिर्भवतु । अनेन कृतेनरुद्राभिषेककर्मणा श्रीभवानीशङ्कर महारुद्रः प्रीयतान्न मम ।। ॐ सदाशिवार्पणमस्तु ।।

* अथनवग्रहमन्त्राः—

ॐ आकृष्णेनरजसावर्त्तमानोनिवेशयन्नमृतमर्त्यञ्च । हिरण्ययेन सविता रथेनादेवोयाति भुवनानि पश्यन् ।। सूर्याय नमः ।।१।। इमन्देवाऽअसपत्न ठ्ँ सुवध्वंमहतेक्षत्त्राायमहते । ज्ज्यैष्ठ्यामहते जानराज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय । इमममुष्यपुत्रममुष्यै पुत्रमस्यैविश ऽ एषवोमीराजासोमो ऽ स्माकं ब्राह्मणाना ठ्ँ राजा ।। सोमाय नमः ।।२।। अग्निर्मूर्द्धादिवः ककुत्पतिः पृथिव्याऽअयम् । अपा ठ्ँ रेता ठ्ँ सिजिन्वति । भौमाय नमः ।।३।। उद्बुध्यस्वाग्नेप्रतिजागृहि त्वं मिष्टापूर्ते स ठ्ँ सृजेथामयंच । अस्मिन् सधस्थेऽअध्युत्तरस्मिन् विश्वेदेवा यजमानश्चसीदत ।। बुधाय नमः ।।४।। बृहस्पते ऽअतियदर्योऽअर्हाद्युमद्विभातिक्रतुमज्जनेषु । यद्दीदयच्छवसऽऋतप्रजाततदस्मासुद्रविणं देहि चित्रम् ।। बृहस्पतये नमः ।५। अन्नात्परिश्रुतोरसं ब्रह्मणा व्यपिबत्क्षत्त्रंपयः सोमं प्रजापतिः । ऋतेन सत्यमिन्द्रियं विपान ठ्ँ शुक्रमन्धसऽइन्द्रस्येन्द्रियमिदम्पयोमृतं मधु ।। शुक्राय नमः ।।६।। शन्नोदेवी रभिष्टय ऽ आपोभवतुं पीतये शंय्योरभिस्रवंतुनः ।। शनैश्चराय नमः ।।७।। काण्डात् काण्डात् प्ररोहंतीपरुषः परुषस्परि । एवानोदूर्वेप्रतनुसहस्रेण शतेनच ।। राहवे नमः ।।८।। केतुं कृण्वन्नकेतवेपेशोमर्याऽअपेशसे । समुषद्भिरजायथाः ।। केतवे नमः ।।९।। अग्नेर्ज्जनित्त्रमसि वृषणौस्थऽउर्वश्यस्यायुरसिपुरूरवाऽअसि । गायत्रेणत्वाछन्दसामन्थामि त्रैष्टुभेनत्वाछन्दसामन्थामिजागतेनत्वाछन्दसामन्थामि ।।

*** चतुर्वेदोक्त आदिमो मन्त्राः—**

ॐ अग्निमीले पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम् । होतारं-रत्नधातमम् ।।१।। ॐ ऋग्वेदाय नमः ।। ॐ इषेत्त्वोर्ज्जेत्वा व्वायवस्त्थ देवो वः सविता प्प्रार्पयतु श्श्रेष्ट्ठतमाय कर्म्मण-ऽआप्प्यायद्ध्वमघ्न्याऽइन्द्राय भागम्प्र जावतीरनमीवाऽअयक्ष्मा मा वस्तेन ऽ ईशतमाघश ठ्ँ सो द्ध्रुवाऽअस्स्मिन्न्गोपतौस्यात बह्व्वीर्य्यजमानस्य पशून्न्पाहि ।। ॐ व्वसोः पवित्रम् । ॐ हिरण्मयेनपात्रेण सत्त्यस्यापिहितम्मुखम् ।। योसावादित्त्ये पुरुषः सोसावहम् ।। ॐ ३ खम्ब्रह्मः ।।२।। ॐ यजुर्वेदाय नमः ।। ॐ अग्ने ऽ आयाहिवीतये गृणानो हव्य दातये निहोतासत्सिबर्हिषि ।।३।। ॐ सामवेदाय नमः । ॐ शन्नोदेवीरभिष्टय ऽ आपोभवन्तुपीतये । शंयोरभिस्रवन्तुनः ।।४।। ॐ अथर्वणवेदाय नमः ।।

❋ चमत्कारिक महामृत्युंञ्जय

"मृत्युभीत मृकंड सूनुकृतस्तवं शिवसन्निधौ
यत्रकुत्र च यः पठेन्नहितस्य मृत्युभयं भवेत् ।"

मांत्रिक अनुष्ठानों में "महामृत्युंञ्जय जप" का अनुष्ठान बहुत ही प्राचीन समय से सर्वानुभूत और सफल प्रयोग प्रसिद्ध है। हमारे पूर्वजों और ऋषियों ने इस मन्त्र से मरणासन्न व्यक्तियों को बचाने के प्रयोग किये है और वे सर्वत्र सफल हुए है। आसन्न दुर्घटना के दर्शन के पूर्व यदि इसका प्रयोग किया जाय तो व्यक्ति दुर्घटना से बाल बाल बच जाता है और यदि प्राणघातक जैसा योग हो तो भी वह घटना स्वल्पमात्रा में होकर प्राणी को बचा देती है। दूसरी मुख्य बात; यह सात्विक प्रयोग है अतः इससे लाभ ही लाभ होता है शरीर रक्षा के साथ बुद्धि, विद्या, यश और लक्ष्मी भी बढ़ती है।

हमने स्वयं इसके अनेक अनुभूत प्रयोग कर चमत्कार और साफल्य प्राप्त किया है। एक बार हमारे यजमान के एक मित्र मेडिकल वार्ड 'महात्मा गांधी अस्पताल" जोधपुर में भर्ती थे। डॉक्टरों ने उनके जीवन की आशा १० दिन तक इलाज करने के बाद

छोड़ दी थी । अचानक मैं अपने किसी सम्बन्धी को देखने अस्पताल गया तो अस्पताल में हमारे यजमान मिल गये तब अपने उन सज्जन को भी देखा वे बेहोशी की हालत में थे घर के लोग व्याकुल थे। जन्मपत्री में प्रबल मार्केश की दशा चल रही थी। मैंने औषधी के साथ साथ महामृत्युञ्ज जप का सुझाव दिया। वे बोले यह काम आपको ही करना होगा। स्थिति की गम्भीरता देखते हुए मैंने तुरन्त ११ ब्राह्मणों से लघु रुद्र करवाकर महामृत्युञ्जय जप का प्रयोग करवाया, प्रयोग चल रहा था रोगी की हालत सुधरने लगी। ७ रोज के भीतर उन्हें अस्पताल से छुट्टी मिल गई ११ दिन का प्रयोग चला और ११ वें दिन वे पूर्ण स्वस्थ्यता का अनुभव करने लगे। कमजोरी शेष थी। प्राणघातक मार्केश टल गया। शूल की पीड़ा सुई में बदल गई। वह भी धीरे धीरे समाप्त हो गई।

ज्योतिषी लोग अरिष्ट ग्रह निवारणार्थ, आयुष्य वर्धनार्थ व अपघात या अपमृत्यु निवारणार्थ जन्मपत्र में स्पष्टत: १२५००० महामृत्युञ्जय जप का प्रयोग आज भी लिखते हैं। ऐसा करने से कई बालकों को अपमृत्यु के मुख से बचाया भी गया है।

जिन लोगों के बालक जन्म कर १०-१५ दिन के भीतर मृत्यु को प्राप्त हो जाते है उनके होते ही उनको प्रसव के पूर्व या प्रसव के तत्काल बाद भी इस प्रयोग द्वारा बचाया जा सकता है। भीनमाल में एक व्यक्ति के पुत्र क्रमश: पैदा होने के एक मास बाद मर जाया करते थे। इस तरह चार पुत्रों की मृत्यु हो गई थी। वह व्यक्ति मेरे पास आया तो उसके जब पुत्र प्रसव हुआ तब मन्दिर में हमने महामृत्युञ्जय जप का प्रयोग करवाया और शिव कृपा से बालक अभी भी जीवित है। यह घटना सन् १९७७ के अगस्त माह की है।

महामृत्युञ्जय जप के अनेक तरह के अनुष्ठान और प्रयोग प्रचलित हैं उसमें से सूक्ष्म सरल एवं अनुभूत प्रयोग निम्नलिखित है जिसे कोई भी व्यक्ति सरलता से अजमाकर देख सकता है।

※ अथ ध्यानं—

ॐ हस्ताभ्यां कलशद्वयामृतरसै राप्लावयन्तं शिरो ।
द्वाभ्यां तौ दधतं मृगाक्षवलये द्वाभ्यां वहन्तं परम् ।।

अंकन्यस्तकरद्वयामृतघटं कैलाशसकान्तं शिवे ।
स्वच्छाम्भोजगतं नवेन्दुमुकुटाभांतंत्रिनेत्रं भजे ॥
मृत्युञ्जय महादेव त्राहि मां शरणागतम् ।
जन्म मृत्युजरारोगैः पीडितं कर्मबन्धनैः ॥

अथ बृह-मन्त्र की पांच माला जप—

ॐ ह्रौं ॐ जूं सः भूर्भुवः स्वः त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्द्धनम् । उर्वारूकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात् । भूर्भुवः स्वरों जूं सः ह्रौं ॐ ।

*** जप विधि—**

१. संकल्प २. गायत्री की एक माला ३. महामृत्युञ्जय की ५ माला ४. लघुरुद्र या अनुष्ठान के अंत में पुनः गायत्री की १ माला ।

*** विशेष—**

यदि व्यक्ति मृत्युसन्निकट हो और उसे बचाना अभीष्ट हो तो तत्काल सिद्धि हेतु 'महामृत्युजञ्य जप" के १०८ जप करें। मृत्तिका के शिवलिङ्ग पर अभिषेक करके प्रत्येक मन्त्र के पश्चात् श्वेत दूर्वा काला तिल व शहद मिलाकर चढ़ावे बाद में अनुष्ठान प्रारम्भ करे ।

*** वर्षा के लिए प्रयोग—**

चातुर्मास में वर्षा न हो तब महादेव पर सहस्र घट से (११११) घट से रुद्राभिषेक करके उसमें यजुर्वेदोक्त निम्न मन्त्र का प्रति अध्याय पर संपुट दिया जावे उससे वर्षा होती है ।

ॐ अपां गम्भन्सीद मा त्वा सूर्योऽभि ताप्सी‚माऽग्नि वैश्वानरः । अच्छिन्नपत्राः प्रजा अनुवीक्षस्वानु त्वा दिव्या वृष्टिः सचताम् ।।
(यजुर्वेद अ० १३ मन्त्र ३०)

महाँ २ इन्द्रो य ओजसा पर्जन्यो वृष्ठि माँ २ इव । स्तोमैर्वत्सस्य वावृधे । उपयामगृहीतोऽसि महेन्द्राय त्वैषते योनिर्महेन्द्राय त्वा ।।
(यजुर्वेद अ० ७ मन्त्र ४०)

फिर इन्द्रे ३ हि, वरुणे ३ हि, वापी कूप तडाग सरितादि परिपूरय ।। यह ३ बार बोला जावे ।

उक्त मन्त्रों का अलग से नाभिपर्यन्त जल में खड़े रहकर ब्राह्मणों द्वारा जप भी कराया जावे ।

कैंसर व हृदय-रोग की मुक्ति हेतु सफल प्रयोग

—पं० लेखराज द्विवेदी

कैंसर व हार्ट एटैक जैसी बीमारी को दूर करने हेतु सर्व प्रथम लघुरुद्र या नमक-चमक रुद्राभिषेक करके "अक्षीभ्यां" के अनुवाक से एवं "आपोहिष्ठा०" इन तीनों मन्त्रों से अभिषिक्त जल द्वारा शिव निर्माल्य से रोगी का मार्जन करें। उसका कुछ उसे जल पिलायें। इससे यक्ष्मा, कैंसर आदि रोग भगवत्कृपा से छूट जाते हैं व औषधि सेवन सफल होता है।

*** विनियोग :—**

अक्षीभ्यामिति षण्णां विवृहा ऋषिः अनुष्टुप् छन्दः यक्ष्महा देवता आपोहिष्ठेति तिसृणां सिन्धुद्वीप ऋषिः गायत्री छन्दः आपो देवताः सर्व रोग शान्त्यै अभिषेकोदकेन अस्य अमुक (नाम) रोगिणोपरि मार्जने विनियोगः ॥

*** अक्षीभ्यां सूक्त—(अनुवाक)**

ॐ अक्षीभ्यां ते नासिकाभ्यां कर्णाभ्यां छुबुकादधि।
यक्ष्मं शीर्षण्यं मस्तिष्काज्जिह्वाया विवृहामि ते ॥१॥

ग्रीवाभ्यस्त उष्णिहाभ्यः कीकसाभ्यो अनूक्यात्।
यक्ष्मं दोषण्यमंसाभ्यां बाहुभ्यां विवृहामि ते ॥२॥

आन्त्रेभ्यस्ते गुदाभ्यो वनिष्ठोर्हृदयादधि ।
यक्ष्मं मतस्नाभ्यां यक्नः प्लाशिभ्यो विवृहामि ते ।।३।।

ऊरुभ्यां ते अष्टीवद्भ्यां पार्ष्णिभ्यां प्रपदाभ्याम् ।
यक्ष्मं श्रोणिभ्यां भासदाद्भंससो विवृहामि ते ।।४।।

मेहनाद्वनं करणाल्लोमभ्यस्ते नखेभ्यः ।
यक्ष्मं सर्वस्मादात्मनस्तमिदं विवृहामि ते ।।५।।

अङ्गादङ्गाल्लोम्नो लोम्नो जातं पर्वणि पर्वणि ।
यक्ष्मं सर्वस्मादात्मनस्तमिदं विवृहामि ते ।।६।।

ॐ आपोहिष्ठा मयो भुव० ।।१।। ॐ योवः शिवतमो० ।।२।। ॐ तस्माऽरङ्ग मा० ।।३।। इन तीनों मन्त्रों से मस्तक से लेकर पांव तक सारे शरीर पर अभिषिक्त जल के छींटे लगावे ।

* शल्य चिकित्सार्थ व भूत-प्रेत बाधा निवारणार्थ विशिष्ट प्रयोग

*** संकल्प—**

ॐ अस्य श्री नीलकण्ठ स्त्रोत-मन्त्रस्य ब्रह्म ऋषिः अनुष्टुप् छन्दः नीलकण्ठो सदा शिवो देवता ब्रह्मबीजम् पार्वती शक्तिः शिव इति कीलकम् मम काय जीव संरक्षणार्थे सर्वारिष्ट विनाशार्थे चतुर्विध पुरूषार्थं सिद्धयर्थे भक्ति-मुक्ति सिद्धयर्थे श्री परमेश्वर प्रीत्यर्थे च जपे विनियोगः ।।

*** मन्त्र प्रयोग—**

ॐ नमो नीलकण्ठाय, श्वेत शरीराय नमः । सर्पलिंकृत भूषणाय नमः । भुजंग परिकराय नाग यज्ञोपवीताय नमः ।

अनेक काल मृत्यु विनाशनाय नमः ।। युगयुगान्त काल प्रलय प्रचण्डाय नमः । ज्वलन्मुखाय नमः दंष्ट्रा कराल घोर रूपाय नमः । हुँ हुँ फट् स्वाहा । ज्वालामुख मन्त्र करालाय नमः । प्रचण्डार्क सहस्रांशु प्रचण्डाय नमः । कर्पूरामोद परिमलांग सुगन्धिताय नमः । इन्द्रनील महानील वज्र वैडूर्यमणि माणिक्य मुकुट भूषणाय नमः । श्री अघोरास्त्र मूल मन्त्रस्य नमः ।

ॐ ह्रां स्फुर स्फुर ॐ ह्रीं स्फुर स्फुर ॐ ह्रूं स्फुर स्फुर अघोर घोरतरस्य नमः । रथ रथ तत्र तत्र चट् चट् कह कह मद मदन दहनाय नमः ।

श्री अघोरास्य मूल मन्त्राय नमः । ज्वलन मरणभय क्षय हूँ फट् स्वाहा । अनन्त घोर ज्वर मरण भय कुष्ठ व्याधि विनाशनाय नमः ।। डाकिनी शाकिनी ब्रह्मराक्षस दैत्य दानव बन्धनाय नमः ।। अपर पारभूत वेताल कूष्माण्ड सर्वग्रह विनाशनाय नमः । यन्त्र कोष्ठ करालाय नमः । सर्वापद् विच्छेदाय नमः । हुँ हुँ फट् स्वाहा । आत्म मन्त्र सुरक्षणाय नमः ।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं नमो भूत डामर ज्वाला वश भूतानां, द्वादश भूतानां, त्रयोदश भूतानां, पञ्चदश डाकिनीनां, हन हन दह दह नाशन नाशन एकाहिक, द्वयाहिक, चतुराहिक, पञ्चाहिक व्याप्ताय नमः ।

आपादान्त सन्निपात, वातादि हिक्का, कफादि कास-श्वासादिक दह दह छिन्धि छिन्धि श्री महादेव निर्मित स्तम्भन-मोहन-वश्याकर्षणोच्चाटन-कीलन-उद्वासन इति षट् कर्म विनाशनाय नमः ।

अनन्त, वासुकी, तक्षक, कर्कोटक, शंखपाल, विजय पद्म, महापद्म, एलापत्र, नाना नागांनां कुलकादि विषं छिन्धि-छिन्धि, भिन्धि-भिन्धि प्रत्रेशन शीघ्रं शीघ्र हुँ हुँ फट् स्वाहा ।।

वातज्वर, मरणभय, छिन्न छिन्न हन हनः भूतज्वर, प्रेतज्वर, पिशाच ज्वर, रात्रि ज्वर, शीत ज्वर, सन्निपात ज्वर, ग्रह ज्वर, विषम ज्वर, कुमार ज्वर, ताप ज्वर, ब्रह्म-ज्वर, विष्णु ज्वर, महेश ज्वर, आवश्यक ज्वर, कामाग्नि-विषय ज्वर मरीचिज्वरादि प्रबल दण्डधराय नमः । परमे-श्वराय नमः ।

आवेशय आवेशय शीघ्रं शीघ्रं हुँ हुँ फट् स्वाहा । चोर मृत्यु ग्रह व्याघ्रासर्पादि विषभय विनाशनाय नमः । मोहन मन्त्राणां, पर विद्याच्छेदन मन्त्राणां ॐ ह्लाँ ह्लीँ ह्लूँ कुलि लीँ लीँ हुँ क्षं कुँ कुँ हुँ हुँ फट् स्वाहा । नमो नील कण्ठाय नमः दक्षाध्वर हराय नमः श्री नील कण्ठाय नमः ।।

उपरोक्त पाठ को नित्य करे यह १०८ दिन में सिद्ध हो जाता है । फिर इसका झाड़ा लग सकता है । नित्य पाठ करने से सारी कामनाएँ पूर्ण होती हैं ।

पृष्ठांक	पंक्ति	शुद्ध शब्द
७८ —	१८	धियञ्जिन्न्वमव ।
	२१	पूषा ।
	२३	शुभंय्याव्वानो ।
	२४	अग्ग्नि ।
७९ —	५	अदितिर्द्यौं ।
८१ —	२	हृदयस्थो ।
	२२	(बृहस्पति न पढे)
८२ —	५	रोग्यैश्वर्याभि
८३ —	२	नोत्कृत्या ।
	१०	रक्षोधमन्तमो ।
	१८	समारभे ।
	२०	त्यक्त्वा
	२१	अपक्रामन्तु
८४ —	४	नैर्ऋते ।
	५	रक्षेद्
८५ —	२१	सावित्री
८६ —	१५	उत्पन्नोऽसि
८७ —	११	जिन्न्वथ
८७ —	७	तमीमहे
९५ —	१३	मृतंदिवि
	९	शर्करा च
९८ —	७	स्नानार्थं
	८	चन्द्र सदृश
९९ —	८	ध्वीर्न्नः
	२०	मुद्द्वयठं
१०० —	१	सुवासित इत्र
	१२	ईडितः
१०१ —	३	तस्माऽअरंग
१०३ —	२	शूर्पकर्णांकं
	२४	स पापीयान्
	२१	साज्यसमिद्धि
१०४ —	४	लज्जाया
	५	देहालंकरणं
	२१	वरुथमासद
१०६ —	६	कुङ्कुमोक्ताः
११२ —	१२	गर्भसम्भूतं
११६ —	२	वारूणैः
११६ —	१५	प्रकुर्वीत
१२३ —	२	सरस्वती
१२३ —	५	गणानान्त्वा

शुद्धि – पत्रम्

पृष्ठांक	पंक्ति	शुद्ध शब्द
१ —	११	माणो
	११	स्वयं
४ —	८	तमा।
	११	अघोरस्य।
	१४	सिद्धिः।
	२४	पत्रै
६ —	५	सूक्तं
	८	गृहे गृह।
	९	षडंग
	१६	(पौरुषंशिरः नहीं है)
७ —	२१	रौद्राध्याय
८ —	९	वाजश्चमे
	२०	वाजश्च-
१० —	६	कंपाने वाले
१५ —	१७	वार के स्थान पर 'व'
१७ —	२२	सर्वात्र
१७ —	२३	षडङ्ग
१८ —	१५	षडङ्ग न्यास
	१८	देवता
२० —	७	स्तुति
	१२	देदोप्यमान
	१४	अलङ्कृत वाजसनेयी
२१ —	३	वज्रबाहु
२२ —	४	मरुतों
	१२	क्रोध
२३ —	५	अतिसूक्त
	२०	दीर्घ
२४ —	१२	वाङ्मय
	१५	अनिष्ट।
२८ —	१५	षष्ठाष्टमः।
२९ —	६	चन्द्र का नाम सुधांशु
	११	स्ततो।
	२१	मित्यभिधीयते।
३१ —	२	तत्त्व से।
३२ —	५/१६	अन्योन्याश्रित।
३३ —	६	मस्तिष्क व रीढ़
३५ —	६	पान कराकर
	७	संतोषित करता है
३९ —	१६	करोति यः।
४१ —	१४	वैदिक
४७ —	२३	अतिशयोक्ति
४८ —	६	संक्षेप
९ —	१०	त्रिवक्त्रो
६३ —	२१	कामानवाप्नु
	२२	त्रितयं
६५ —	१७	हैमीं
७३ —	१३	सहस्राणि।
	१४	स्रा।
७७ —	१६	पञ्चवक्त्र।

श्री द्विवेदीजी की अन्वेषणात्मक प्रवृत्तियों के परिचायक
※ कुछ अन्य प्रकाशन

अंगुष्ठ से भविष्य-ज्ञान

विश्व इतिहास में लिखा गया अपने आप में प्रथम, अद्वितीय एवं परिपूर्ण शोध-ग्रन्थ जिसने अन्तर्राष्ट्रीय ज्योतिष जगत में अभूतपूर्व ख्याति अर्जित की है।

मूल्य ५१) रु० मात्र

※ ※ ※

पाँव तले भविष्य

A wonderful Research work ever written upon Foot Prints

शास्त्रीय धरातल पर आधारित, आधुनिक वैज्ञानिक सर्वेक्षण के साथ, विश्व इतिहास की पहली पुस्तक।

मूल्य ५१) रु० मात्र

※ ※ ※

सचित्र ज्योतिष डाइरेक्टरी

(1982-83)

भारत के प्रमाणिक ज्योतिषियों, हस्तरेखाविशारदों एवं लब्ध-प्रतिष्ठित मन्त्रशास्त्रि[illegible] ज्योतिष पत्र-पत्रिकाओं तथा लगभग एव[illegible]डलियों का वृहद् संकलन।

मूल्य १[illegible]

भारत के [illegible]सुप्राप्य अथवा सीधा लिखे—

अज्ञात दर्शन कार्यालय
☎ : 25123
१ बी. सरदारपुरा, जोधपुर (राज०)